 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

ज्येष्ठ-आषाढ़, संवत् नानकशाही ५४१

जून 2009 वर्ष २ अंक १०

संपादक — सिमरजीत सिंह — *एम. ए, एम. एम. सी.*

सहायक संपादक — सुरिंदर सिंह निमाणा — *एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बी. एड.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव

धर्म प्रचार कमेटी

(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)

श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59



एक्सटेंशन नंबर

वितरण विभाग 303

संपादन विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

पत्रिका प्राप्त न होने पर तथा चंदे आदि सम्बंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए मोबाइल नं. 98886-38618 पर भी सम्पर्क किया जा सकता है।

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
रैणि विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास ॥५॥ *(पन्ना १३४)*

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी बारह माहा मांझ की इस पावन पउड़ी में आषाढ़ महीने की शिखर गर्मी की ऋतु के परिपेक्ष में मनुष्य-मात्र को सांसारिक इच्छाओं के अत्याधिक बुरे प्रभाव से बचकर जीवन रूपी रात्रि को न गंवाने तथा सतिगुरु की रुहानी अगुआई को प्राप्त करते हुए परमात्मा का साक्षात्कार प्राप्त करने का अंतिम उद्देश्य पूरा करने की निर्मल प्रेरणा बख्शिश करते हैं।

सतिगुरु जी फरमान करते हैं कि आषाढ़ का महीना भले ही अत्यंत गर्मी वाला है लेकिन यह गर्मी वाला उन मनुष्यों को महसूस होता है जिनके पास परमात्मा का नाम नहीं है अथवा आषाढ़ महीने की कठोर ऊष्णता से परमात्मा के सदैव शीतल नाम की ओट में रहकर बचाव पूर्णत: संभव है। गुरु जी कथन करते हैं कि यह उसको गर्म लगता है जिसने सारे विश्व के सृजनहार को छोड़ दिया है और मनुष्य पर आशा लगा रखी है। भाव सदीवी सुख परमात्मा के नाम की ओट में है। मनुष्य द्वारा किसी अन्य मनुष्य पर आस लगाना उचित नहीं है।

सतिगुरु जी कथन करते हैं कि प्रभु बिना किसी अन्य का सहारा चाहने अथवा लेने में व्यर्थ का भटकाव तथा खराबी है। यह गले में यम की फांसी पड़ने तुल्य है। ऐसा मनुष्य माथे पर लिखे अनुसार ही फल पाता है अर्थात् सदैव सहम अथवा भय में रहता है। जीवन रूपी रात यूं ही चली जाती है तो अंतिम समय मनुष्य को निराशा होती है।

सतिगुरु जी फरमाते हैं कि दूसरी ओर जीवन के आषाढ़ महीने में जिनको साधु अथवा सतिगुरु से साक्षात्कार हो गया वे प्रभु-दरबार में मुक्त हैं। इसलिए हे प्रभु मालिक! अपनी कृपा करना। मेरे मन में भी आपके दीदार की प्यास लग जाए! यही प्रार्थना है कि हे प्रभु! मुझे सतिगुरु से ज्ञात हो जाए कि आपके बिना कोई भी अन्य मेरा नहीं है। जिस मनुष्य के मन में प्रभु-चरणों का निवास है उसको ग्रीष्म ऋतु से जुड़ा आषाढ़ महीना भी सुखदायी लगता है। ❁

संपादकीय

जून १९८४ की दुखदायक याद

एक असहनीय पीड़ा तथा अकथनीय दर्द की अनुभूति लेकर आता है हर वर्ष जून का महीना। जून महीना प्राकृतिक दृष्टि से पहले ही कठोर व निष्ठुर माना जाता है। इस महीने के प्रथम चरण में ४-६ जून के दिन को हमारे अपने देश की तत्कालीन केंद्र सरकार ने सिख पंथ को मिटाने अथवा सबक सिखाने के लिए निश्चित किया। सिख पंथ के परम पावन केंद्रीय स्थान श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर पर भारतीय सेना द्वारा आक्रमण कर दिया गया। उस स्थान पर जिसके चारों द्वार हर समय सच्ची आस्था एवं सच्ची आध्यात्मिक शांति के इच्छुक मनुष्यमात्र को बिना भेद-भाव के अपनी आगोश में आने का बुलावा देते हैं। वह श्री हरिमंदर साहिब जहां मात्र हरि-कीर्तन का ही प्रवाह सदैव चलता है और सभी श्रोताओं को अनोखा विस्माद प्रदान करता है। मीरी-पीरी सिद्धांत तथा हक-सच के सरोकार के प्रतीक श्री अकाल तख्त साहिब की भव्य इमारत को इस आक्रमण का विशेष रूप से निशाना बनाया गया। टैंकों के साथ इस इमारत को ध्वस्त करके तत्कालीन सरकार इसको अपनी दिलेरी समझ रही थी जबकि समस्त निष्पक्ष संसार त्रास-त्रास कर रहा था और सिख पंथ का हृदय छलनी-छलनी हो गया था। जिस देश की स्वतंत्रता हेतु गुरु पातशाहों द्वारा साजे-निवाजे इस सिख पंथ में अद्वितीय योगदान डाला था और जिसके भूगौलिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक उत्थान हेतु उसने बेमिसाल कार्य किया था तथा सीमाओं पर देश-रक्षा के कर्त्तव्य को अनेकों कुर्बानियां देकर निभाया था, उस कौम के विरुद्ध ऐसा घिनौना आक्रमण बिना शक अत्यंत दुखदायक और हैरानी वाली बात है। यह समय की सरकार की ओर से किया गया अत्यंत क्रूर कर्म है जिसकी याद सिख पंथ को सदैव पीड़ित करती रहेगी।

तत्कालीन सरकार ने इस आक्रमण के लिए एक चिरकालीन योजना तैयार की थी। इस तथ्य से गत समयों में कई बार निष्पक्ष खोज एजेंसियों तथा व्यक्तिगत खोजियों द्वारा पर्दा हटाया जा चुका है। सिख पंथ के युवा वर्ग को बहुत बड़े स्तर पर खत्म करना और इसके धार्मिक स्थानों को नष्ट करना, सिख पंथ की महान साहित्य निधि को छीनने जैसे बुरे इरादे इस आक्रमण के समय, तत्कालीन सरकार ने रखे हुए थे। दुखदायक बात यह है कि सरकार ने मध्यकालीन मुगल शासकों और अफगान आक्रमणकारियों से भी अधिक क्रूरता दिखायी। यदि हम इस आक्रमण की मुख्य घटनाओं और इस आक्रमण की शैली का विश्लेषण करें तो सहज रूप में इन बुरे इरादों को रखने की कटु सच्चाई प्रमाणित होती है। सरकार ने आक्रमण के लिए श्री गुरु अरजन देव जी महाराज का शहीदी दिन का चयन किया, जिस दिन श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर परिसर में सिख संगतों की उपस्थिति बहुत बड़ी संख्या में होती है। इस आक्रमण में टैंकों, तोपों, मशीनगनों का अंधाधुंध प्रयोग किया गया। आक्रमण के समय ही नहीं इसके बाद भी भारतीय सेना जूतों

सहित पवित्र स्थान में घूमती-फिरती रही। श्री अकाल तख्त साहिब की इमारत को टैंकों तथा तोपों से ध्वस्त किया गया। श्री हरिमंदर साहिब की परम पावन इमारत पर भी अनेकों गोलियां दागी गयीं तथा सेवा निभाने वाले ग्रंथी साहिबान को कई तरह से अपमानित करने के ओछे प्रयास किये जाते रहे। हजारों की गिनती में सिख संगतों का संहार किया गया। जिनको गिरफ्तार किया गया उनकों जेलों में भेजने से पहले अनेक प्रकार से अपमानित किया गया। भारतीय सेना उनको गालियां देती रही, उन्हें बंदूकों के बटों से पीटती रही। श्री हरिमंदर साहिब परिसर की विद्युत आपूर्ति को बंद कर पानी वाली बड़ी टैंकी बमों द्वारा तोड़ दी गई और गुरु रामदास सराय में ठहरी हुई संगतों को बूंद-बूंद पानी के लिए तरसने के लिए विवश किया गया।

सरकार द्वारा ऐसा करना नि:संदेह देश की बहुसंख्यक को सदैव के लिए अपने पक्ष में करने के उद्देश्य की पूर्ति हेतु था। दूसरे शब्दों में, समय की सरकार सिख पंथ अथवा गुरु की संगतों का संहार करके बहुसंख्यक वर्ग का अपना वोट बैंक पक्का कर रही थी। यह प्रभाव देने का प्रयास करके कि उनको जीवन-सुरक्षा प्रदान की गई है। ये सरकार की सिख-मारू तथा पंजाब-मारू नीतियां ही थीं जिसके विरुद्ध कुछ सिख युवकों ने सरकार का विरोध करने का साहस किया था। यह भी प्रमाणित हो चुका है कि तत्कालीन सरकार ने अपने गुंडा तत्वों की सिख-संघर्ष में घुसपैठ करा कर इसको दिशाहीन और लोक-विरोधी दर्शाने के प्रयास किये थे। सरकार ने स्वयं वार्तालाप की नीति पर पहरा न दिया। पूर्णत: उपयुक्त मांगों को मानने में आनाकानी की गई। सभी प्रांतों को अत्यंत आवश्यक आर्थिक निर्णय करने के अधिकार का समर्थन करने वाले शिरोमणि अकाली दल के अनंदपुर साहिब के प्रस्ताव के बारे में सरकार ने स्वयं झूठी बातें फैलाईं। दरअसल सरकार को सिख पंथ के विरुद्ध गुस्सा था कि इसने धर्म युद्ध मोर्चा लगाया था। सरकार इस आक्रमण द्वारा यह आशा रख रही थी कि सिख पुन: कभी इसके सामने सिर न उठा सकें। लेकिन हमारे गुरु साहिबान ने तो सिख पंथ की स्थापना ही इसको हक-सच की ऐसी घुट्टी देते हुए की कि यह पंथ अन्याय, असत्य, जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध जूझने से कदापि पीछे नहीं हट सकता। चाहे जून १९८४ के सिख संहार के बाद सरकार ने इंदिरा गांधी के कत्ल के बाद दिल्ली, कानपुर तथा अन्य कई बड़े-बड़े नगरों में सिखों की नसलकुशी करने का अत्यंत क्रूर कुकर्म किया। इस सारे घटनाक्रम में सिखों को आज तक न्याय नहीं दिया गया। कत्लेआम के दोषी आज उल्टा मानवीय पदों पर आसीन हैं। ऐसी स्थिति में सिख पंथ का हक-सच की पुनर्स्थापित हेतु किया जाने वाला संघर्ष आज भी जारी है। दुख की बात है कि लोगों द्वारा मतदान विधि से चुनी गई हमारी लोकतंत्रीय कहलवाने वाली सरकारें अपनी ही प्रजा को पहले अन्याय से दुखी करती हैं, उन्हें स्वयं अभियान चलाने के लिए विवश करती हैं और फिर पूर्ण वफादार तथा देश-भक्त प्रजा को दहशतगर्द घोषित कर उसका संहार करने पर ऊतारू हो जाती हैं। ऐसा करते समय वे देश के संविधान में लिखे उसूलों तथा कानूनों को सर्वथा भुला देती हैं। जिन सिख गुरु साहिबान ने देश की सदियों की गुलामी की जंजीरों को काटने के लिए महान कार्य किये, देश-कौम पर अनेक परोपकार किये, उन्हीं के पावन स्थानों को आक्रमणों का निशाना बनाना शिखर दर्जे की अहसानफरामोशी है।



शहीद शिरोमणि श्री गुरु अरजन देव जी

*-डॉ. जगजीत कौर**

श्री गुरु अरजन देव जी सिख धर्म परम्परा के पांचवें गुरु हैं। विश्व धर्मों के इतिहास में ऐसा प्रखर व्यक्तित्व अन्य कोई नहीं है जो गंभीर दार्शनिक, तत्ववेत्ता, ज्ञानयोगी, तपी, साधक, मनीषी, उच्च कोटि का कवि, अद्भुत कलात्मक संपादनकर्त्ता, संगठनकर्त्ता, कर्मठ कार्यकर्त्ता के साथ एक कोमल हृदय भक्त, स्नेही पिता, पति, भाई भी हो और जिसे आदर्शों और सिद्धांतों की रक्षा हित समग्र मनुष्यता, समग्र भारतवासियों के सम्मान की रक्षा हित जिसको शिरोमणि शहीद होने का गौरव प्राप्त हो। किसी महान सत्य को संसार के सामने मानव-कल्याण हित रखना निश्चय ही प्रशंसायोग्य है, किन्तु उस सत्य को स्वयं अपने जीवन में ढालना और पुनः उसी सत्य की रक्षा के लिए अपने जीवन का आततायी नृशंस सत्ता के हाथों बलिदान कर देना, शांतिपूर्ण ढंग से शहादत का जाम पी जाना किसी बहुत बड़ी आलौकिक शक्ति का ही कार्य है। ऐसे ही आलौकिक दैवी शक्ति सम्पन्न व्यक्तित्व हैं पंचम गुरदेव श्री गुरु अरजन देव जी। सिख धर्म का नारा रहा है :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

यदि प्रभु परमेश्वर से सच्चे अर्थों में प्रेम-क्रीड़ा करने की कामना है तो पहले अपना शीश हथेली पर रखना सीखो। इस मार्ग पर चलते हुये आने वाली विरोधी शक्तियों को पीठ नहीं दिखानी है। गर्व से सीना तानकर सामने से वार सहना है और अपने इष्ट देव से मिलना है। पंचम गुरदेव जी ने इसे व्यवहार में करके दिखाया।

कथनी और करनी के सूरमे गुरदेव जी का जन्म चतुर्थ पातशाह श्री गुरु रामदास जी और माता भानी जी के घर गोइंदवाल, जिला अमृतसर में १९ वैशाख सं. १६२० तद्नुसार १५ अप्रैल, १५६३ ई. में हुआ। उस समय श्री गुरु नानक देव जी की आध्यात्मिक विरासत की गद्दी पर तृतीय पातशाह श्री गुरु अमरदास जी आसीन थे। उनके बाद चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी गद्दी पर बैठे। इस प्रकार श्री गुरु अरजन देव जी के बाल्यकाल के ११ वर्ष दो महान आध्यात्मिक गुरुओं के संरक्षण में व्यतीत हुए—नाना श्री गुरु अमरदास जी और पिता श्री गुरु रामदास जी। माता भानी जी जो तृतीय गुरुदेव की सुपुत्री थीं; स्वयं भक्ति, साधना, सेवा और सिमरन की प्रतिमूर्ति थीं। बालक की शिक्षा-दीक्षा का दायित्व ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी को सौंपा गया। कुशाग्र बुद्धि तेजस्वी गुरुदेव ने अल्प समय में ही गुरमुखी, बृजभाषा, हिन्दी, संस्कृत, अरबी एवं फारसी भाषा का ज्ञान प्राप्त कर लिया तथा अनेकों आध्यात्मिक ग्रंथों, दर्शन-शास्त्रों का अध्ययन कर लिया। केवल ११-१२ वर्ष की अवस्था से ही बाणी रचना आरंभ कर दी थी। बालक की इस कुशाग्र बुद्धि एवं विवेक से प्रसन्न होकर ही गद्‌गद् कण्ठ नाना जी ने कहा *"दोहिता, बाणी का बोहिथा।"* भविष्यवाणी की; *"बाणी का जहाज"* तैयार करेगा, मानवता का कल्याण

**1801-C, Mission Compound, Near Saint Mary's Academy, Saharanpur-247001 (U.P.)*

करेगा। श्री गुरु रामदास जी के तीन सपुत्रों में ये सबसे छोटे थे। बड़े प्रिथी चंद, दूसरे महादेव परन्तु सर्वाधिक स्नेह और प्रेम का केन्द्र श्री अरजन देव जी रहे। इनकी विलक्षण प्रतिभा और सौम्य एवं प्रखर व्यक्तित्व को देखते हुए गुरगद्दी भी इन्हें ही दी गई।

केवल १८ वर्ष और ४ महीने की अवस्था में गुरगद्दी पर आसीन हुए। महादेव कुछ उदासीन प्रवृत्ति का था। बड़ा भाई प्रिथी चंद, जो इस गद्दी को साधारण दुनियावी अधिकार समझता था, बहुत खीझा। पिता से झगड़ा करने लगा। पिता को कहना पड़ा, *"काहे पूत झगरत हउ संगि बाप"*। भाव ऐसा उचित नहीं है। परन्तु प्रिथी चंद गुरु जी से ईर्ष्या करने लगा और जीवन-पर्यन्त ईर्ष्यालु ही रहा। मुगल दरबार में भी शिकायतें कीं। सुलही खान को आने का निमंत्रण दिया। सुलही खान सिपाही लेकर आया परन्तु ईश्वर की कृपा से गुरु जी का बाल भी बांका न कर सका।

श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु अरजन देव जी को श्री अमृतसर भेज दिया, जहां उन्होंने अपनी सारी क्रियात्मक चेतना रचनात्मक कार्यों में लगा दी। श्री गुरु रामदास जी ने अमृतसर नगर और अमृत सरोवर की नींव रखी थी। गुरु जी ने इस अमृत सरोवर को पक्का किया। श्री अमृतसर नगर में ५२ प्रकार के व्यापारियों को बसाया और व्यापार को बढ़ावा दिया। तरनतारन, संतोखसर, हरिगोबिंदपुर, छेहरटा साहिब, बाउली साहिब (लाहौर), रामसर, करतारपुर, गुरदासपुर आदि नगर बसाए, उन्नत किए और सुंदर सरोवरों सहित श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण कराया। खूबसूरत रामदास सरोवर के मध्य खड़ा श्री हरिमंदर साहिब बनवाया, जो आज विश्व का एक अनूठा स्थल जाना जाता है और जिसके सम्बंध में स्वयं गुरदेव जी ने कहा है *"डिठे सभे थाव नही तुधु जेहिआ ॥"* ऐसा अनोखा, अमृत-सरोवर के बीचो-बीच खड़ा नूर का सोमा अद्वितीय दैवी प्रकाश का पुंज विश्व की अकेली मिसाल है। हजारों-लाखों सांसारिक मोह-माया और विकार की अग्नि से तपते-जलते-भटकते प्राणियों को आत्मिक सुख, शांति, स्थिरता और शीतलता प्रदान करने वाला गुरु जी का मानवता के प्रति यह नायाब तोहफा है। इसलिए इसके चार बड़े द्वार बनाए गये हैं कि विश्व के किसी भी कोने से आत्मिक शांति की खोज में आने वाला भटका जिज्ञासु यहां प्रवेश कर सके और असीम शांति तथा सुकून का रसास्वादन कर सके। गुरु नानक पातशाह का दर जाति, वर्ण, वर्ग, सम्प्रदाय के भेद-भाव से हीन *"खत्री ब्राहमण सूद वैस उपदेस चहु वरना कउ साझा"* के अनुरूप सर्वसांझा है, पूरी मानवता का उपदेश-केन्द्र है, इसलिए इसके स्वर्ण जड़ित सुनहरे झिलमिलाते गुंबद व्यक्ति के अंतर्मन में व्याप्त नूरी ज्योति का प्रकाश है। इसकी बनावट और नक्काशी में मुगल शैली और हिन्दू वास्तुकला शैली का मेल किया गया है, क्योंकि कला की सर्वोत्तम कृतियां सार्वभौम सत्य की अभिव्यक्ति होती हैं और अनन्त काल तक मानवता को आनंदित करती हैं।

गुरु साहिब ने निरोग कंचन काया के लिए अमृत सोरवर बनाया। समर्थ सतिगुरु जी ने मिल बैठ कर संगत करने के लिए श्री हरिमंदर साहिब बनवाया और सबसे बड़ी देन विश्व को अनोखा साहित्य सागर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के रूप में दिया। गुरुदेव जी की दूरदर्शिता और अद्‌भुत सूझ-बूझ का ही परिणाम है कि समस्त गुरु साहिबान ने जीवन-पर्यन्त जिन सिद्धांतों और महत विचारों का बाणी गायन द्वारा प्रचार-प्रसार किया वे शुद्ध सत्य रूप में श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सुरक्षित हैं। विश्व के किसी भी धर्म-सुधारक, संस्थापक अथवा धर्म-नायक ने

अपने जीवन-काल में अपने सिद्धांतों को लिपिबद्ध नहीं किया है। श्री गुरु अरजन देव जी की यह महानता है कि उन्होंने कठोर श्रम कर अपने से पूर्व गुरु साहिबान की बाणी और १२वीं शती से १७वीं शती तक के सभी महान भक्तों, संतों की बाणी का विशालकाय संकलन तैयार किया। इसमें पूर्व गुरु साहिबान, भक्त साहिबान, भट्ट साहिबान और गुरु-घर के निकटवर्ती सिखों की बाणी संकलित है। महला नौवां श्री गुरु तेग बहादर जी की बाणी को बाद में सन् १७०६ ई में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने दमदमा साहिब नामक स्थान पर, जिसे गुरु की कांशी कहा जाता है और जो पांच अकाल तख्तों में से एक पवित्र तख्त है, वहां पर भाई मनी सिंघ जी से लिखवा कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब का पुर्न:संकलन किया। यह दमदमा साहिब वाली बीड़ ही पंथ में प्रमाणित है। इसी पावन बीड़ के उतारे खालसा पंथ में मान्य हैं जो "प्रगट गुरां की देह" है।

इतने बड़े ग्रंथ का और उसमें स्वरचित शबदों (पदों) को स्थान देकर कलात्मकता से संपादित करना गुरु जी की अनूठी संपादन-शक्ति को दर्शाता है। विशालकाय ग्रंथ को निश्चित तकनीक और वैज्ञानिक तंत्र में बांधा गया है। सारी बाणी ३१ रागों में रचित है। रागों को विचार एवं साधना पद्धति के आधार पर स्थान दिया गया है। प्रत्येक राग में सबसे पहले महला पहला भाव श्री गुरु नानक देव जी की बाणी को रखा गया है। उसके बाद पंचम गुरु जी ने द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ एवं अपनी बाणी महला २, ३, ४, ५ के अंतर्गत रखी है। तत्पश्चात भक्तों की बाणी उसी विचारानुसार जो है उसे रखा है। भक्त साहिबान में भक्त कबीर जी की बाणी को पहले रखा है। महला ९ श्री गुरु तेग बहादर जी की बाणी का समावेश बाद में हुआ, जिसे महला ५ के बाद स्थान दिया गया है। रागों की समाप्ति पर फुटकल श्लोक और भट्टों की बाणी को स्थान दिया गया है। पूरी बाणी एक निश्चित प्रबंध में चलती है। श्री गुरु अरजन देव जी की बाणी ३० रागों में है। ३१वें अंतिम जैजावंती राग में केवल गुरु तेग बहादर जी की बाणी है। जिन रागों में बाणी निबद्ध है वे हैं—सिरीरागु, माझ, गउड़ी, आसा, गूजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा, वडहंसु, सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावलु, गोंड, रामकली, नट नाराइण, माली गउड़ा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरउ, बसंतु, सारग, मलार, कानड़ा, कलिआन, परभाती और जैजावंती।

शास्त्रीय परम्परा से हटकर बाणी का प्रारंभ सिरीराग से किया गया है। सिरीराग गंभीर विचारों का भरी दोपहरी में गायन किया जाने वाला राग है। राग के स्वभाव के अनुकूल मोह-माया के मद में मगरूर व्यक्ति को चेतावनी दी गई है। *"किआ तू रता देखि कै पुत्र कलत्र सीगार ॥ रस भोगहि खुसीआ करहि माणहि रंग अपार ॥ . . . करता चीति न आवई मनमुख अंध गवार ॥"* पुन: माझ और गउड़ी राग में प्रभु से प्रेम करने की प्रेरणा दी गई है और इसी प्रकार अन्य रागों के माध्यम से जीव के साधना-पथ का निर्देश है। उसी उपदेश-मार्ग पर चलती हुई जीवात्मा प्रभाती राग में प्रभु से मिल जाती है; जीवन में प्रकाश फैल जाता है; विभास एवं आनंदानुभूति की अवस्था आती है; *"गुरु गुरु करत सदा सुखु पाइआ ॥", "संतसंगति मिलि भइआ प्रगास ॥"* जीवन में सुख ही सुख, आनंद ही आनंद, प्रकाश ही प्रकाश, उद्भासित हो उठता है। जीव खुद को धन्य मानता है और अनुभव करता है *"सजणु सचा पातिसाहु सिरि साहां दै साहु ॥ जिसु पासि बहिठिआ सोहीऐ सभनां दा विसाहु ॥"* जीव की शोभा प्रभु-चरणों के नैकिट्य में ही है।

बाणी के अंतरंग प्रबंध को देखकर आश्चर्य

होता है। सबसे पहले एक पदे, पुनः द्विपदे, त्रिपदे, चउपदे, पंचपदे, छः पदे, अष्टपदियां, छंत, वारें देकर बाणी के गायन योग्य संकेत घर १, घर २, इसी तरह १७ घरों तक के संकेत ताल के संकेत हैं। एक ताला, द्विताल, तिताला, चौताल और बाणी को फेर-फेर कर गाना, पड़ताल वारों के गायन के संकेत हैं। वारों की वीररसी लोक-गीत शैली है। यहां भी प्रभु-भक्ति से संबंधित वारों को उसी वीर रसात्मक शैली में गायन का संकेत है जैसे **'इआनड़ीए के घर गावणा'** **'लला बहलीमां की धुन गावणी'**, **'टुंडे असराजे की धुन गावणी'**, **'एक सुआन के घर गावणा'**। इस तरह सम्पूर्ण बाणी एक तकनीकी तंत्र में बंधी, जुड़ी आगे बढ़ती जाती साधक को साधना का पथ दिखाती है, व्यवहारिक जीवन को सत्याचरणपूर्ण बनाने की प्रेरणा देती है, व्यर्थ के पाखंडों, भ्रमों और बाह्याडम्बरों का त्याग कर एक शुद्ध निर्मल आचरणसम्पन्न भक्त बनाती है और निरोल सिमरन का सहारा लेकर शांति और स्थायी सुखों की राह सुझाती है।

इस तंत्र में कुछ विशेष शीर्ष की बाणियां भी हैं, जैसे पहरे, वणजारा, बारहमाहा, दिन रैणि, बिरहड़े, पटी, करहले, बावन अखरी, थिती, घोड़ीआं, अलाहणीआं, आरती, कुचजी, सुचजी, गुणवंती, अनंदु, सद, ओंकार, सिध गोसटि, वार सत्, अंजलिआं, सोलहे, श्लोक और सुखमनी। सुखमनी श्री गुरु अरजन देव जी की रचित विशेष बाणी है। दोहा, श्लोक और चौपई शैली में २४ अष्टपदियों में इस अति प्रिय बाणी का उद्देश्य गुरु साहिब स्वयं बताते हैं :

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ (पन्ना २६२)

इस बाणी में अत्यन्त सूत्रात्मक शैली में ब्रह्म, माया, जीव, सृष्टि जैसे दार्शनिक विषयों का विवेचन किया गया है। संत, साध, ब्रह्मज्ञानी की परिभाषा देते हुये जीव को अहंकार (हउमै) का त्याग कर उस परमात्मा के नाम-सिमरन की प्रेरणा दी गई है, जो ***"सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि"*** है, जो दुखभंजन, दुखहर्त्ता है, कलह-क्लेश का नाश करने वाला ***"करण कारण प्रभु एकु है दूसर नाही कोइ"*** है। बाणी का महातम है :

सुखमनी सहज गोबिंद गुन नाम ॥
जिसु मनि बसै सु होत निधान ॥
सरब इछा ता की पूरन होइ ॥
प्रधान पुरखु प्रगटु सभ लोइ ॥
सभ ते ऊच पाए असथानु ॥
बहुरि न होवै आवन जानु ॥ (पन्ना २९५)

यह आवागमन का भय ही मनुष्य को सर्वाधिक दुखदायी लगता है। सुखमनी साहिब को पढ़ना एवं सुनना भय से मुक्त कर आनंद और आध्यात्मिक सुख के लोक में पहुंचाता है। अध्यात्म मार्ग के पहुंचे हुए साधकों का यह निजी भोगा हुआ सत्य है। कला पक्ष की दृष्टि से देखें तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बाणी में शैली और भाषा की विविधता एवं गंभीरता आश्चर्यचकित करती है। शैली को सर्वग्राह्य बनाने के लिए लोक-प्रचलित मुहावरों, कहावतों, लोकोक्तियों का प्रयोग किया गया है। शैली के लगभग सभी प्रकार संबोधन, प्रश्न, कथा, प्रसंग, वर्णन, प्रश्न, प्रश्नोत्तर, संवाद, चउबोले, फुनहे, खंडन, प्रशंसात्मक, दीनता प्रकाशन, निवेदन, प्रतिबोधन, प्रबोधन आदि का प्रयोग किया गया है। भाषा की विविधता तो हद दर्जे की है। मूल ब्रज भाषा में संस्कृत और संस्कृत के तत्सम्, तद्भव, अर्धतत्सम्, अपभ्रंश, अरबी-फारसी के शब्दों के साथ पंजाबी भाषा के पूर्वी पंजाबी, पश्चिमी पंजाबी, लहंदी, दखणी, मुल्तानी, सिंधी भाषा और बोलियों का संयोग किया गया है। भाषा वैविध्य की दृष्टि से यह विश्व का अनूठा कोष है। परन्तु इतना सब होने पर भी भाषा

इतनी सरल, सुबोध और सहज ग्राह्य है कि साधारण से साधारण पाठक भी पाठ का रसास्वादन करता हुआ रस-माधुर्य की सहज मन्दाकिनी में डुबकियां लगाता चला जाता है।

स्वाभाविक है कि साधारण जनमानस को अपनी समस्याओं के समाधान हेतु एक निश्चित ठिकाना मिला, चिंता, दुख दूर करने वाली अमृत बाणी मिली, चित्त को शांति सुकून मिला तो गुरु-घर की लोकप्रियता दिन-प्रति-दिन बढ़ने लगी। परन्तु समय की जालिम आततायी मुगल हकूमत को यह सब कैसे सहन होता और फिर अपने लोगों में से भी कई ऐसे थे जो ईर्ष्यावश यह सब सहन नहीं कर सकते थे। इसी बीच संयोग कुछ ऐसा बना, अकबर बादशाह सुलहकुल स्वभाव का था, उसका देहांत हो गया। कट्टरपंथियों की सहायता से जहांगीर बादशाह बना। उसका पुत्र खुसरो आगरा के किले से बगावत करता हुआ पंजाब से काबुल की ओर भागना चाहता था। पंजाब में रात तरनतारन गुरु जी के पास ठहरा। लंगर से प्रसाद लिया तथा विश्राम कर प्रात: काल विदा हो गया। उसका सम्मान गुरु-घर की मर्यादानुसार किया गया। जहांगीर उसका पीछा करता हुआ लाहौर पहुंचा। खुसरो पकड़ा गया। जब उसके सहायकों की फेहरिस्त तैयार हुई तो ईर्ष्यालुओं ने गुरु साहिब का भी नाम उसमें दिया। बादशाह स्वयं भी इस मौके की ताक में था, जैसा कि 'तुजक-ए-जहांगीरी' के पृष्ठ ३५ पर वह स्वयं कबूल करता है कि वह गुरु-घर को झूठ की दुकान समझता था। उसे दुख था कि हिन्दुओं के साथ-साथ मुसलमान भी गुरु जी के श्रद्धालु होते जा रहे थे। वह कहता है कि उसके मन में काफी समय से इस फरेब की दुकान को बंद करने का विचार था। खुसरो की बगावत तो एक बहाना था। इधर मुस्लिम कट्टरपंथी भी ईर्ष्या करते थे। खास तौर पर नक्शबंदी सम्प्रदाय के मुखिया शेख अहमद सरहंदी ने भी भड़काया और तब बादशाह के हुक्म से गुरु जी को लाहौर लाया गया। मुरतजा खां को उन्हें दण्ड देने, घर-परिवार, जायदाद जब्त करने का हुक्म दिया गया। बादशाह ने गुरु जी के सामने इस्लाम धर्म कबूल करने, श्री गुरु ग्रंथ साहिब में मुहम्मद साहिब की तारीफ लिखने और खुसरो की मदद के एवज में दो लाख रुपये जुर्माना भरने को कहा। यह शर्तें मंजूर न होने की स्थिति में 'यासा' के अंतर्गत घोर अमानुषिक ढंग से अति कष्टपूर्ण मृत्युदंड घोषित किया गया। गुरु जी ने सहर्ष मृत्युदंड स्वीकार किया। 'यासा' के अनुसार गुरु जी को बंदी बनाया गया। लोहे की बड़ी-सी तवी गर्म की गई। ज्येष्ठ मास की घोर तपन भरी दोपहरी में गुरु जी को तवी पर बैठा दिया गया, तब रेत गर्म की गई। तपती रेत के कड़छे भर-भर कर गुरु जी के शरीर पर डाले गये। फिर एक बड़ी देग में पानी खौलाया गया। उस खौलते पानी में गुरु जी को बैठा दिया गया। गुरु जी ने शरीर पर असहनीय कष्ट सहन किये। इस प्रकार गुरु जी को असाध्य कष्ट देकर ३० मई सन् १६०६ ई में शहीद कर दिया गया।

इस प्रकार कुल ४३ वर्ष पंच भौतिक शरीर में रहकर गुरु जी ने मानवता के कल्याण हेतु अनन्त उपकार कार्य किए। वे अति मिष्टभाषी, कोमल स्वभाव के प्रेमी, भक्त, उच्च आध्यात्मिक गुणों से सम्पन्न दार्शनिक, ब्रह्मज्ञानी और शांति के पुंज थे। उनका शांतिमय बलिदान विश्व का अद्वितीय उदाहरण है। गर्म तवी पर बैठे हुए गर्म रेत के कड़छे शरीर पर डलवाते हुए वे पूर्णत: शांत थे। नेत्र बंद थे। चित्त प्रभु-चरणों से जुड़ा था। होंठ मुस्करा कर कह रहे थे: *"तेरा कीआ मीठा लागै ॥ हरि नामु पदारथु नानकु मांगै ॥"*

जीवन मानवता के कल्याण हेतु लगा यह लासानी शहीदी समाज को वीरता से मरने की युक्ति सिखा गई।



जाम-ए-शहादत

-डॉ. रीटा रावत*

पंजाब की धरती पर बेशुमार कुर्बानियां और शहीदियां हुईं। अगर ध्यान से देखा और सोचा जाए कि इसका संस्थापक कौन है, जिसने परवाने को समय पर कुर्बान होने की शिक्षा दी, जिसने फांसी के तख्ते पर खुशी के गीत गाते हुए झूलना सिखाया, तो वे थे शहीदों के सिरताज, शांति के पुंज, पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी।

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाए गए मार्ग के पांचवें रहबर श्री गुरु अरजन देव जी १६वीं सदी में हुए। उनका जीवन-काल केवल ४३ सालों का सीमित समय है, परन्तु उनके द्वारा सम्पूर्ण किए गए कार्यों का लेखा-जोखा हैरान करने वाला है। श्री अमृतसर में श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण, श्री गुरु ग्रंथ साहिब की आदि बीड़ का संकलन, नए नगरों की स्थापना और विकास, सिखी का प्रसार एवं संगठन और धर्म की रक्षा के लिए अपना बलिदान गुरु साहिब के ऐसे कार्य हैं जिनका प्रभाव पंजाब में ही नहीं, भारत के जन-जीवन पर भी अमिट छाप छोड़ गया है।

बादशाह अकबर के गुरु साहिब के साथ काफी आदर-भाव वाले सम्बंध थे। हजरत मियां मीर जी उनके निकटवर्ती मित्रों और सहयोगियों में से थे। बादशाह जहांगीर दिल्ली सल्तनत का कार्य-भार संभालने के बाद गुरु साहिब का विरोधी बन गया। भाई गुरदास जी, भाई सत्ता जी और भाई बलवंड जी और भट्ट कवियों की बाणी तो श्री गुरु अरजन देव जी की स्तुति से भरपूर है। श्री आदि ग्रंथ साहिब का संकलन-संपादन हो रहा था। छज्जू, पीलू, भक्त काहना और सूफी कवि शाह हुसैन अपनी-अपनी रचनाएं लेकर गुरु जी के पास आए और इन रचनाओं को श्री आदि ग्रंथ साहिब में दर्ज करने के लिए कहा। गुरु जी ने इन्हें अयोग्य होने के कारण अस्वीकार कर दिया। भक्त काहना दीवान चन्दू का चचेरा भाई था। वह घोड़े पर चढ़कर अपने भाई चन्दू की सहायता लेने के लिए लाहौर गया ताकि चन्दू के द्वारा पातशाह के पास शिकायत करे। प्रभु की ऐसी कला हुई कि उसका पैर रकाब में अड़ गया, घोड़ा डर के मारे भाग खड़ा हुआ। वह आप नीचे गिर गया और सुलही खां की भांति मारा गया।

प्रिथीचंद और चंदू ने श्री गुरु अरजन देव जी के विरुद्ध अन्य षड़यन्त्र अकबर के पास झूठी चुगलियां लगाकर किए। उस समय अकबर बादशाह लाहौर की बुरी हालत सुनकर यहां आया हुआ था। इन्होंने गुरु जी पर दोष लगाया कि इन्होंने श्री आदि ग्रंथ साहिब में इस्लाम धर्म के विरुद्ध लिखा है। चाहे १५ नवंबर, १५९८ को अकबर गोइंदवाल गुरु जी को मिलकर आया था और गुरु जी द्वारा लाहौर में किए गए भलाई-कार्यों की प्रशंसा कर चुका था और पंजाब का मामला माफ कर दिया गया था, परन्तु चुगलियां सुनकर शंका के कारण अकबर ने गुरु जी को श्री आदि ग्रंथ साहिब को लाहौर

*लेक्चरार हिन्दी, जे. एस. जे. डिगरी कॉलेज, गुरने कलां (संगरूर)

लेकर आने का निमंत्रण भेजा। गुरु जी ने भाई गुरदास जी, बाबा बुड्ढा जी और पांच सिखों के द्वारा बड़ी श्रद्धा-सत्कार सहित श्री आदि ग्रंथ साहिब भिजवाया। जब बाबा बुड्ढा जी ने हुक्मनामा[1] लिया तो राग तिलंग महला १, पन्ना ७२१ पर आया :

यक अरज गुफतम पेसि तो दर गोस कुन करतार ॥
हका कबीर करीम तू बेऐब परवदगार ॥१॥
दुनीआ मुकामे फानी तहकीक दिल दानी ॥
मम सर मूइ अजराईल गिरफतह दिल हेचि न दानी ॥१॥रहाउ॥
जन पिसर पदर बिरादरां कस नेस दसतंगीर ॥
आखिर बिअफतम कस न दारद चूं सवद तकबीर ॥२॥
सब रोज गसतम दर हवा करदेम बदी खिआल ॥
गाहे न नेकी कार करदम मम ईं चिनी अहवाल ॥३॥
बदबखत हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक ॥
नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरां पा खाक ॥

भावार्थ : हे करतार! तेरे आगे विनय है। तू सच्चा, बड़ा, दयालु और पालनहार है। यह संसार नाशवान है। यह बात सच जानो। मेरे केश अज़राइल ने पकड़ लिए हैं। हे मन! तू कुछ नहीं समझता। स्त्री, पुत्र, पिता और भाई अंत समय सहायक न होंगे। जब मौत का समय आ गया कोई बचा नहीं सकेगा। रात-दिन बुरे काम करता है, लालच में फंसा हुआ है। मैंने नेकी नहीं की, इसलिए मेरा बुरा हाल हुआ है। बदकिस्मत, चुगलखोर, बेशर्म और डरहीन हूं। मेरी विनती है कि मैं तेरा दास हूं; मैं तेरे दासों की चरण-धूल के समान हूं।"

फारसी भाषा का यह हुक्मनामा सुनकर अकबर के कपाट खुल गए। कहने लगा, 'यह ग्रंथ पूजा के योग्य है।' अकबर यह कह ही रहा था कि सामने खड़े ब्राह्मण और काजी कहने लगे कि यह शबद पहले ही आपके लिए निकालकर रखा गया था। यह हमारा आदमी जो गुरमुखी जानता है उसके द्वारा पढ़वाओ। अकबर ने उस आदमी दयाल के द्वारा हुक्मनामा[2] निकलवाया जो राग सूही महला ५, पन्ना ७३९ पर है :

घर महि ठाकुरु नदरि न आवै ॥
गल महि पाहणु लै लटकावै ॥१॥
भरमे भूला साकतु फिरता ॥
नीरु बिरोलै खपि खपि मरता ॥१॥रहाउ॥
जिसु पाहण कउ ठाकुरु कहता ॥
ओहु पाहणु लै उस कउ डुबता ॥२॥
गुनहगार लूण हरामी ॥
पाहण नाव न पारगिरामी ॥३॥
गुर मिलि नानक ठाकुरु जाता ॥
जलि थलि महीअलि पूरन बिधाता ॥४॥

यह हुक्मनामा ब्राह्मण के मुंह पर तमाचा था कि "तूने अपने गले में पत्थर की मूर्ति पहनी हुई है और अंदर से प्रभु को नहीं ढूंढ पाया। माया के पीछे भागा फिरता है, पानी गिराने में लगा हुआ है। जिस पत्थर को ठाकुर समझकर गले में पहना हुआ है अंत इसी ने तुझे डुबोना है। हे अकृतघ्न! यह पाषाण-पूजा तुझे भवसागर से पार नहीं कर सकती। गुरु जी कहते हैं, गुरु के द्वारा ठाकुर की पहचान कर जो जल, थल और आकाश में विचर रहा है।"

यह हुक्मनामा सुन काजी, ब्राह्मण शर्मिंदा हो गए। बादशाह ने ५१ मोहरें श्री आदि ग्रंथ साहिब के आगे रखकर माथा टेका और कहा कि "अल्ला के लिए मुहब्बत और खुदा की

इबादत के अलावा जो मैंने सुना है इसमें न किसी की प्रशंसा है न निरादरी, सिवाय खुदा की प्रशंसा के। यह पूजनीय और आदर-सत्कार के लायक है।" ये शब्द कहते हुए शिकायत करने वालों को डांटा कि यूं ही सिखों को तकलीफ दी? मैकालिफ लिखता है—"जाते हुए भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी को और गुरु जी के लिए तीन कीमती वस्त्र दिए और कहा—मेरी तरफ से गुरु जी को सलाम कहना और कहना कि दिल्ली जाते हुए उनके दर्शन करूंगा।"

अकबर की मृत्यु के बाद जहांगीर बादशाह बना। वह अपने पिता के बिलकुल विपरीत था। उसने उदारता न अपनाकर कट्टरता ग्रहण की। दूसरी तरफ चन्दू लाहौर का दीवान गुरु जी के द्वारा उसकी लड़की सदा कौर का रिश्ता नामंजूर होने के कारण गुरु जी का जानी दुश्मन बन चुका था।

जहांगीर की कट्टरता

"श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के मुख्य कारणों में से एक है कि जहांगीर दूसरे धर्मों से घृणा करने वाला इंसान था। वह श्री गुरु अरजन देव जी की दिन-प्रतिदिन बढ़ रही लोकप्रियता को सहन नहीं कर सकता था। उसने गुरु जी की सर्वसांझी धर्मशाला को 'झूठ की दुकान' कह कर बदनाम करना शुरू कर दिया।"[३] जहांगीर गुरु जी और सिखों की बढ़ रही शक्ति को सहन न कर सका। पहले सिख गुरु साहिबान ने सिख धर्म को बहुत फैलाया और श्री गुरु अरजन देव जी ने मसंद प्रणाली के द्वारा सिखों में पूरी तरह स्वाभिमानी भावना को जगाया। तरनतारन, गोइंदवाल और करतारपुर जैसे स्थान सिखों के लिए बनाए, जहां मेलों पर सिख एकत्रित होते थे। गुरु जी को 'सच्चा पातशाह' कहने लग गए। यह सिखों की शक्ति मुगल राज्य को चुभने लगी। मुगल सिखी की बढ़ोत्तरी को देख समतोल गंवा बैठे और गुरु जी को अपना बलिदान देना पड़ा। सी. ए. पेन इसी प्रकार लिखता है: "गुरु अरजन देव जी केवल गुरु ग्रंथ साहिब जी की स्थापना करके प्रसिद्ध नहीं हुए बल्कि वे पहले गुरु थे जिन्होंने राजनीति को धर्म के साथ जोड़ा। अमृतसर को अपना केन्द्र बनाकर गुरु जी ने सिख मर्यादा के सिद्धांत बनाए। इस सम्मान करके मुगलों के साथ टक्कर हुई और सिखों पर अत्याचार का दौर शुरू हो गया।"[४]

एक अन्य कारण गुरु जी द्वारा खुसरो की सहायता करना चर्चा में है। खुसरो जहांगीर का पुत्र था। वह नेक, नरमदिल और विद्वान था। जहांगीर के द्वारा उसे नज़रबंद कर दिया गया था, परन्तु वह वहां से भागकर पंजाब आ पहुंचा। अब जो भी खुसरो की सहायता करता था जहांगीर के द्वारा उसे मृत्यु-दंड दिया जाता था। बाद में खुसरो को गिरफ्तार कर लिया जाता है। गुरु जी पर भी खुसरो की सहायता करने का दोष लगाया गया। जहांगीर ने बिना निर्णय लिए ही गुरु जी को बुलवा भेजा और हुक्म दिया कि उन्हें 'यासा' की सजा दी जाए। 'यासा' तुर्की भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'कत्ल करना, घर-बार लूट लेना'। जहांगीर को बहाना चाहिए था, अतः वह बहाना खुसरो की सहायता के बहाने ने दे दिया।

गुरु जी सारे हालात को जानते थे कि जहांगीर के पास से जिन्दा वापिस नहीं आएंगे। उन्होंने सिखों को इकट्ठा करके वचन किया कि "अंत समय नजदीक आया लगता है।" भाई केसर सिंघ छिब्बर बंसावलीनामा में लिखते हैं :
सिक्खां नू कीती सुपुरदि, हरिगोबिंद की बाहि

पकड़ाई।
भाई गुरदास नूं बैठ समझाइआ,
साडा लगेगा सीस एह निरणा आइआ।
असां तुरकां विच जाणा उन्हां करनी है हुज्त,
तुसां दुआबे विच करना टिकाणा।
सरीर है छुटणा संसा नहीं कोई।
रजाइ खुदावंद दी है इस तरां होई।
साहिब मत्था टेक विदिआ हो गए।
'दुषट चौकड़ी' विचि आवत भए।
सवाल जवाब बहुत ही होइआ।
भए कैद, दुख पाइआ, सुख होइआ।

कहते हैं कि भाई शंगारू और भाई जैता जी ने गुरु जी को तलवार पहन कर जाने के लिए कहा। गुरु जी ने वचन किया "शस्त्र जो पहनने हैं वो हमने हरिगोबिंद रूप धारण करके पकड़ने हैं। कलयुग का समय है, शस्त्र-विद्या के द्वारा मीर की मीरी खींच लेनी है, शबद की विद्या और प्रेम के द्वारा पीर की पीरी ले लेनी है। तुमने छेवें पातशाह के पास रहना है।"[५]

सिख इतिहास और परम्परा के अनुसार श्री गुरु अरजन देव जी को जहांगीर की हकूमत के द्वारा असहनीय और अकह जुल्म देकर शहीद किया गया। सिख इतिहास ने गर्म लोह पर बिठाने, गर्म रेत सिर पर डालने, उबलती देग में बिठाकर वहशी अत्याचारों का जिक्र किया है। आग और तपिश द्वारा झुलसे शरीर को पानी में डुबोने की वार्ता थोड़े-बहुत अंतर के साथ गुरु जी के समकालीन मोहसिन फानी और सोहनलाल सूरी ने भी बयान की है।

गुरु जी की इस शहादत से सिखों को गहरा धक्का लगा, उनके धार्मिक जज़्बे भड़क उठे। इतना होने पर भी गुरु जी यही कहते रहे *"तेरा कीआ मीठा लागै ॥"*

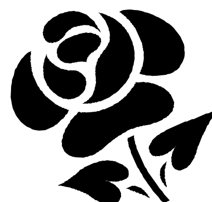
कहते हैं, खून को ब्याज बहुत लगता है। शहीद की शहादत कभी व्यर्थ नहीं जाती। ऐसी ही शहादत थी पंचम पातशाह की। इस शहादत ने पंजाब की धरती पर अमिट प्रभाव छोड़ा। गुरु जी ने अपनी शहादत देकर जालिम का मन शांत कर दिया और अपने ताजा खून का टीका लगाकर मुर्दा देश की रगों में नई जान भर दी।

इस प्रकार सिख कौम की आने वाली नस्लों के लिए एक ऐसा मार्ग खींच दिया जिसके बाद आगे चलकर उन्ही लोगों ने अपने अंग-अंग तो कटवा लिए, अपने तन तो चिरवा लिए, अपनी खोपरियां तो उतरवा लीं, अपनी चमड़ी तक उतरवा ली, परन्तु न तो अपना सिख धर्म छोड़ा और न ही जुल्म के आगे घुटने टेके। इस तरह श्री गुरु अरजन देव जी का खून धर्म का बीज बनकर पनपा। दिख रही सिख फुलवाड़ी—खालसा राज भी धर्म के बीज की ही उपज है।

सन्दर्भ सूची

१. चरन सिंघ भोरछी : 'जीवन गाथा श्री गुरु अरजन देव जी', संस्करण २००६, पृ. १८६.
२. वही : पृ. १८७.
३. ज्ञानी लाल सिंघ : 'गुरु अरजन देव जीवन ते रचना', संस्करण १९८८, भाषा विभाग (पटियाला), पंजाब।
४. चरन सिंघ भोरछी : 'जीवन गाथा श्री गुरु अरजन देव जी', संस्करण २००६, तरनतारन, पृ. १९१.
५. भाई वीर सिंघ : 'जीवन गाथा श्री गुरु अरजन देव जी', संस्करण २००६, पृ. १९१, नई दिल्ली।





श्री गुरु अरजन देव जी : जीवन और बाणी

*-डॉ. एम. ए. लारी 'आज़ाद'**

सिख धर्म की एक शताब्दी पूर्ण होते-होते शहादत की शुरूआत करने वाले श्री गुरु अरजन देव जी का जन्म श्री अमृतसर के पास ग्राम गोइंदवाल में हुआ था। श्री गुरु रामदास जी का एक पुत्र महादेव फकीर हो गया, द्वितीय प्रिथी चंद अत्यंत सांसारिक व्यक्ति था तथा उन्होंने तृतीय सपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को हर प्रकार से योग्य जान गुरगद्दी सौंपी। शहीदों के सिरताज श्री गुरु अरजन देव जी ने सितंबर १५८१ ई में अट्ठारह वर्ष की आयु में गुरगद्दी की महान जिम्मेवारी संभाली। उन्होंने सिख विद्वान बाबा बुड्ढा जी से विद्या प्राप्त की थी। बाल्यकाल में ही उन्होंने पितृप्रेम में विह्वल हो काव्य-रचना करनी शुरू कर दी थी।

श्री गुरु अरजन देव जी ने रावी व ब्यास के मध्य क्षेत्र के गांव-गांव में जाकर श्री गुरु नानक देव जी की अमर बाणी सुनाई। तरनतारन के प्राकृतिक सौंदर्य से प्रभावित होकर वहां उन्होंने विशाल गुरुद्वारा एवं सरोवर बनवाया। उन्होंने ही करतारपुर की नींव रखी थी। लाहौर में अनेक हिंदू-मुस्लिम संत उनके अद्भुत व्यक्तित्व से प्रभावित हुए तथा वहां का मुगल सूबेदार भी मिलने आया और उन्हें सम्मानित किया। उसने गुरु जी की योजनानुसार दामी बाजार में एक बावली बनवायी। गुरु जी ने छेहरटा नगर का नाम ६ हरटों वाले कुएं के नाम पर डाला, जो अमृतसर से ५ मील दूर है। ये निर्माण कार्य पंजाब के शुष्क क्षेत्रों में हुए थे।

श्री हरिमंदर साहिब

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री हरिमंदर साहिब की नींव महान सूफी लाहौर के हजरत साईं मियां मीर से रखवायी। श्री हरिमंदर साहिब के चार द्वार इसलिये बने कि चारों वर्ण—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र बिना भेद-भाव के प्रविष्ट हो सकें। चारों ओर सरोवर इसलिए था कि लोग जल से तन धोकर श्री हरिमंदर साहिब में आकर मन को धोयें। वहां दिन-रात कीर्तन होता है तथा दर्शनार्थियों को लंगर में भोजन छकाया जाता है।

उन्होंने संतोखसर सरोवर को भी पूर्ण कराया, जिसकी खुदाई श्री गुरु रामदास जी ने शुरू कराई थी। श्री गुरु अरजन देव जी ने माझा के परिश्रमी किसानों में आत्मविश्वास एवं सहनशील विरोध की भावना जागृत की। उन्होंने श्रम को आवश्यक एवं सन्यास को अनावश्यक बताया तथा प्रेम व आत्मत्याग पर बल दिया। वे स्वयं शांति व अहिंसा के दूत थे। उन्होंने सिखों में आध्यात्मिक उत्साह व सामाजिक जागृति लाकर कहा था :

मै बधी सचु धरम साल है ॥
गुरसिखा लहदा भालि के ॥ . . .
हुणि हुकमु होआ मिहरवाण दा ॥
पै कोइ न किसै रञाणदा ॥
सभ सुखाली वुठीआ इहु होआ हलेमी राजु जीउ ॥ . . .
मै गुर मिलि उच दुमालड़ा ॥
सभ होई छिंझ इकठीआ दयु बैठा वेखै आपि जीउ ॥ *(पन्ना ७३-७४)*

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब व श्री गुरु हरिराय जी के समकालीन इतिहासकार मोहसिन

159, Punjabian, Khurja (Buland Shaher)-203131 (U. P.)

फानी ने लिखा है कि "हर महल (गुरु) के समय सिखों की संख्या बढ़ी और श्री गुरु अरजन साहिब के समय उनकी संख्या इतनी हो गयी कि आबादी के क्षेत्रों में ऐसे नगर अधिक न थे, जहां कुछ सिख न मिलते हों।

दैवीय ज्योतिपुन्ज

श्री गुरु अरजन देव जी की महानतम् उपलब्धि 'आदि ग्रंथ' की रचना है। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती गुरुओं, भक्तों व भाटों के पद संग्रह कर भाई गुरदास जी से गुरमुखी में लिखावा और जिल्द बंधने के बाद १६०४ ई में जीवन-पथ की अमर ज्योति 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' की आदि बीड़ को प्रस्तुत किया। बाद में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इस पावन ग्रंथ का पुन: सम्पादन करके श्री गुरु तेग बहादर जी की बाणी सम्मिलित कर दी।

अकबर महान् ने इस पवित्र ग्रंथ को ५१ स्वर्ण मुद्राएं भेंट कीं और बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी व गुरु जी को वस्त्र भेंट किये थे। सारे गुरुओं के पदों के अंत में 'नानक' शब्द आया है। वस्तुत: बाणी-रचना के समय सभी गुरुओं ने स्वयं को 'नानक' में सह-अस्तित्व (विलीन) माना है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ३१ रागों का प्रयोग हुआ है—सिरी, माझ, गऊड़ी, आसा, गूजरी, देवगंधारी, बिहागड़ा, वडहंस, सोरठि, धनासरी, जैतसरी, टोडी, बैराड़ी, तिलंग, सूही, बिलावलु, गोंड, रामकली, नट नाराइन, मालीगउड़ा, मारू, तुखारी, केदारा, भैरउ, बसंतु, सारंग, मलार, कानड़ा, कलिआनु, प्रभाती, जैजावंती। किसी-किसी शबद में दो राग मिले हुए हैं, जैसे-गउड़ी-माझ, गउड़ी-दीपकी, आसा-काफी (काफी लय का एक रूप है) तिलंग-काफी, सूही-काफी, सूही-ललित, बिलावलु-गोंड, मारू-काफी, बसंतु-हिंडोल, कलिआन-भोपाली, प्रभाती-विभास, आसा-आसावरी। इस प्रकार अन्य ६ राग हैं—ललित, आसावरी, हिंडोल, भोपाली, विभास, दीपकी। ये स्वतन्त्र रूप में नहीं प्रयुक्त हुए हैं।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ६ भाषाओं तथा अनेक उपभाषाओं का प्रयोग हुआ है। इसलिए इसका अनुवाद करना बहुत मुश्किल कारज है। जो मनुष्य अच्छी संस्कृत जानता होगा वह अरबी व फारसी नहीं जानता होगा तथा जो अरबी व फारसी जानता होगा वह संस्कृत के मूल शबदों को नहीं समझेगा। जो हिन्दी जानता है उसे मराठी का ज्ञान नहीं होगा, जो मनुष्य मराठी जानता है उसे पंजाबी व मुल्तानी का ज्ञान न होगा तथा इसी प्रकार अन्य भाषाओं की स्थिति है। इसके अलावा सिखों की धार्मिक रचनाओं में कुछ ऐसे विचित्र शब्द भी हैं, जो किसी ज्ञात भाषा में नहीं मिलते। इसके सम्बंध में व्यक्ति को पारंपरिक अर्थ को ही मानना पड़ेगा।

सुखमनी साहिब

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में श्री गुरु अरजन देव जी के पद अत्यन्त कोमल, काव्यात्मक सौंदर्य व दार्शनिकता से प्रभावित हैं। उनका अनुपम भक्ति काव्य 'सुखमनी साहिब' है, जिसमें असीम ईश्वर के स्वरूप का सर्वोत्कृष्ट वर्णन आत्मा को चिरशान्ति देने वाला है। रागों के क्रम से ही पद हैं तथा ईश्वर के नाम-जाप व सत्यान्वेषण में दिग्दर्शन करते हैं। प्रभु के प्यार-रंग में लिपटा उस ब्रह्मज्ञानी-योगी-संत का हुस्नेकलाम और हुस्नेख्याल पुरमग्ज भी है। इस खुदाई फरमान से इंसान आकबत संवारने की तरफ माएल हो सकता है। बाणी का आरंभ स्वस्ति वाचन से हुआ है; पहले एक श्लोक है, फिर उसके केन्द्रीय विचार के एक-एक पहलू को लेकर आठ बंद कहे गये हैं। बाणी का एक उदाहरण देखिये :

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ ॥

(पृष्ठ २६ का शेष)

गुरु अरजन देव जी का जीवन-वृत्तांत, कल्याणकारी कार्य और शहीदी

*-बीबी कुलबीर कौर**

श्री गुरु अरजन देव जी १९ वैसाख, सं. १६२० को श्री गुरु रामदास जी के घर माता भानी जी की कोख से गोइंदवाल में पैदा हुए थे। गुरु जी का विवाह २३ आषाढ़, सं. १६३६ को श्री किशन चंद, मौ गांव, जिला जालंधर की सुपुत्री बीबी गंगा जी के साथ हुआ। आप जी के घर योद्धा पुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी २१ आषाढ़ संवत् १६५२ को गांव वडाली (छेहरटा) जिला श्री अमृतसर में पैदा हुए।

गुरु जी माता-पिता की आज्ञा में रहकर प्रसन्न रहते थे। जब आपके दोनों भाइयों ने अपने ताऊ सहारी मल के लड़के की शादी पर लाहौर जाने से इंकार कर दिया तो आप अपने गुरदेव पिता जी का हुक्म मानकर लाहौर चले गए तथा तब तक वापस न आए जब तक आपको बाबा बुड्ढा जी को भेज कर लाहौर से बुलाया न गया। लगभग दो वर्ष लाहौर निवास के समय आप संगतों को नित्य-प्रति आध्यात्मिक विचारें देकर कृतार्थ करते रहे। जिस स्थान पर बैठ कर आप दीवान सजाते थे उसका नाम गुरुद्वारा "दीवानखाना चूना मंडी, लाहौर" प्रसिद्ध है। यह गुरुद्वारा चूना मंडी, श्री गुरु रामदास जी के जन्म-स्थान के पास ही है। जब आप को लाहौर गए काफी देर हो गई तो आप ने अपने पिता श्री गुरु रामदास जी की सेवा में तीन चिट्ठियां लिख कर श्री अमृतसर भेजीं। इन चिट्ठियों में स्वाभाविक रूप से आपके मन की व्यथा और मिलाप की तीव्र इच्छा फूट-फूट पड़ती है।

नोट—ये चिट्ठियां 'शबद हजारे' नामक सप्त शबदों के संग्रह के प्रथम तीन पद हैं।

पहली चिट्ठी—शबद हजारे का पहला पद :
मेरा मनु लोचै गुर दरसन ताई ॥
बिलप करे चात्रिक की निआई ॥
त्रिखा न उतरै सांति न आवै
बिनु दरसन संत पिआरे जीउ ॥१॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई
गुर दरसन संत पिआरे जीउ ॥१॥रहाउ॥

अर्थात् मेरा मन गुरु जी के दर्शन करना चाहता है। प्यारे संत जी के दर्शन के बिना प्यास नहीं बुझती और शांति नहीं आती। मेरा मन पपीहे की भांति विलाप कर रहा है।

दूसरी चिट्ठी—शबद हजारे का दूसरा पद :

जब पहली चिट्ठी का कोई उत्तर न आया तो कुछ दिन इंतजार करके आप ने दूसरी चिट्ठी लिखी, जो इस प्रकार है :

तेरा मुखु सुहावा जीउ सहज धुनि बाणी ॥
चिरु होआ देखे सारिंगपाणी ॥
धंनु से देसु जहा तूं वसिआ
मेरे सजण मीत मुरारे जीउ ॥२॥
हउ घोली हउ घोलि घुमाई
गुर सजण मीत मुरारे जीउ ॥१॥रहाउ॥

अर्थात् आपका मुख शोभनीय है और बाणी का बोल शांतिमय है। प्रभु-रूप को देखे बहुत समय हो गया है। वह देश धन्य है जहां आप बसते हैं। हे मेरे परम स्नेही परमात्मा के

**Flat No. 2-3, Tanwar Mansion, Plot 32, Sector 17, Kopar Khairne, Navi Mumbai-400709*

रूप! मैं आप पर वारी और बलिहारी जाता हूं।

तीसरी चिट्ठी—शबद हजारे का तीसरा पद :

इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता ॥
हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता ॥
मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै
बिनु देखे गुर दरबारे जीउ ॥३॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई
तिसु सचे गुर दरबारे जीउ ॥१॥रहाउ॥

अर्थात् यदि तुम एक घड़ी नहीं मिलते थे, तब कलियुग प्रतीत होता था। हे प्रिय प्रभु! अब आपको कब मिलेंगे? बगैर गुरु दरबार के देखे मेरी रात नहीं बीतती और नींद नहीं आती। उस सच्चे गुरु जी के दरबार पर मैं वारी और बलिहारी जाता हूं।

जब तीसरी चिट्ठी श्री गुरु रामदास जी को मिली तो इसको पहली दोनों चिट्ठियों के साथ पढ़कर आपके अपने प्यारे सुपुत्र के विछोह (वियोग) से नेत्र सजल हो गए तथा प्रेम-प्रवाह के कारण मुंह से कुछ न बोल सके।

गुरगद्दी का वरदान तथा लाहौर से वापसी करवाई गई। प्रेम के प्रवाह से रुके कंठ को आंखों द्वारा साफ करके श्री गुरु रामदास जी ने संगत के सम्मुख कहा कि जो हमारे दर्शनों का इतना इच्छुक होकर भी आज्ञा का पालन करता है, वही गुरुता का योग्यता से भार उठा सकता है। जिसके मन में अहंकार नहीं है, जो नम्र तथा आज्ञाकारी है, वही आश्चर्यजनक वस्तु को सहन कर सकता है। संगत के सम्मुख ऐसे विचार प्रकट करके दूसरे दिन श्री गुरु रामदास जी ने श्री गुरु अरजन देव जी को लाने के लिए बाबा बुड्ढा जी को लाहौर भेज दिया।

बाबा बुड्ढा जी के साथ आप लाहौर से श्री अमृतसर पिता जी के पास आ गए। चतुर्थ गुरु जी ने गुरगद्दी का योग्य अधिकारी मानकर आपको गुरुआई दे दी। गुरुआई की प्राप्ति के बाद आपने चतुर्थ पद का पिता जी के सामने उच्चारण किया :

भागु होआ गुरि संतु मिलाइआ ॥
प्रभु अबिनासी घर महि पाइआ ॥
सेव करी पलु चसा न विछुड़ा
जन नानक दास तुमारे जीउ ॥४॥
हउ घोली जीउ घोलि घुमाई
जन नानक दास तुमारे जीउ ॥रहाउ॥

(पन्ना ९६-९७)

अर्थात् अच्छे भाग्य हुए संतों ने गुरु के साथ मेल करा दिया। अविनाशी प्रभु घर में ही पा लिया है।

हे नानक! मैं आपके दास-जनों से एक पल के लिए भी न बिछड़ूं। मैं सेवा करूं। मैं आपके दास-जनों पर वारी और बलिहारी जाता हूं। (शबद हजारे संग्रह का चौथा पद) इस शबद के पहले तीन पद श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने पिता श्री गुरु रामदास जी के लिए लाहौर से पत्र के रूप में लिखे थे, जिनको पढ़ कर श्री गुरु रामदास जी ने आपको लाहौर से बुला लिया था।

श्री गुरु रामदास जी अपने सुपुत्र श्री गुरु अरजन देव जी से इस श्रद्धा से भरपूर मिलाप की खुशी का समाचार सुनकर अति प्रसन्न हुए तथा आपको गुरगद्दी के हर प्रकार से योग्य समझकर अपने स्थान पर नियुक्त कर दिया। इस तरह श्री गुरु अरजन देव जी संवत् १६३८ को गुरगद्दी पर विराजमान हुए।

श्री गुरु रामदास जी अपने साथ श्री गुरु अरजन देव जी, बीबी भानी जी तथा कुछ निजी सेवकों के लेकर गोइंदवाल को चल दिए। गोइंदवाल पहुंच कर २ आश्विन, सं. १६३८ को आप ज्योति-जोत समा गए।

गुरु जी की नित्य-क्रिया परोपकार के लिए होती थी। श्री गुरु अरजन देव जी गुरगद्दी पर शोभायमान होकर भोर होने से पहले शौच-स्नान करने के बाद नाम-स्मरण में लीन हो जाते थे। दिन चढ़ने पर पहले कीर्तन सुनते तथा फिर संगत को नाम-स्मरण और शिष्टाचार का उपदेश देते। दोपहर को विश्राम करके तीसरे पहर फिर दीवान सजाकर संगत को दर्शन देते और मन की इच्छाएं पूर्ण करके प्रसन्न करते थे। संगत के लिए सतिगुरु जी का हितकर उपदेश है:

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥१॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै ॥
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै ॥१॥रहाउ॥
जपु तपु संजमु धरमु न कमाइआ ॥
सेवा साध न जानिआ हरि राइआ ॥
कहु नानक हम नीच करंमा ॥
सरणि परे की राखहु सरमा ॥२॥

रामदास सरोवर, श्री हरिमंदर साहिब और श्री संतोखसर साहिब की सेवा की। श्री गुरु अरजन देव जी ने सरोवर को, जिसे श्री गुरु रामदास जी ने आरंभ किया था, संपूर्ण करके इसका नाम रामदास सरोवर रखा। इसके उपरांत संवत् १६४५ में संतोखसर सरोवर की पूरी खुदाई करवा कर पक्का करवाया तथा माघ संवत् १६४५ में ही गुरु जी ने रामदास सरोवर में श्री हरिमंदर साहिब की नींव मुसलमान फकीर साईं मियां मीर जी से रखवाई। तनरतारन सरोवर और शहर की रचना गुरु जी ने की। एक बार जब गुरु जी कुछ भक्तों की वजह से खारे नामक गांव आए, लोगों की इच्छानुसार खारे से दक्षिण दिशा की ओर चार मील दूर १७ वैसाख, संवत् १६४७ को शहर की मोहड़ी गाड़ कर सरोवर की नींव का टप्प लगाया तथा शहर का नाम तरनतारन रखा। गुरु जी ने इस कार्य के लिए पक्की ईंटें तैयार करवाईं तो इस क्षेत्र के हाकिम नूरदीन के पुत्र अमरदीन ने गुरु जी की ईंटें जबरदस्ती उठवाकर अपनी नूर की सराय में लगवा लीं। गुरु जी यह अन्याय का बर्ताव देखकर सरोवर की कार-सेवा बीच में छोड़ कर चले गए। संवत् १८२३ में सरदार जस्सा सिंघ ने सरोवर के दो किनारे पक्के करावाए तथा दूसरे दो किनारे महाराजा रणजीत सिंघ ने पक्के करवाए। इसकी परिक्रमा कुंवर नौनिहाल सिंघ ने बाद में पक्की करवाई, एक ऊंचा बुर्ज भी बनाया। खारे गांव में जहां गुरु जी रात्रि को विश्राम किया करते थे, श्री मंजी साहिब गुरुद्वारा बना हुआ है।

सिखों से प्रेम के कारण गुरु जी ब्यास से पार ढले ग्राम चले गये। उस वक्त जालंधर का हाकिम अजीम खां इस क्षेत्र में आया हुआ था। वह आपकी ख्याति सुनकर दर्शनार्थ आया तथा इस क्षेत्र में जालंधर के निकट निवास करने की प्रेरणा देकर २१ माघ, संवत् १६५१ को आपको अपने साथ ले गया। आपके निवास के लिए मकान बनवा दिए। बाद में वहां नगर बसा कर गुरु जी ने बड़े प्यार से उसका नाम करतारपुर रखा। यहां गुरु जी ने एक कुआं खुदवाया जिसका नाम गंगसर रखा।

आप तरनतारन की सेवा को बीच में ही छोड़कर चले गए थे। जाते हुए आप कई गांवों और नगरों की संगतों को अपने मुक्ति-दाता-वचनों से प्रसन्न करते गए थे। तरनतारन से खानपुर भाई हेमे की झोपड़ी में एक रात विश्राम कर भाई हेमे को सम्मानित किया। यहां

एक भाई ने गुरु जी को बड़े प्यार के साथ चूरी कूट कर खिलाई तथा गुरु जी ने प्रसन्नतापूर्वक गांव का नाम चोहला साहिब रखा। उसके बाद सरहाली तथा खडूर साहिब से होते हुए गोइंदवाल साहिब गए। वहां से आप ढले ग्राम आए और फिर दोआबे में जालंधर के हाकिम की विनती मानकर करतारपुर नगर बसाया। करतारपुर से नक्का क्षेत्र के प्रेमी सिखों की विनती मानकर वापस गोइंदवाल के रास्ते खेमकरन, जंबर, चूनीयां आदि गांवों की संगतों को नाम-बाणी का उपदेश देते हुए लाहौर पहुंचे।

लाहौर के डिब्बी बाजार में गुरु जी ने संगतों के स्नान आदि के लिए एक बहुत बड़ी बाउली बनवा, सतिसंग के लिए धर्मशाला बनवाई। लाहौर से गुरु जी दरिया रावी के साथ-साथ डेरा बाबा नानक तथा करतारपुर के दर्शन करके बाबा सिरीचंद जी के साथ-भेंट करने के वास्ते बारन गांव गए। दर्शन के उपरांत आप श्री अमृतसर वापस आ गए।

गुरु जी श्री अमृतसर से वडाली नामक गांव चले गए और यहीं दो वर्षों तक निवास किया। वडाली गांव में ही साहिबजादा हरिगोबिंद साहिब जी का जन्म २१ आषाढ़, संवत् १६५२ को हुआ। इसी खुशी में आप ने यहां तक बहुत बड़ा कुआं बनवाया। इस कुएं पर फसलों की सिंचाई के लिए टिंडों की छ: माहलें एक साथ चल सकती थीं, इसी कारण इसका नाम छेहरटा पड़ा। यहां बसी आबादी का नाम भी छेहरटा हो गया है। गुरु जी ने कहा था यह कुआं साहिबजादे के जन्म की खुशी में बनवाया गया। सच्ची श्रद्धा वाले आज भी यहां से झोलियां भर कर जाते हैं। जब साहिबजादा लगभग दो वर्ष का हो गया तो गुरु जी वडाली से श्री अमृतसर लौट आए। घर आकर गुरु जी ने यह शबद उच्चारण किया :

धनासरी महला ५ ॥

जिनि तुम भेजे तिनहि बुलाए
सुख सहज सेती घरि आउ ॥
अनद मंगल गुन गाउ सहज धुनि
निहचल राजु कमाउ ॥१॥
तुम घरि आवहु मेरे मीत ॥
तुमरे दोखी हरि आपि निवारे
अपदा भई बितीत ॥रहाउ॥
प्रगट कीने प्रभ करनेहारे
नासन भाजन थाके ॥
घरि मंगल वाजहि नित वाजे
अपुनै खसमि निवाजे ॥२॥
असथिर रहहु डोलहु मत कबहू
गुर कै बचनि अधारि ॥
जै जै कारु सगल भू मंडल
मुख ऊजल दरबार ॥३॥
जिन के जीअ तिनै ही फेरे
आपे भइआ सहाई ॥
अचरजु कीआ करनैहारै
नानक सचु वडिआई ॥४॥ *(पन्ना ६७८)*

यह शबद गुरु जी ने अपने महलों में श्री अमृतसर लौट कर श्री हरिगोबिंद साहिब जी की लोरी तथा आशीष के तौर पर उच्चारण किया था। इसमें विशेषत: परमात्मा का धन्यवाद किया गया है। असल में सुलही खां, चन्दू आदि द्वारा भड़काए जाने पर दिल्ली से श्री अमृतसर की ओर गुरु जी को श्री अमृतसर से निकालने के लिए आ रहा था। गुरु जी उस दुष्ट के आने का समाचार सुनकर पहले ही श्री अमृतसर को छोड़कर वडाली चले गए थे। सुलही खां दिल्ली से आता हुआ रास्ते में अपने मित्र प्रिथी चंद के पास गुरु के कोठे ठहरा तथा दूसरे दिन ईंटों के सुलग रहे आवे में आवा देखते समय घोड़े

समेत गिर कर जल मरा। इस घटना के बारे में आपने यह शबद उच्चारण किया : *"तुमरे दोखी हरि आपि निवारे अपदा भई बितीत ॥"* इस शबद में गुरु जी यह कहना चाहते हैं कि प्रभु ने दुख देने वालों को स्वयं समेट लिया है। अब विपदा टल चुकी है। वे आगे कहते हैं: *"अचरजु कीआ करनैहारै नानक सचु वडिआई ॥"* अर्थात् सुलही खां को मारने वाला यह आश्चर्यजनक कार्य स्वयं ईश्वर ने किया है। यही उसकी अपनी बढ़ाई है कि वह अपने सेवकों की स्वयं लाज रखता है। हे मेरे लाल हरिगोबिंद जी! अब आप आनंदपूर्वक रहिए तथा राज्य कीजिए।

वडाली से वापस आकर जैसे ही श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण-कार्य पूरा हो गया वैसे ही बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी विद्वान गुरसिखों ने गुरु जी से पूछा कि जैसे प्रत्येक मंदिर में किसी न किसी इष्टदेव की मूर्ति स्थापित की जाती है, वैसे इस मंदिर में कौन-सी मूर्ति स्थापित करने की आज्ञा है। गुरु जी ने फरमाया कि यह निर्गुण स्वरूप अकाल पुरख का 'हरि-मंदर' है। इसमें गुरु जी की उपदेशमयी निर्गुण स्वरूप बाणी का निवास करना ही उत्तम है। तुरंत ही सारे सिखी मंडल के सिखों को हुक्मनामे भेज दिए कि जिसने भी श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी की कोई बाणी संभाली हो, वे सब लेकर जल्दी श्री अमृतसर पहुंच जाएं। इसके अलावा किसी को बाणी जुबानी याद हो तो वह भी स्वयं लिखकर या किसी से लिखवाकर श्री अमृतसर भेज दें। इस तरह लिखे गए हुक्मनामे सभी सिख-संगतों को पहुंच गए। जिन गुरसिखों के पास कोई लिखित बाणी का पत्र या पुस्तक थी, सब लेकर गुरु जी के पास उपस्थित होना आरंभ हो गए। सबसे बड़ा गुरबाणी का लेखन-सांचा भाई बखता अरोड़ा, जलालपुर, जिला गुजरात वाला लाया। भाई बखता ने चारों गुरु साहिबान की बाणी एकत्रित करके लिखी हुई थी। इसके अलावा श्री गुरु अमरदास जी ने पहले दो गुरु साहिबान की, कुछ भक्तों की तथा अपनी बाणी अपने पौत्र संसराम से दो पोथियों में लिखवाई हुई थी। यह दोनों पोथियां इस समय बाबा मोहन जी के पास थीं, जिनसे श्री गुरु अरजन देव जी बड़ी नम्रता के साथ स्वयं नंगे पांव गोइंदवाल जाकर बड़े सम्मान के साथ पालकी में रख कर श्री अमृतसर लाए। स्वयं भी गुरु जी ने भी बेअंत बाणी की रचना की।

इस प्रकार जब सब गुरबाणी चहुं दिशाओं से गुरु जी को मिल गई तो आप ने रामसर सरोवर वाले एकांत स्थान पर तम्बू लगवा दिए और भाई गुरदास जी को साथ लेकर अपनी उच्चारण की हुई और एकत्रित की हुई बाणी को पहले रागबद्ध किया। फिर प्रत्येक राग में गुरबाणी को शबदों, छंदों, अष्टपदियों आदि को सुचारू ढंग से लिख लिया। तत्पश्चात दो गुरु साहिबान की बाणी, कुछ भक्त साहिबान की बाणी, जो श्री गुरु अमरदास जी ने उपने पौत्र संसराम से दो पोथियों में लिखवाई हुई थी, उसको भी रागों के अनुसार करके लिखने के लिए क्रमानुसार कर दिया।

पूरी तरह से तैयारी करने के बाद गुरु जी ने भाई गुरदास जी से सारी गुरबाणी तथा भक्त बाणी को एक सांचे में लिखवाकर संग्रह तैयार कर लिया। गुरु जी ने इस संग्रह का नाम "पोथी साहिब" रखा। इस पावन पोथी अथवा श्री आदि बीड़ साहिब का प्रकाश गुरु जी ने श्री हरिमंदर साहिब करके बाबा बुड्ढा जी को इसका ग्रंथी नियुक्त किया।

गुरु जी ने सदैव आवश्यकतानुसार प्राणियों

के कल्याण के लिए अपनी बाणी द्वारा उपदेश दिए। आपके २२१३ शबद, श्लोक आदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज हैं।

जब श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री आदि बीड़ साहिब का प्रकाश किया उस समय देश का बादशाह अकबर था। अकबर दिल्ली से लाहौर जाते हुए गुरदासपुर में ठहरा हुआ था। उसने गुरु जी से श्री आदि ग्रंथ साहिब दर्शन के लिए मंगवाया। गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी को श्री आदि ग्रंथ साहिब देकर बादशाह के पास गुरदासपुर भेजा। अकबर बादशाह ने कहा कि इसको पढ़ कर सुनाएं। तब बाबा बुड्ढा जी ने वाक लिया।

उस शबद को सुनकर अकबर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। श्री आदि बीड़ साहिब के सम्मान के रूप में सिरोपाउ देकर श्री आदि ग्रंथ साहिब को बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी के हाथ वापस भेज दिया।

लाहौर से दिल्ली वापस जाते हुए अकबर बादशाह श्री अमृतसर आया तथा गुरु जी से भेंट कर बहुत प्रसन्न हुआ। बादशाह ने गुरु जी के लंगर के लिए कुछ भेंट देनी चाही पर गुरु जी ने कहा कि इस वर्ष वर्षा न होने के कारण फसल पहले से कुछ कम हुई है इसलिए जमींदारों का मामला माफ किया जाए। यह लोक-कल्याण की सांझी बात सुनकर अकबर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ तथा जमींदारों का उस वर्ष का मामला माफ कर दिया। पंजाब से वापस आगरा पहुंच कर अकबर बादशाह का कार्तिक, संवत् १३३२ (संन ई. १६०५, अक्तूबर की १३ तारीख) को निधन हो गया। वह अपने पौत्र जहांगीर के पुत्र, खुसरो को राजगद्दी देना चाहता था परन्तु जहांगीर जो उस समय दिल्ली में था, अपनी बादशाही का ऐलान करके गद्दी पर बैठ गया। अभी खुसरो आगरा में ही अपने दादा अकबर की मृत्यु के कारण शोकातुर था, उसको जहांगीर ने बागी करार दे दिया। जहांगीर का यह ऐलान सुनकर खुसरो आगरा से थोड़ी-सी सेना, जो उस समय आगरा में थी, लेकर काबुल की ओर निकल पड़ा। रास्ते में गोइंदवाल साहिब से होकर खुसरो श्री गुरु अरजन देव जी को भी मिलने गया तथा लंगर छक कर, गुरु जी के दर्शन करके, लाहौर को चल दिया। खुसरो के पीछे-पीछे उसको पकड़ने के लिए जहांगीर सेना लेकर आ रहा था। जैसे ही खुसरो जेहलम नदी लांघने लगा वहीं पकड़ा गया तथा लाहौर में अपने साथियों सहित कत्ल कर दिया गया।

लाहौर से जहांगीर ने उन सभी को जिन्होंने किसी न किसी ढंग से खुसरो की सहायता की थी, कड़ी सजाएं दीं। जहांगीर ने सतिगुरु जी को लाहौर बुलाया तथा रावी दरिया के निकट कष्ट दे-दे कर शहीद कर दिया गया। लाहौर जाने से पहले सतिगुरु जी ने अपने सुपुत्र श्री हरिगोबिंद साहिब जी को अपने स्थान पर गुरगद्दी पर नियुक्त कर दिया था।

गुरु जी की शहीदी के असल में तीन कारण थे। इसलिए विरोधियों की ओर से बादशाह जहांगीर को खुसरो की मदद के बहाने उकसाकर, अति कठोर हुक्म लेकर, आपको शहीद किया गया। वे कारण निम्नलिखित थे :

१. सतिगुरु जी द्वारा चन्दू की पुत्री का रिश्ता अस्वीकार करना

२. कुछ लोगों की गुरु-घर के प्रति ईर्ष्या-भावना

३. बाबा प्रिथी चंद जी को गुरगद्दी न मिलना

चंदू एक खत्री था और लाहौर निवासी था। वह जहांगीर बादशाह का दीवान था। वह

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

शहीदों के सिरताज श्री गुरु अरजन देव जी

-स. जसपाल सिंघ*

रामदासि गुरू जग तारन कउ गुर जोति अरजुन माहि धरी ॥ *(पन्ना १४०९)*

श्री गुरु नानक देव जी महाराज के दर पर प्रवेश की शर्त बड़ी अनोखी है :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
(पन्ना १४१२)

जहां बाबर के पास बहुत बड़ी फौज थी, अनेक प्रकार के युद्ध के साजो-सामान थे, कठोरता थी, बादशाही थी, क्रूरता से, अहंकार से, क्रोध से, विकारों से मुगल बादशाह लबरेज था, वहां श्री गुरु नानक देव जी महाराज के पास केवल एक अकाल पुरख की बख्शी हुई बाणी की दात रूपी शक्ति थी, जिससे उन्होंने बाबर को 'जाबर' कह कर संसार में अनोखी क्रांति ला दी। इतनी बड़ी फौज, युद्ध में लड़ने के सारे साजो-सामान, अहंकार, कठोरता, क्रोध की अग्नि, भय गुरु नानक पातशाह का कुछ नहीं बिगाड़ सके और बाबर को झुकना पड़ा। गुरु नानक पातशाह के घर ने शुरू से ही जगत के लोगों को एक ही उपदेश दिया। नवम् गुरु जी के अनुसार :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥ *(पन्ना १४२७)*

न किसी से डरो और न ही किसी को डराओ। जब तक इस पांच भूतक शरीर में प्राण हैं मुश्किलों का सामना करते रहो।

पांचवें पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी श्री गुरु ग्रंथ साहिब महाराज के संपादक हैं। आज के कलयुगी समय में श्री गुरु ग्रंथ साहिब महाराज की महान परोपकार वाली तथा सारे सुख बख्शने वाली बाणी का आसरा जिसने ले रखा है उस पर कलयुगी विकारों का असर नहीं होता, उसे कोई चिंता नहीं, बेशर्ते कि जीवन का आधार बाणी में दर्शाए अनुसार हो :

धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिंत मिटाई ॥ *(पन्ना ६२८)*

दास यह बात पूरे विश्वास के साथ लिख रहा है कि यदि आज हर घर में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी महाराज की बाणी पढ़ी-सुनी जाए तो कोई दुखी नहीं रहेगा, दरिद्री नहीं रहेगा, कलयुग का कोई असर उस पर नहीं होगा, सारे लोग सुखी हो जायेंगे। चाहे किसी धर्म के लोग हों आसरा गुरबाणी का लेना है, तभी इस भवसागर से पार-उतारा हो सकेगा। यह आसरा बख्शने वाले सतिगुरु साहिब श्री गुरु अरजन देव जी महाराज को बचपन में ही अपने नाना श्री गुरु अमरदास पातशाह से वर प्राप्त हो गया था "दोहिता, बाणी का बोहिथा"।

चन्दू जो कि जहांगीर के दरबार में दीवान के पद पर था, श्री गुरु अरजन देव जी महाराज के साहिबजादे श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब से अपनी बेटी की शादी करना चाहता था, परंतु संगत के मना कर देने पर श्री गुरु अरजन देव पातशाह ने अपने सपुत्र के लिए यह

*C/o Bharti Sales Corporation, Gandhi Nagar, Mahoba (U. P.). Mob. 9455163606

रिश्ता स्वीकार नहीं किया। इस बात से चन्दू के मन में बदला लेने की क्रोध की अग्नि जल रही थी। इस बात का मौका उसको मिल गया, जब जहांगीर के बेटे खुसरो ने बगावत कर दी और पंजाब चला गया, तो वहां उसने श्री गुरु अरजन देव जी महाराज से आशीर्वाद लिया, पंगत में बैठकर लंगर छका।

पंजाब में श्री गुरु अरजन देव जी महाराज के पास खुसरो के जाने की खबर चन्दू को हो गयी। उसको मौका मिल गया और उसने श्री गुरु अरजन देव जी महाराज के खिलाफ जहांगीर के कान भरने शुरू कर दिये। तब जहांगीर ने श्री गुरु अरजन देव जी महाराज की गिरफ्तारी का हुक्म जारी कर दिया कि आपने बागी हुये खुसरो की मदद की है, उसको आशीर्वाद भी दिया है। आप पर दो लाख रुपये शाही दंड लगाया जाता है और जुर्माना अदा न कर पाने पर आपको मौत का दंड दिया जायेगा।

श्री गुरु अरजन देव जी महाराज, जिन्होंने निडर होकर जवाब दिया कि श्री गुरु नानक देव जी का दर हरेक के लिये भला मांगता है, किसी के भी साथ उसके व्यवहार में भेदभाव नहीं है। यह दर *"नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत्त दा भला"* मांगता है। गुरु का सिख यह दात मांगता है, *"सिर जावे तां जावे मेरा सिखी सिदक न जावे!"* यह जवाब सुनकर गुरु जी को सख्त कष्ट दिये जाने लगे। चन्दू ने गुरु साहिब को जलती आग पर रखी गरम तवी पर बिठाया, पानी की उबलती हुई देग में बिठाया, गरम-गरम रेत के कड़छे शीश पर डाले, पर गुरु साहिब पर बाणी का सदका अडोलता वाली अवस्था बनी रही। आप डगमगाये नहीं। आप केवल यह फरमाते रहे :

तेरा कीआ मीठा लागै ॥
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै ॥ (पन्ना ३९४)

साईं मीयां मीर को जब सतिगुरु जी को सख्त कष्ट देने की बात पता लगी तो साईं जी श्री गुरु अरजन देव जी महाराज के पास आये और बोले, "पातशाह! यह क्या भाणा वरता रहे हो?" गुरु साहिब बोले, "सब अकाल पुरख के हुक्म से हो रहा है, किसी के वश में कुछ नहीं है।" सतिगुरु जी बोले आज जरूरत है अपनी शहीदी देकर सोयी हुई कौम को जगाने की, सोये हुये देशवासियों की शूरवीरता को जगाने की। शहीदी देकर ऐसे सिख की सृजना करनी है जो मौत से कभी न डरे। मेरे सिख तो मौत से मजाक किया करेंगे, जान हथेली पर रखकर जीवन जिया करेंगे।" साईं जी चुप हो गये।

सतिगुरु जी को चाहे सख्त कष्ट देकर शहीद कर दिया गया लेकिन आप देखो परमात्मा की दयालुता कि जिस जगह गुरु साहिब को शहीद किया गया वहां आज आलीशान सुंदर गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। श्री गुरु अरजन देव पातशाह के दर से जहां सारे संसार के लोग नतमस्तक होने आते हैं, वहीं आज जहांगीर की कब्र पर कोई दीया जलाने वाला भी नहीं। हम सभी रहती दुनिया तक सतिगुरु जी के बताये रास्ते पर चलकर सुख प्राप्त करते रहेंगे।



पाठक अपना चंदा भेजते समय मनीआर्डर फार्म या पत्र में अपना नाम-पता अंग्रेजी के बड़े अक्षरों में लिखा करें।

पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी

*-कवीशर स्वर्ण सिंघ भौर**

पहाड़ों और झरनों से निकल कर पानी को जगह-जगह पत्थरों और चट्टानों के साथ टकरा कर रास्ता ढूंढना पड़ता है और फिर वह समुद्र तक पहुंचता है। इस तरह कोई महापुरुष परमात्मा का सत्य का दीपक लेकर लोगों को सत्य-धर्म के रास्ते पर चलाने के लिए आगे हो चलने का यत्न करता है। सच के दीपक को बुझाने के लिए कूड़ की आंधियां रास्ते में रुकावट बनती हैं।

अखबारों-पत्रिकाओं में कई बातें गुरमति की और कई बुरी घटनाओं वाली भी होती हैं तथा कई कत्लों एवं लूटने-छीनने की वारदातों की घटनाओं से सम्बंधित। यह शायद अखबारों की ज़रूरत है। किसी देश में भूकंप, तूफान, जंग शुरू होती है तो अखबारों की बिक्री बढ़ जाती है। इतिहास के बीच जुल्म की बात हो या फिर संत-सूरमे और दानी की, जो आदमी अच्छे काम करता है वह आगे बढ़ता जाता है, जो आदमी धोखेबाजी करता है वह पीछे की ओर जाता है। इसी तरह पीछे की तरफ सज्जन ठग जा रहा है। उसको संत बनाने के लिए गुरु नानक साहिब ने शबद सुना कर उसकी कायाकल्प की और धर्म के प्रचार के लिए धर्म-प्रचारक बना दिया। सप्त ऋषियों, बाल्मीकि बटवाड़ा ने शबद सुना और घर से पूछने के लिए गया कि कोई अंत काल मेरी मदद करेगा।

भाई साहिब भाई गुरदास जी ने १०वीं वार की १९वीं पउड़ी में फरमान किया है:

घर विचि पुछ्ण घलिआ अंति काल है कोइ असाड़ा।
कोड़मड़ा चउखंनीऐ कोइ न बेली करदे झाड़ा।
सचु द्रिड़ाइ उधारिअनु टपि निकथा उपर वाड़ा।
गुरमुखि लंघै पाप पहाड़ा ॥

किसी बिल्डिंग के ऊपर चढ़ने के लिए लिफ्ट से ही चढ़ा जाता है। जीवन की सीढ़ी के ऊपर के लिए जप-तप-संयम की जरूरत होती है। आदमी कहता है कि यह बहुत ही कठिन मंजिल है। कौन चढ़ने के लिए जप-तप-संयम करे? सच की रौशनी को पृथ्वी पर फैलाने के लिए श्री गुरु अरजन देव जी ने माता भानी जी की पावन कोख से १९ वैसाख सं. १६२० तदनुसार १५ अप्रैल १५६३ को श्री गुरु रामदास जी के घर गोइंदवाल साहिब में जन्म लिया। श्री गुरु रामदास जी के ३ सपुत्र—प्रिथी चंद, महादेव और (गुरु) अरजन देव जी थे। श्री (गुरु) अरजन देव जी की वृत्ति धार्मिक कार्यों में अधिक तथा सेवा-भावना वाली थी। इस बात की गवाही श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भट्ट कल सहार ने दी है। श्री गुरु अरजन देव जी ऐसे गुरु थे जिन्होंने गुरमति के ज्ञान का बहुत प्रसार किया। पंचम पातशाह के नाना श्री गुरु अमरदास जी ने बालक की धार्मिक रुचियों को निहार कर फरमान किया कि यह बहुत प्रतापी होगा।

**गांव और डाक सरली कलां, तहसील खडूर साहिब, ज़िला तरनतारन (पंजाब)*

एक साखी आती है कि गुरु जी पलंघ के पावों को पकड़ कर खेलते थे। एक दिन पलंघ को ऐसा हिलाया कि श्री गुरु अमरदास जी की समाधि खुली तो बालक को गोदी में लेकर फरमान किया, "दोहिता, बाणी का बोहिथा" और साथ ही कथन किया कि यह बाणी का ऐसा जहाज तैयार करेगा जो जीवों को संसार-समुद्र के पार लगाएगा। यह महावाक्य बीबी भानी जी को श्री गुरु अमरदास जी ने अपने मुखारबिंद से कहे। बीबी भानी जी एक ऐसी स्त्री थीं जो दुख और सुख को बराबर करके जानती थीं। भाई गुरदास जी ने पहली वार की ४७वीं पउड़ी में फरमान किया है:

दिचै पूरबि देवणा जिस दी वसतु तिसै घरि आवै।
बैठा सोढी पातिसाहु रामदासु सतिगुरू कहावै।
पूरनु तालु खटाइआ अंम्रितसरि विचि जोति जगावै।
उलटा खेलु खसंम दा उलटी गंग समुंद्रि समावै।
दिता लईये आपणा अणिदिता कछु हथि न आवै।
फिरि आई घरि अरजणे पुतु संसारी गुरू कहावै।
जाणि न देसां सोढीओं होरसि अजरु न जरिआ जावै।
घर ही की वथु घरे रहावै ॥

श्री गुरु अमरदास जी के हुक्म के साथ श्री गुरु रामदास जी ने श्री अमृतसर की बुनियाद रखी और गुरु-पदवी की प्राप्ति होने पर आप जी श्री अमृतसर आ विराजमान हुए और सारा ध्यान शहर के विकास की ओर दिया। श्री गुरु अरजन देव जी की सेवा में गहरी रुचि थी। लंगर के लिए रसदें और मसंदों से कार-व्यवहार प्रिथी चंद ही रखते थे। श्री महादेव जी संसार के बंधनों में बंधना ठीक नहीं समझते थे। श्री गुरु रामदास जी के ताऊ के सपुत्र सहारी मल ने अपने पुत्र की शादी के अवसर पर श्री गुरु रामदास जी को विनती की कि लाहौर आकर संगतों को दर्शन देकर निहाल करें। श्री गुरु रामदास जी ने अपने सबसे बड़े पुत्र प्रिथी चंद को कहा कि "पुत्र जी! तुमने शादी में शामिल होना है।" प्रिथी चंद ने इंकार कर दिया कि "मेरे पास काम बहुत है, यदि मैं चला जाता हूं तो यह काम मेरे बाद कौन करेगा?" श्री गुरु रामदास जी ने श्री अरजन देव जी को हुक्म किया तो आप जी गुरु-हुक्म मान कर लाहौर चले गए। शादी में सारी रस्में पूरी कीं। गुरु जी शादी के बाद लाहौर में सतसंग करके तपते हृदयों को नाम का खजाना बांट कर शीतल किया करते। संगतें दर्शन करने के लिए पहुंचतीं। कुछ समय के बाद श्री अरजन देव जी ने स्नेह-पत्र लिख कर भेजे। उन्हें प्रिथी चंद ने इधर-उधर कर दिया और गुरु-पिता के पास न भेजे। अंततः सतिगुरु रामदास जी ने संदेश भेज कर लाहौर से श्री अरजन देव जी को श्री अमृतसर बुलाने का फैसला कर लिया कि हमारे बाद गुरुतागद्दी की महान जिम्मेवारी की सेवा वे ही पूरी कर सकते हैं। इस बात का प्रिथी चंद ने तीखा विरोध किया। उसने कहा कि यह हक मेरा है। श्री गुरु रामदास जी ने प्रिथी चंद को बहुत समझाया और फरमान किया :

काहे पूत झगरत हउ संगि बाप ॥
जिन के जणे बडीरे तुम हउ
तिन सिउ झगरत पाप ॥१॥रहाउ॥
जिसु धन का तुम गरबु करत हउ
सो धनु किसहि न आप ॥ (पन्ना १२००)

श्री गुरु रामदास जी अपना अंतिम समय निकट जान कर गोइंदवाल साहिब आ गए। श्री गुरु अरजन देव जी भी पिता-गुरु जी के साथ

गोइंदवाल साहिब चले गए। २ आश्विन, सं. १६३८ तदनुसार १ सितंबर १५८१ को श्री गुरु रामदास जी ज्योति-जोति समा गए। प्रिथी चंद श्री गुरु रामदास जी के होते गुरगद्दी हथियाने में कामयाब न हो सका। अब वह श्री गुरु अरजन देव जी के साथ ईर्ष्या करने लगा। वह अपने हमदर्द साथियों को साथ लेकर गोइंदवाल साहिब चला गया। वहां संगत की बहुत बड़ी एकत्रता थी। बाबा बुड्ढा जी पंचम पातशाह को दसतार भेंट करने लगे तो आगे बढ़ कर प्रिथी चंद ने दसतार छीन ली और श्री गुरु अरजन देव जी के विरुद्ध बोल-कुबोल बोलने शुरू कर दिये, परंतु श्री गुरु अरजन देव जी ने अपनी सहज अवस्था को भावनापूर्ण कायम रखा। उस समय उपस्थित संगत ने आपके धैर्य और मानसिक एवं आत्मिक अडोलता का यश गायन किया। श्री गुरु अरजन साहिब २ आश्विन, सं. १६३८ (१ सितंबर १५८१) को गुरुतागद्दी पर विराजमान हुए। सं. १६४५ में संतोखसर का सरोवर पक्का किया। सं. १६४७ में तरनतारन के सरोवर का निर्माण करवाया। सं. १६५० में करतारपुर नगर (जिला जालंधर) बसाया। सं. १६५९-६० में रामसर तैयार करवाया तथा सं. १६६१ में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी की आदि बीड़ तैयार की। इसी वर्ष १७ भादों को श्री आदि बीड़ साहिब का पहला प्रकाश श्री हरिमंदर साहिब में करके बाबा बुड्ढा जी को ग्रंथी नियुक्त किया।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ओट-आसरा लेकर हम भवसागर से पार उतर सकते हैं। आओ! गुरु जी की अपार महिमा का गायन कर रुहानी प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ें:

ततु बिचारु यहै मथुरा
जग तारन कउ अवतारु बनायउ ॥
जप्यउ जिन्ह अरजुन देव गुरू
फिरि संकट जोनि गरभ न आयउ ॥

(पन्ना १४०९)



श्री गुरु अरजन देव जी : जीवन और बाणी *(पृष्ठ १५ का शेष)*

कलि कलेस तन माहि मिटावउ ॥ (पन्ना २६२)

तथा

वे ही ईश्वर का ध्यान करते हैं, जिन्हें वह स्वयं ऐसा करने की प्रेरणा देता है।

श्री गुरु अरजन देव जी ने राग आसा में मानव-जीवन का निम्न लक्ष्य बताया है— "तुमने अपने ईश्वर से मनुष्य-देह पाई है। अपने ईश्वर को पाने का यही समय है। तुम्हारे अन्य कार्य किसी अर्थ के नहीं। शुद्ध लोगों की संगति में शामिल हो जाओ तथा केवल ईश-नाम जपो।" इस प्रकार मानव ईश्वर का नाम सुनने और जपने लगा। पर कोई मनुष्य यदि नाम त्याग कर अन्य कामनाओं से मोह करता है, तो उसका जीवन व्यर्थ है। और जिस घर में ईश्वर का प्रशंसा-गान होता है वह भाग्यशाली व सुंदर है; जहां ईश्वर को विस्मृत किया जाता है, वह स्थान व्यर्थ है।

'आसा छंत' में गुरु जी कहते है कि "तुम्हारे कर्म तुम्हारा अनुसरण करते हैं, उनके प्रभाव को मिटाया नहीं जा सकता।"

गुरु के बारे में उन्होंने राग 'सिरीरागु' में बताया कि "गुरु सर्वशक्तिमान तथा महान होता है। जो उसकी दृष्टि पाना चाहता है, वह सौभाग्यशाली है। गुरु अनन्त, निर्मल तथा पवित्र होता है। गुरु की समानता कोई नहीं कर सकता। और गुरु एवं ईश्वर एक हैं तथा ईश्वर सबमें सब जगह व्याप्त है।



श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी

*-स. गुरमेल सिंघ**

श्री गुरु अरजन देव जी की 'चार सौ वर्षीय' (१६०६-२००६ ई) शहीदी शताब्दी पूरी होने पर, उनके जीवन, व्यक्तित्व, विचारधारा और शहीदी आदि के बारे में जानने की उत्सुकता उत्पन्न हुई। इसी दिशा में यह छोटा-सा प्रयास है :-

१. श्री गुरु अरजन देव जी के जीवन की मुख्य तिथियां और घटनाक्रम :

१. १५ अप्रैल १५६३	: जन्म/प्रकाश
२. १५८१ ई	: गुरगद्दी
३. १५८७ ई	: संतोखसर की स्थापना
४. १५८८ ई	: श्री हरिमंदर साहिब की स्थापना
५. १५७९ ई	: शुभ-विवाह
६. १५९० ई	: तरनतारन की स्थापना
७. १५९३ ई	: करतारपुर (पंजाब) की स्थापना
८. १५९५ ई	: सपुत्र (हरिगोबिंद) का जन्म और हरिगोबिंदपुर नगर की स्थापना
९. १५९७ ई	: लाहौर-काल में सेवा/सहायता
१०. १५९८ ई	: अकबर, गुरु-दरबार में
११. १६०४ ई	: गुरु ग्रंथ की 'आदि बीड़' का सम्पादन तथा पहला प्रकाश
१२. १६०६ ई	: शहीदी

२. श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी: भाई गुरदास जी के शब्दों में

रहिदे गुरु दरीआउ विचि मीन कुलीन हेतु निरबाणी।
दरसनु देखि पतंग जिउ जोती अंदरि जोति समाणी।
सबदु सुरति लिव मिरग जिउ भीड़ पई चिति अवरु न आणी।
चरण कवल मिलि भवर जिउ सुख संपट विचि रैणि विहाणी।
गुरु उपदेसु न विसरै बाबीहे जिउ आख वखाणी।
गुरमुखि सुख फलु पिरम रसु समाधि साध संगि जाणी।
गुर अरजनु विटहु कुरबाणी ॥ (वार २४:२३)

३. श्री गुरु अरजन देव जी : भाई नंद लाल जी की दृष्टि में

(भाई नंद लाल ग्रंथावली, सम्पा. डॉ. गंडा सिंघ, पृष्ठ १४८-४९ पर से)

गुरू अरजन जुमला जूदो फ़ज़ाल
हकीकत पज़ोहिंदाइ हक्क जमाल ॥७५॥
वजूदश हमा रहिमति ईज़दी
सआदत फज़ाइंदइ सरमदी ॥७६॥
मुरीदश दो आलम चिह बल सद हज़ार
हमा करमहाइ ऊ जुराअ ख़्वार ॥७७॥
अज़ो नजम कालि हक्क अंदेशा रा
बदो नसक इलाइ यकीं-पेशा रा ॥७८॥
जलाइ मकालि हक्क आमद अज़ो
फ़रोग़ि जमालि हक्क आमद अज़ो ॥७९॥

भाव- गुरु अरजन साहिब बखिशश और प्रशंसा का रूप हैं, प्रभु-शान के असल रूप के खोजकार हैं। उनकी हस्ती का सारा वजूद प्रभु की रहमत का प्रतिबिम्ब है और स्थायी रहने वाले अच्छे गुणों को बढ़ाने वाला है। दो जहान ही नहीं बल्कि लाखों ही उसके मुरीद हैं, सारे ही उसकी कृपा के अमृत रूपी घूंट पीने वाले

**प्रोजैक्ट फैलो, धर्म-अध्ययन विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला। मो: ९८५५०-३३३८४*

हैं। प्रभु के विचार वाली बाणी वहीं से आती है, सिदक भरोसे वाले ज्ञान से भरपूर लेख भी उसी के ही हैं। प्रभु-ज्ञान-गोष्ठि को उसी से चमक-दमक प्राप्त है, प्रभु-हुस्न को उसी से निखार और खुशी प्राप्त होती है।

अब पाठकों की जानकारी हेतु कुछ ऐतिहासिक पुस्तकों में गुरु जी के शहीदी के कारणों के विश्लेषण हेतु कुछ अंश हू-ब-हू दिये जाते हैं। इनमें तथ्य चाहे पूर्णतः उचित नहीं और कहीं-कहीं गैर-सिख और सिखी भावना से अज्ञात लेखकों की भाषा शैली भी पूर्णतः स्वीकार करने योग्य नहीं फिर भी मूल प्रारंभिक स्रोत होने के कारण इन्हें पढ़ना, वाचना समझना आवश्यक है। -संपादक

४. अकबरनामा- अबुलफ़ज़ल में गुरु अरजन देव जी की अकबर के साथ भेंट ***(Sikh History from Persion Sources, P-55)*** *पर से*

On 13 Azar (14 November 1598) His Majesty crossed the river Beas on an elephant near Goindwal, while the troops crossed over by a (boat) bridge. On this day, the house of Arjan Guru (spelt 'Gor') received fresh lustre through. His majesty alighting there. He is a leader of the Brahmanical Faith, the Position descending from one generation to another. And he has great store of (spiritual) love. Since his hope (for a visit form His Majesty) arose out of (sincere) devotion, His Majesty accepted his invitation.

५. गुरु अरजन देव जी की शहीदी : तुजक-ए-जहांगीरी में से (सिक्ख इतिहास के कुछ ऐतिहासिक पत्तरे, पृ. ३५-३६)

गोइंदवाल, जो कि बिहा (ब्यास) दरिया के किनारे पर स्थित है, में पीर बुजुर्ग के पहरावे में अरजन नाम का एक हिन्दू था। उसने बहुत सारे सीधे-सादे हिन्दुओं को ही नहीं बल्कि बेसमझ मुसलमानों को भी अपने धार्मिक रीति-रिवाजों में परिपक्व करके अपनी बुजुर्गी और प्रभु के साथ नजदीकी का डंका बहुत ऊंचा बजा रखा था (बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी)। लोग उसे गुरु कहते थे। सभी दिशाओं से फरेबी और फरेब के पुजारी उसके पास आकर उस (गुरु) के ऊपर पूरा विश्वास प्रकट करते थे। तीन-चार पीढ़ियों से उसकी यह दुकान गर्म थी। बहुत देर से मेरे मन में यह विचार आता था कि इस झूठ के व्यापार को बंद करना चाहिए या फिर उस (गुरु) को मुसलमानों के मत में लेकर आना चाहिए। इन दिनों में ही खुसरो ने यहां से दरिया को पार किया। उसने यह निश्चय कर लिया कि हमेशा उसके निकट रहना है, इसलिए उस स्थान पर जहां उसके निवास का प्रबंध था, उसी स्थान पर खुसरो ने निवास कर लिया। उसके साथ भेंट की और कई पूर्व-निश्चित बातों के बारे में उन्हें जानकारी दी और एक उंगली को केसर लगाकर उसके मस्तक पर एक लकीर लगा दी, जिसे हिन्दू लोग तिलक कहते हैं और अच्छा शगुन समझते हैं।

पहले से ही मुझे इसके झूठ के बारे में पूरी जानकारी हासिल थी, परन्तु जब यह बात मेरे कानों तक पहुंची तब मैंने आदेश दिया कि उसे हाजिर किया जाए और उसके घर-बार और बच्चों को मुरतजा खान को सौंप दिया जाए और उसका माल-असबाब जब्त करके आदेश दे दिया कि उसे डरा-धमका कर, सजा देकर, मार-पीट कर और भारी कष्ट देकर मौत के घाट उतार दिया जाए और दूसरे जिनका नाम राजू और अम्बा था और जिन्होंने ख्वाजा सरा दौलत खान की मदद की आड़ में बहुत जुल्म और अत्याचार किए थे और जब

खुसरो लाहौर के नजदीक था तो इन्होंने बहुत हाथ-पैर मारे थे और बेरहम मार-धाड़ की थी। मैंने आदेश दिया कि राजू को तो फांसी दे दी जाए और अम्बा से, जो धनवान् होने के कारण मशहूर है, उससे जुर्माना लिया जाए। इस तरह से एक लाख पन्द्रह हजार रुपए उससे वसूले गए। उन रुपयों के बारे में आदेश दिया गया कि उसे तोपखाने और दान के काम में खर्च कर दिया जाए।

६. सुजान राय भण्डारी के शब्दों में गुरु अरजन देव जी और अकबर की भेंट (खुलासतुत-तवारीख, पंजाबी अनु:, पृष्ठ ४३६ पर से)

जब अकबर लाहौर से दक्षिण की ओर गए तब नगर बटाला के पास पहुंच कर मालूम हुआ कि अचल गांव में मुसलमान फकीर और हिन्दू सन्यासी आपस में झगड़ रहे हैं। फकीर सन्यासियों के ऊपर भारू हो गए हैं . . . उनका मन्दिर गिरा दिया है। . . . (बादशाह) ने आदेश दिया की गिरे हुए मन्दिर को दोबारा बना दिया जाए। यहां से चल कर वे दरिया ब्यास को पार करके बाबा नानक के उत्तराधिकारी गुरु अरजन देव जी के स्थान पर पहुंचे और बाबा नानक की आध्यात्मिक बाणी सुन कर बहुत आनन्दित हुए।

श्री गुरु अरजन देव जी ने सम्मान और धन्यवाद के रूप में उचित सौगात पेश करके यह प्रार्थना की कि शाही फौज के ठहराव के कारण पंजाब में अनाज काफी महंगा हो गया है, इसलिए परगने का लगान बढ़ गया है। प्रजा इतना लगान नहीं दे सकेगी।

अकबर ने फिर माल के अफसरों को आदेश दिया की लगान का छठा हिस्सा माफ कर दिया जाए और अहलकारों को आदेश दिया कि प्रजा से लगान का केवल पांचवां/छठा हिस्सा लिया जाए और किसानों के साथ नरम व्यवहार अपनाया जाए, क्योंकि वे देश को स्थाप्ति और दृढ़ता देने के जिम्मेवार हैं।

*७. **Fr. Jerome Xavier** की **25 Sept. 1606** को लिखी ईबारत (चिट्ठी) **(Early European Accounts of the Sikhs,** पृष्ठ ४८-४९ से)*

When the prince (Khusro, son of Emperor Jahangir) was fleeing from Agra, on that road there was a pagan, called the guru, who was considered among the pagans like our Pope. He was supposed to be a holy man and honoured as such. And on account of his dignity and reputation, the prince visited him desirous of hearing a good prophecy from him. The Guru congratulated him for assuring sovereignty and applied three marks on his forehead. Although the Guru was a heathen, and the prince a Mussulman, yet he was glad in putting on the prince's forehead that pagan sign as a mark of good success in his enterprise, taking the prince as the son of a pagan mother. The prince received this sign on account of the wide reputation of the sanctity of the guru. The king came to know of this. Keeping the prince as a prisoner, he ordered the Guru to be brought before him and imprisoned him also.

Some pagans begged the king to release him, as he was their saint. At last it was settled that he should pay a fine 100,000 cruzados. This

(पृष्ठ ४५ का शेष)

गुरु नानक देव जी का आहार-दर्शन : आधुनिक परिप्रेक्ष्य

-डॉ. सुनीता शर्मा*

'आहार' शब्द व्याकरणिक दृष्टि से पुलिंग है। इसकी व्युत्पत्ति 'आङ्+हृ+धञ्' से हुई है जिसका अर्थ है—शरीर का रस, भोजन। 'आहार' शब्द का सामान्य अर्थ 'भोजन' द्रव्य से संबन्धित है। आहार जीवन का मूलाधार है। इससे बल, वर्ण, ओज एवं आरोग्य की सृष्टि एवं संरक्षा होती है। इसका सीधा सम्बंध स्वादेन्द्रिय से है और अपने उच्चतम अर्थ में यह सात्विकता से जुड़ा है। आचार्यों ने चार प्रकार के आहार माने हैं—चोष्यम् (चूसने वाला), भक्ष्यम् (चबाने वाला), भोज्यम् (निगलने वाला), लेह्यम् (चाटने वाला)। आधुनिक वैज्ञानिकों ने आहार के संतुलन को दृष्टिगत रखते हुए इसके छ: अवयव माने हैं—प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज, विटामिन तथा जल। आहार शरीर ही नहीं अपितु मन एवं आत्मा को भी पोषित करता है। इसे विचारों का निर्माता, भावनाओं का नियंत्रक और बुद्धि का उद्बोधक कहा जाता है। आचार्यों ने सम्पूर्ण मनुष्य-जगत को तीन गुणों में विभाजित किया है—सत्, रज, तम। हमारे साधकों एवं ज्ञानियों ने सात्विक आहार को मान्यता दी है।

भारत के पास विश्व की सबसे प्राचीन संस्कृति और आहारगत् मूल्य हैं। सामान्यत: आहार को भक्ष्य-अभक्ष्य, खाद्य-अखाद्य दो वर्गों में विभाजित किया है। इस देश में सदियों से बाह्य आक्रमणकारी अपनी संस्कृति को लेकर आते रहे हैं और कालांतर में उनकी संस्कृति भारतीय संस्कृति का ही अटूट अंग बन गई। आठवीं शताब्दी में मुहम्मद बिन कासिम, दसवीं शताब्दी में महमूद गजनवी तथा बारहवीं शताब्दी में शहाबुद्दीन मोहम्मद गौरी ने इस धरती पर कदम रखे। तेरहवीं शताब्दी में सुलतान इल्तुतमिश आया। चौदहवीं शताब्दी में खिलजी वंश व फिर मुगल वंश, सूरी वंश ने इस देश में सिंहासन संभाले। उनके आने से धीरे-धीरे वैदिक एवं इस्लाम संस्कृति परस्पर घुल-मिल गई। विदेशियों के इस जीवन-यापन से भारतीय खान-पान भी प्रभावित हुआ।

भारतीय समाज के जागरूक प्रहरी, निर्भीक संत, परम अवतारी पुरुष श्री गुरु नानक देव जी ने रूढ़ियों, अंधविश्वासों एवं बाह्याडम्बरों में डूबे हुए समाज में अपनी बाणी के द्वारा नई चेतना भरने का प्रयास किया। यह वो समय था जब मुस्लिम अपनी धार्मिक, सामाजिक तथा राजनैतिक संस्कृति को हर ओर से भारतीयों पर आरोपित कर रहे थे। ऐसे में श्री गुरु नानक देव जी ने अपने कृत्यों एवं वचनों से विस्मृत हो रही संस्कृति की गरिमा से लोगों को परिचित करवाया तथा निष्पक्ष होकर जीने का मार्ग दिखाया। उनकी पावन बाणी मनुष्य जन्म से लेकर उसके जीवन-यापन, उसके कृत्यों एवं समस्त जिज्ञासाओं का समाधान पुंज है। ऐसे में उन्होंने मनुष्य के जीवित रहने वाले आहार-दर्शन पर भी अपने विचार प्रसंगानुसार यत्र-तत्र दिए हैं। गुरु जी ने आत्मा के स्वास्थ्य के लिए जहां नाम-स्मरण पर बल दिया वहीं शारीरिक स्वास्थ्य के लिए उचित भोजन की चर्चा भी की।

श्री गुरु नानक देव जी की पावन बाणी

*प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, गुरु नानक अध्ययन विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर।

'सिध गोसटि' में सिद्ध लोहारीपा जब सिद्धों की दिनचर्या को श्रेष्ठ बताते हुए कहते हैं कि हम लोग वनों में रहते हैं, तीर्थों पर स्नान करते हैं, कन्दमूल का आहार करते हैं अत: हम निष्पाप हैं, इसके उत्तर में गुरु जी कहते हैं :

हाटी बाटी नीद न आवै पर घरि चितु न डोलाई ॥
बिनु नावै मनु टेक न टिकई नानक भूख न जाई ॥
हाटु पटणु घरु गुरू दिखाइआ सहजे सचु वापारो ॥
खंडित निद्रा अलप अहारं नानक ततु बीचारो ॥
(पन्ना ९३९)

गुरु जी इस पद में स्वयं कह रहे हैं कि मैं थोड़ा सोता हूं और अल्प आहार लेता हूं और तत्त्व (अकाल पुरख) का विचार करता हूं। भोजन की मात्रा तथा उसकी प्रकृति के आधार पर ही हमारे विचारों का जन्म होता है, इसलिए वे मानव के सम्मुख उसके आहार की चर्चा निम्नलिखित पंक्तियों में करते हैं :

—ऐसा दारू खाहि गवार ॥
जितु खाधै तेरे जाहि विकार ॥ (पन्ना १२५७)
—बिखु खाणा बिखु बोलणा बिखु की कार कमाइ ॥ (पन्ना १३३१)

गुरु जी ने इस बात पर बल दिया है कि हमें हर अवस्था में परमात्मा के चरणों में ध्यान लगाये रखना है, तभी तो शरीर के भीतर गया अन्न सुपाच्य बनता है, अन्यथा भगवान को भूल जाने पर भोजन भी रोग का कारण बनता है और व्यक्ति भी कुमार्ग पर चलते हैं, जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है :

मिठ रसु खाइ सु रोगि भरीजै कंद मूलि सुखु नाही ॥
नामु विसारि चलहि अन मारगि अंत कालि पछुताही ॥ (पन्ना ११५३)

ईश्वर को भूले हुए मानव को सजग करते हुए वे एक अन्य स्थान पर कहते हैं :

मिठा खाधा चिति न आवै कउड़तणु धाइ जाइ ॥
मिठा कउड़ा दोवै रोग ॥
नानक अंति विगुते भोग ॥ (पन्ना १२४३)

गुरु जी के अनुसार जिस व्यक्ति ने ईश्वर को भुला दिया है और विभिन्न रसों के भोग से जो रोग उसे घेर लेते हैं, उन्हें कोई वैद्य भी ठीक नहीं कर सकता, जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है :

खसमु विसारि कीए रस भोग ॥
तां तनि उठि खलोए रोग ॥
मन अंधे कउ मिलै सजाइ ॥
वैद न भोले दारू लाइ ॥ (पन्ना १२५६)

आक्रामक मुस्लिम लोग मांसाहारी थे और इस देश के ब्राह्मण तथा क्षत्रिय लोग उनकी चापलूसी करने के लिए उनके दरबार में स्थान पाने के लिए उनके जैसे वस्त्र पहनते तथा मांस खाते थे और अपने निज दायरे में अपने आपको शाकाहारी दर्शाते थे। उनके इस रूप को देखकर गुरु जी कहते हैं :

मथै टिका तेड़ि धोती कखाई ॥
हथि छुरी जगत कासाई ॥
नील वसत्र पहिरि होवहि परवाणु ॥
मलेछ धानु ले पूजहि पुराणु ॥
अभाखिआ का कुठा बकरा खाणा ॥
चउके उपरि किसै न जाणा ॥ (पन्ना ४७१-७२)

अनेक संस्कारों के उपलक्ष्य में ब्राह्मण मांस बनाते थे, जैसे कि जनेऊ संस्कार पर बकरे का मांस बनाया जाता, ऐसे लोगों को गुरु जी सजग करते कहते हैं :

तगु कपाहहु कतीऐ बाम्हणु वटे आइ ॥
कुहि बकरा रिंन्हि खाइआ सभु को आखै पाइ ॥
(पन्ना ४७१)

कुरुक्षेत्र में सूर्य-ग्रहण के अवसर पर जब ब्राह्मणों ने झगड़ा किया तो उस समय गुरु जी ने यह उपदेश दिया कि मनुष्य तो मांस का

पुतला है फिर निरर्थक झगड़े से क्या लाभ, जैसे:

मासहु निंमे मासहु जंमे हम मासै के भांडे ॥
गिआनु धिआनु कछु सूझै नाही चतुरु कहावै पांडे ॥ (पन्ना १२९०)

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु जी के आहार-दर्शन संबंधी निम्न पंक्तियां भी मिलती हैं :

एक जीअ कै जीआ खाही ॥
जलि तरती बूडी जल माही ॥ (पन्ना १२७५)

गुरु जी ने ये विचार जलचर जीवों के संदर्भ में कहे हैं कि जल में बड़े जीव छोटे जीवों को खाकर अपना पोषण करते हैं और जल में तैरने वाले जीव जल में ही डूब कर नष्ट हो जाते हैं।

श्री गुरु नानक देव जी ने यह स्पष्ट कहा है कि हर प्रकार के जीव के लिए खाने-पीने की व्यवस्था तो उस प्रभु ने की है, जैसे :

इकि मासहारी इकि त्रिणु खाहि ॥
इकना छतीह अंम्रित पाहि ॥
इकि मिटीआ महि मिटीआ खाहि ॥
इकि पउण सुमारी पउण सुमारि ॥
इकि निरंकारी नाम आधारि ॥
जीवै दाता मरै न कोइ ॥
नानक मुठे जाहि नाही मनि सोइ ॥
(पन्ना १४४)

आज के संदर्भ में यदि हम अपनी आहार-व्यवस्था की ओर ध्यान दें तो पता चलता है कि हम अल्प-आहार न लेकर बसायुक्त आहार लेते हैं और जीवन को सोते हुए ही नष्ट कर रहे हैं। पश्चिमी तथा चीनी भोज्य-पदार्थों और फास्ट-फूड ने हमारी आहार-प्रणाली को विकृत कर दिया है। नाम-स्मरण की तरफ हमारा ध्यान ही नहीं जाता या हम कहते हैं कि हमारे पास समय नहीं है। ऐसे मनुष्यों को सुचेत करने के लिए श्री गुरु नानक देव जी निम्नलिखित में कहते हैं :

किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥
जा मनि नाही सचा सोइ ॥
किआ मेवा किआ घिउ गुड़ु मिठा किआ मैदा किआ मासु ॥ . . .
नानक सचे नाम विणु सभे टोल विणासु ॥
(पन्ना १४२)

पर सतिगुरु के शिष्य आज भी गुरु के दर्शाये मार्ग पर चल रहे हैं। वे आत्मिक उद्धार में लगे हुए हैं। इसलिए अल्प मात्रा में आहार लेकर नाम-स्मरण में ही लगे रहते हैं और गुरु जी के निम्नलिखित वाक्यों को प्रासंगिक बनाते हैं :

अंम्रितु भोजनु नामु हरि रजि रजि जन खाहु ॥
सभि पदारथ पाईअनि सिमरणु सचु लाहु ॥
संत पिआरे पारब्रहम नानक हरि अगम अगाहु ॥ (पन्ना ५५६)

आज के युवा कई प्रकार के नशों में लिप्त हुए हैं, उन्हें इस बात को समझने की सुध ही नहीं है कि उनके जन्म का उद्देश्य क्या है जबकि गुरु जी कहते हैं :

भोजनु नामु निरंजन सारु ॥
परम हंसु सचु जोति अपार ॥
जह देखउ तह एकंकारु ॥ (पन्ना २२७)

अर्थात् हे मनुष्य! तू परमात्मा के नाम का भोजन कर क्योंकि नाम-स्मरण से ही तेरी मुक्ति संभव है।

आज के संदर्भ में श्री गुरु नानक देव जी के आहार-दर्शन की प्रासंगिकता और भी बढ़ गई है, क्योंकि हम इस तथ्य की अनदेखी कर रहे हैं कि पश्चिमी संस्कृति हमें किस ओर बहा ले जा रही है? गुरबाणी ही हमें उस बहाव से सही मार्ग की ओर ले जाती है। वे कहते हैं :

बाबा होरु खाणा खुसी खुआरु ॥
जितु खाधै तनु पीड़ीऐ मन महि चलहि विकार ॥ (पन्ना १६)

गुरु जी इन पावन वचनों में मनुष्य को

सजग कर रहे हैं कि जिस भोजन को खाने से शरीर पीड़ित होता हो और मन में विकार पैदा हो ऐसा भोजन तो सामान्य खुशी को भी नष्ट कर देता है, इसलिए मनुष्य को ऐसा भोजन त्याग देना चाहिए। मन को विकास की ओर ले जाने वाला भोजन तो गुरु-कृपा से ही प्राप्त होता है और वह भोजन तो ईश्वर के जहां से आया है, जैसे कि इन पंक्तियों का आशय है :

सचा अंम्रित नामु भोजनु आइआ ॥
गुरमती खाधा रजि तिनि सुखु पाइआ ॥
(पन्ना १५०)

गुरु जी की बाणी की प्रासंगिकता तभी हमारे जीवन में बनेगी यदि हम इसे मनसा, वाचा, कर्मणा द्वारा अपना लेते हैं। हमें गुरु जी द्वारा बताए गये दिव्य ज्ञान रूपी भोजन की जब प्राप्ति हो जाएगी तो हमारा जीवन भी सार्थक हो जाएगा। स्वयं गुरु जी के शबदों में :

भोजन गिआनु महा रसु मीठा ॥
जिनि चाखिआ तिनि दरसनु डीठा ॥ (पन्ना १०३२)

निष्कर्षत: गुरु जी का आहार-दर्शन सात्विकता पर बल देता है। वे अल्पाहार के समर्थक थे। आहार में वे वसायुक्त आहार का खण्डन करते हैं। उन्होंने ऐसे भोजन का समर्थन किया है जो आत्मा को ऊर्ध्वमुखी बनाने वाला हो। अत: श्री गुरु नानक देव जी के आहार-दर्शन को यदि मैं गुरु जी की एक पंक्ति में व्याख्यायित करना चाहूं तो वह है :

खंडित निद्रा अलप अहारं नानक ततु बीचारो ॥
(पन्ना ९३९)



गुरु अरजन देव जी का जीवन-वृत्तांत

(पृष्ठ २१ का शेष)

अपनी बेटी का विवाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी से करना चाहता था, परन्तु दिल्ली की संगत ने घमंडी चन्दू को घमंड से पूर्ण वचन अपने ब्राह्मण से कहते सुना कि तुम चौबारे की ईंट मोरी को लगा आए हो। संगत ने श्री गुरु अरजन देव जी को लिखा कि चंदू का रिश्ता न लें। यह स्वयं ऊंचा चौबारा बना है तथा आप को मोरी समान कहता है। सिखों की यह विनती मान कर सतिगुरु जी ने चंदू की पुत्री का रिश्ता लेने से इंकार कर दिया। अत: अपना अनादर हुआ समझ कर वह गुरु जी का जानी दुश्मन बन गया।

गुरु जी ढोंगियों के विरुद्ध थे। दिखावे से वास्तविकता नष्ट हो जाती है। जब मन प्रदर्शन में ही लगा रहे तो ईश्वर का ध्यान करना मुश्किल ही नहीं, असंभव भी है। भक्ति का सम्बंध तो सिर्फ हृदय से है।

ये गुरु जी की शहीदी के कुछ सामाजिक कारण थे, परन्तु जिस कारण जहांगीर को चंदू दीवान की ओर से उकसाया गया, वही था मुख्य कारण। सतिगुरु जी जहांगीर के पुत्र खुसरो को तथा उसके चार-पांच सौ आदमियों को लंगर में रोटी तथा शाही तख्त की प्राप्ति के लिए आशीर्वाद दिया, चूंकि गुरु जी का लंगर पक्षपात-रहित और सबके लिए सांझा होता है। खुसरो को लंगर से परशादा छकाना लंगर के नियमानुसार था तथा शरणागत को आशीर्वाद देना भी महापुरुषों की नीति के अनुसार एक साधारण-सी बात थी, जिसको जहांगीर ने क्रोधवश गलत ठहराया तथा गुरु जी को शहीद करने का आदेश दिया। गुरु जी २४ वर्ष, ९ मास और २१ दिवस तक गुरगद्दी पर विराजमान रहे। गुरु जी ने कुल मिलाकर ४३ वर्ष, १ मास तथा १५ दिवस तक संसार की यात्रा की।



भक्ति-मार्ग

*-डॉ. मनमीत कौर**

'भक्ति' शब्द 'भज्' धातु से बना है। 'भज्' का अर्थ सेवा करना होता है। इस प्रकार से भक्ति या सेवा के द्वारा ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने का नाम ही भक्ति-मार्ग है। भक्ति को जीवन-मुक्ति का साधन तथा मार्ग माना गया है।

भक्ति-योग का मुख्य तात्पर्य है—अनन्यभाव। परमात्मा के अतिरिक्त किसी दूसरे का भाव मन में न लाना ही अनन्यभाव कहलाता है। इसका तात्पर्य यह है कि जिसका चित्त किसी भी वस्तु में न लगकर निरन्तर अनन्य प्रेम से ईश्वर में लगा रहता है, वह ईश्वर के स्वरूप, नाम, गुण आदि का चिन्तन और स्मरण करते हुए ईश्वर को प्राप्त कर लेता है।

अनन्यचित्त होने के साथ-साथ शरणागति की भावना भी भक्ति के लिए आवश्यक है। ईश्वर को ही सर्वस्व समझना तथा उसको अपना स्वामी, रक्षक, हितैषी समझ कर सब प्रकार से उन पर निर्भर हो जाना, समस्त कर्मों में ममता, अभिमान, कामना आदि को त्याग कर ईश्वर की सेवा, श्रद्धा आदि सभी शरणागति के अन्तर्गत आते हैं।

भक्ति के विविध रूप माने जाते हैं। इनमें से दो भेद मुख्य हैं :

१. हेतुकी भक्ति

इसे सकाम भक्ति भी कहा जा सकता है, क्योंकि इसमें भक्त सप्रयोजन भक्ति करता है। यह भक्ति ईश्वर के लिए न होकर सांसारिक विषयों की प्राप्ति के लिए होती है। इस प्रकार की भक्ति से मुक्ति की प्राप्ति तो नहीं होती परन्तु अहेतुकी भक्ति के लिए मार्ग अवश्य प्रशस्त होता है। इसी कारण से इसे गौणी भक्ति भी कहा जाता है।

२. अहेतुकी भक्ति

यह सर्वोच्च भक्ति मानी जाती है। इसे पराभक्ति भी कहा जाता है। यह भक्ति के लिए भक्ति है, निष्प्रयोजन है, अत: यह भक्ति की पराकाष्ठा है। भक्त सब कुछ त्याग कर केवल ईश्वर की आराधना करता है अर्थात् पूर्ण निर्भरता।

भक्ति के दो प्रकार और भी माने गए हैं:

१. साधन भक्ति

२. परमा भक्ति

साधन भक्ति पहली अवस्था है। इस अवस्था में भक्त संसार से विमुख होकर ईश्वर की ओर उन्मुख होता है। वह शम, दम आदि साधनों से अपने मन को निर्मल बनाता है तथा विशुद्ध चित्त को ईश्वर में लगाता है। यह भक्ति मुख्यत: ज्ञान के स्वरूप से संबन्धित है। जब मनुष्य आध्यात्मिक अनुभूति के लिए विकलता का अनुभव करता है तब वह आत्मावलोकन की दिशा में अग्रसर होता है। यह आत्मावलोकन की अवस्था ईश्वर के स्वरूप की जानकारी देने में सक्षम सिद्ध होती है।

परमा भक्ति में साधक ईश्वर का दर्शन करता है तथा ईश्वर से एकाकारता का अनुभव

**विभागाध्यक्ष दर्शनशास्त्र, नवयुग कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजेंद्र नगर, लखनऊ-२२६०१४ (यू. पी.)*

करता है। यह 'साधन' भक्ति का प्रतिफल है। जैसे ही साधन भक्ति से मन शुद्ध हो जाता है वैसे ही भक्त ईश्वर का दर्शन प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार की भक्ति में भक्त ईश्वर को अपनी अन्तरात्मा के रूप में प्रत्यक्षीकरण करने लगता है और उसके मन में अनन्य प्रेम का विकास होता है। वह ईश्वर के स्वरूप चिन्तन में निरन्तर निमग्न रहता है तथा संसार के किसी भी विषय के प्रति आकर्षण का भाव अनुभव नहीं करता है।

भक्ति की पराकाष्ठा के रूप में प्रपत्ति को स्वीकार किया जाता है। भक्ति प्रारम्भिक अवस्था है, प्रपत्ति साध्य है। भक्ति में मुक्ति की कामना होती है। प्रपत्ति में भक्त ईश्वर के समक्ष पूर्ण समर्पण कर देता है। वास्तव में प्रपत्ति में ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों का समन्वय रहता है। प्रपत्ति शरणागत भक्ति है। प्रपत्ति के छः अंग माने गए हैं :

* आनुकूलस्य संकल्प अर्थात् ईश्वर के अनुकूल संकल्प विचार और कर्म करना।
* प्रतिकूलस्य वर्जनम् अर्थात् ईश्वर के प्रतिकूल विचार, संकल्प और कर्म न करना।
* रक्षिस्यतीति विश्वास अर्थात् ईश्वर की रक्षा में विश्वास करना।
* वरणं अर्थात् ईश्वर को ही एकमात्र पूज्य तथा आराध्य के रूप में स्वीकार करना।
* कार्पण्य अर्थात् ईश्वर के चरणों में ही शरण लेना।
* आत्म निक्षेप अर्थात् दीन भाव से ईश्वर में दृढ़ विश्वास के साथ शरणागति होना।

इस प्राकर से इन छः रूपों में भक्त जब ईश्वर की शरण ग्रहण करता है तो ईश्वर भक्त के आत्मसमर्पण तथा अनन्य प्रेम को देखकर प्रसन्न होते हैं तथा उसे मोक्ष प्रदान करते हैं।

आराध्य विषय की दृष्टि से भक्ति के दो रूप हैं :

१. प्रतीक भक्ति

२. प्रतिमा भक्ति

प्रतीक भक्ति से प्रतीकों के रूप में ईश्वर की पूजा की जाती है। प्राकृतिक वस्तुओं तथा शक्तियों को ईश्वर का प्रतीक मानकर ईश्वर की पूजा की जाती है। मूर्ति की पूजा प्रतिमा भक्ति है। प्रतिमा भक्ति में ईश्वर के रूप में स्थापित मूर्तियों या प्रतिमाओं की पूजा की जाती है। हमको यह स्पष्ट होना आवश्यक है कि गुरमति में प्रतिमा भक्ति स्वीकृत नहीं है।

सामान्य रूप से भक्ति के नौ साधन माने गए हैं, जिन्हें नवधा भक्ति कहा जाता है। ये हैं—अर्चना, वन्दना, दासता, सेवा, स्मरण, कीर्तन, श्रवण, सख्य-भाव तथा आत्म-निवेदन। भक्त की रुचि वैभिन्नता के आधार पर भक्ति के विविध रूप दिखायी देते हैं :

* संत-भाव : अर्थात् सर्वगुण सम्पन्न मानकर ईश्वर से बौद्धिक प्रेम करना।
* दास्य-भाव : अर्थात् ईश्वर के प्रति सेवा-भाव या ईश्वर को स्वामी तथा स्वयं को दास मानना।
* सख्य-भाव : अर्थात् ईश्वर को सखा या मित्र के रूप में स्वीकार करना।
* वात्सल्य-भाव : माता, पिता, पुत्र और पुत्री आदि रिश्तों के प्यार-भाव जैसा भक्ति-भाव।
* मातृभाव : अर्थात् भक्त द्वारा ईश्वर को माता-पिता के रूप में पूजना।
* माधुर्य-भाव : अर्थात् भक्त द्वारा ईश्वर को प्रियतम तथा स्वयं को प्रियतमा समझना।

भक्ति-मार्ग का अधिकारी कौन हो सकता है? इस सम्बंध में यह कहा जा सकता है कि जो क्रोध, काम, लोभ, मोह आदि विकारों पर

नियन्त्रण रखता है, जो वाह्य व आन्तरिक रूप से पवित्र हो। धैर्यवान, संतोषी व्यक्ति ही भक्ति-मार्ग का अनुसरण कर सकता है।

सरल, निष्कपट तथा शुद्ध हृदय वाला व्यक्ति ही भक्ति-मार्ग का अधिकारी हो सकता है। ईश्वर से प्रेम तथा अनुराग के लिए श्रद्धा एवं निष्ठा आवश्यक है। इसके बिना भक्ति-मार्ग पर नहीं चला जा सकता। भक्त को शिशु के समान सरल स्वभाव का होना चाहिए जो कि विश्वास तथा आस्था द्वारा ही सम्भव है। संदेह तथा कपट से युक्त व्यक्ति भक्ति-मार्ग का अधिकारी नहीं हो सकता।

भक्ति के लिए नैतिक सद्‌गुणों से युक्त व्यक्ति ही योग्य माना जाता है। क्षमा, दया, मैत्री, विनय, त्याग तथा परोपकार में संलग्न ही भक्ति-मार्ग पर चल सकता है।

भक्ति-मार्ग के लिए जाति, आयु, पुरुष या स्त्री होने आदि का कोई बंधन नहीं होता। नैतिक गुणों से युक्त गृहस्थ के अनुगामी भक्ति-मार्ग का अनुसरण कर सकते हैं। वे सांसारिक कार्यों को करते हुए भी परमात्मा के साथ आंतरिक रूप से स्वयं को जोड़ सकते हैं।

गुरमति मार्ग भक्ति का मार्ग है जिसमें नाम-सिमरन की प्रधानता है। इसके मूल में प्रवृत्ति मार्ग है, संसार का त्याग नहीं है। संसार में विचरण करते हुए, सांसारिक पदार्थों का सदुपयोग करते हुए उससे ऊपर अथवा निर्लेप रहने का उपदेश है। गुरमति में गृहस्थ जीवन को मान्यता दी गयी है। गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी पदार्थों के मोह से वैराग्य है :

अनदिनु कीरतनु केवल बख्यानु ॥
ग्रिहसत महि सोई निरबानु ॥ (पन्ना २८१)

नाम-सिमरन को विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है। सामान्य रूप से किसी वस्तु, स्थान या व्यक्ति को हम जिस संज्ञा से पुकारते हैं उसको 'नाम' कहा जाता है। किसी वस्तु के अस्तित्व को बताने के लिए उसके गुणों के अनुसार नाम दिया जाता है। मैकलोड के मत के अनुसार "नाम परमात्मा की सम्पूर्ण व्याख्या है तथा यही सत्य है।" (W. H. Mcleod, Guru Nanak and The Sikh Religion, p. 195) डॉ. सुरिंदर सिंघ (कोहली) के अनुसार "नाम को बीज मंत्र, गुरू का शबद या परमात्मा का नाम कहा जा सकता है।" (S.S. Kohli, Outlines of Sikh Thought, p. 94) डॉ. परशुराम चतुर्वेदी के अनुसार "सत् उसके अस्तित्व का सूचक है जो परम तत्व का बोध करवाने वाला माना जा सकता है तथा नाम उस अंश विशेष की ओर संकेत करता है जो अपने निजी अनुभव में आ चुका है। . . . नाम में या इसके बाहर कोई वस्तु ऐसी नहीं है जिसका सम्बंध नाम के साथ न हो।" *(परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृष्ठ ४१४)* प्रो. राम सिंघ का विचार है कि नाम का अभ्यास एक तरफ तो साधक का सुधार कर देता है तथा दूसरी ओर अहंकार व विकारों को मनुष्य के अंतर से निकालता है तथा वहीं तीसरी ओर निरंकार के नये-नये गुणों का अनुभव करवाता है। (राम सिंघ, गुरु नानक दा रहस्सवाद, पृष्ठ २७)

प्रभु के नाम-सिमरन को 'पारिजात' या 'कल्पवृक्ष' कहा गया है जो समस्त मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला माना जाता है अर्थात् सिमरन से व्यक्ति में अपनी मनोकामनाओं की पूर्ति करने की सामर्थ्य आ जाती है। ईश्वर का सिमरन समस्त मनोरथों को पूर्ण करने वाली 'कामधेनु' के समान है। इससे स्पष्ट है कि मनुष्य में ऐसी संभावनाएं प्रभु के नाम-सिमरन

द्वारा ही प्राप्त होती हैं :

पारजातु इहु हरि को नाम ॥
कामधेन हरि हरि गुण गाम ॥ (पन्ना २६५)

जिस प्रकार से बीज को उगने के लिए अनुकूल वातावरण की आवश्यकता होती है अर्थात् वह योग्य भूमि पर ही उगता है, उसी प्रकार से प्रभु के नाम-सिमरन के लिए भी अनुकूल शख्सियत के रूप में गुरमुख व्यक्ति को स्वीकार किया गया है :

नाम तुलि कछु अवरु न होइ ॥
नानक गुरमुखि नामु पावै जनु कोइ ॥
(पन्ना २६५)

मन की एकाग्रता तथा सच्चे प्रेम के बिना वास्तव में सिमरन नहीं हो सकता। सिमरन का उद्देश्य ही है कि मनुष्य का चित्त शांत हो तथा सांसारिक कार्यों को करते हुए भी वह आंतरिक रूप से परमात्मा से जुड़ जाए। इसके द्वारा व्यक्ति में समानता का भाव जागृत होता है क्योंकि ईश्वर सब में दृष्टिगोचर होता है। जहां विपरीत परिस्थितियों में माता, पिता, पुत्र आदि कोई भी सहायक नहीं होता, वहां प्रभु-नाम का सिमरन ही व्यक्ति के समस्त दुखों का नाश करता है :

जह मात पिता सुत मीत न भाई ॥
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई ॥ . . .
जह मुसकल होवै अति भारी ॥
हरि को नामु खिन माहि उधारी ॥
(पन्ना २६४)

दास भावना के साथ प्रभु की आराधना को भी गुरमति में उत्तम स्थान दिया गया है:

आतम रामु तिसु नदरी आइआ ॥
दास दसंतण भाइ तिनि पाइआ ॥
सदा निकटि निकटि हरि जानु ॥
सो दासु दरगह परवानु ॥ (पन्ना २७५)

सेवा को भक्ति का मूल स्रोत कहा गया है। सेवा के बिना भक्ति नहीं हो सकती, परन्तु सेवा का अवसर भी उसको ही प्राप्त होता है जिस पर ईश्वर की कृपा होती है :

उन की सेवा सोई लागै ॥
जिस नो क्रिपा करहि बडभागै ॥ (पन्ना २८२)

ईश्वर की सेवा के लिए उसके प्रति समर्पण की भावना का होना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा साधक ही ईश्वर को प्राप्त कर पाता है :

भगवंत की टहल करै नित नीति ॥
मनु तनु अरपै बिसन परीति ॥
हरि के चरन हिरदै बसावै ॥
नानक ऐसा भगउती भगवंत कउ पावै ॥
(पन्ना २७४)

ईश्वर की भक्ति में लीन व्यक्ति के लिए निष्काम सेवा को श्रेष्ठ माना गया है, क्योंकि इसके द्वारा ही सेवक सेवा करता हुआ ईश्वर को प्राप्त कर लेता है :

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

जो तन व मन से प्रभु की भक्ति में लीन रहता है तथा स्वयं के साथ-साथ दूसरों को भी इसकी प्रेरणा देता है, वह उत्तम पदवी को प्राप्त कर लेता है :

काहू फल की इछा नही बाछै ॥
केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥ . . .
आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ॥
नानक ओहु बैसनो परम गति पावै ॥
(पन्ना २७४)

जो मनुष्य परमात्मा के गुणों को गायन करता है, वह ईश्वर की कृपा का पात्र बनता है तथा उत्तम फल की प्राप्ति करता है :

गुन गोबिद कीरतनु जनु गावै ॥
गुर प्रसादि नानक फलु पावै ॥ (पन्ना २८५)

अपने जीवन को विकारों से दूर रखने के साधन के रूप में कीर्तन को भी भक्ति का विशेष साधन माना गया है :

अंम्रित बचन हरि के गुन गाउ ॥
प्रान तरन का इहै सुआउ ॥ (पन्ना २९३)

ईश्वर के चरणों को अपने हृदय में श्रद्धापूर्वक याद करने वाले भक्तों की चर्चा भी गुरमति में है :

अनिक भगत बंदन नित करहि ॥
चरम कमल हिरदै सिमरहि ॥ (पन्ना २८७)

अरदास को भक्ति का एक प्रमुख साधन माना गया है। अरदास द्वारा ईश्वर को माता, पिता, स्वामी आदि का रूप बनाकर आत्म-समर्पण का भाव जागृत होता है :

तू ठाकुरु तुम पहि अरदासि ॥
जीउ पिंडु सभु तेरी रासि ॥
तुम मात पिता हम बारिक तेरे ॥
तुमरी क्रिपा महि सूख घनेरे ॥ (पन्ना २६८)

अरदास द्वारा अहंकार की निवृत्ति होती है तथा मन में विनम्रता आती है। दीन-भावना के साथ अरदास करने से प्रभु की कृपा प्राप्त होती है तथा मनुष्य संसार-सागर से पार हो जाता है :

करतार करुणा मै दीनु बेनती करै ॥
नानक तुमरी किरपा तरै ॥ (पन्ना २६७)

साधसंगति के द्वारा भी भक्ति की प्राप्ति होती है। संगति से तात्पर्य होता है—मेल-मिलाप और साधसंगति से तात्पर्य है—श्रेष्ठ व्यक्तियों का मेल-मिलाप। जैसे बीयाबान जंगल में भटके हुए को मार्ग मिल जाता है उसी प्रकार से साधसंगति के द्वारा आत्मिक प्रकाश होता है :

जिउ महा उदिआन महि मारगु पावै ॥
तिउ साधू संगि मिलि जोति प्रगटावै ॥
(पन्ना २८२)

साध की संगति से अहंकार समाप्त होता है तथा उत्तम ज्ञान प्रकट होता है अर्थात् बुद्धि निर्मल हो जाती है :

साध कै संगि मिटै अभिमानु ॥
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ॥ (पन्ना २७१)

इससे पांचों विकार वश में आ जाते हैं, किसी से भी वैर की भावना नहीं रह जाती, क्योंकि प्रत्येक में उसे प्रभु का रूप ही दिखायी देता है। इस प्रकार से आध्यात्मिक उच्चता की प्राप्ति होती है :

साधसंगि किस सिउ नही बैरु ॥
साध कै संगि न बीगा पैरु ॥
साध कै संगि नाही को मंदा ॥
साधसंगि जाने परमानंदा ॥ (पन्ना २७१)

प्रभु-भक्ति के लिए एक ढंग जिह्वा द्वारा सिमरन करना बताया गया है। इसके लिए किसी विशेष समय, स्थान या स्थिति की आवश्यकता नहीं होती बल्कि साधक जब, जिस स्थिति में तथा जिस भी स्थान पर हो, वह आठों पहर सिमरन कर सकता है :

आल जंजाल बिकार ते रहते ॥
राम नाम सुनि रसना कहते ॥ (पन्ना २९५)

श्वास-श्वास प्रभु-सिमरन को भी भक्ति का एक साधन माना गया है। जिह्वा या रसना द्वारा सिमरन बहिर्मुखी होता है, जबकि श्वास-श्वास सिमरन अन्तर्मुखी होता है अर्थात् तब इसकी गति श्वासों के साथ जुड़ जाती है :

प्रभ की उसतति करहु दिनु राति ॥
तिसहि धिआवहु सासि गिरासि ॥ (पन्ना २८०)

लिव जाप को भी भक्ति का साधन माना गया है। इसका तात्पर्य है एकाकारता या लीनता। इसमें मन की एकाग्रता होती है तथा जीवात्मा परमात्मा में लीन हो जाती है। यह सिमरन की सर्वश्रेष्ठ अवस्था है। इस अवस्था

में चित्त-वृत्तियों का पूर्ण रूप से दमन हो जाता है :

परे सरनि आन सभ तिआगि ॥
अंतरि प्रगास अनदिनु लिव लागि ॥
(पन्ना २८९)

जो मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त कर लेता है उसे ईश्वर का ज्ञान हो जाता है तथा दुख, दर्द व भय मन से दूर हो जाता है :

मनि तनि नामु जपहु लिव लाइ ॥
दूखु दरदु मन ते भउ जाइ ॥ (पन्ना २९३)

भक्ति को मुक्ति का साधन माना गया है। इसके द्वारा सहजावस्था, ब्रह्म-ज्ञान व शाश्वत आनंद की प्राप्ति होती है :

ऐसा नामु मन सदा धिआईऐ ॥
नानक गुरमुखि परम गति पाईऐ ॥
(पन्ना २६४)

प्राचीन भारतीय साधना पद्धति में तीन मार्गों का उल्लेख प्राप्त होता है—ज्ञान मार्ग, कर्म मार्ग तथा भक्ति मार्ग। मानव बौद्धिकता के विकास के फलस्वरूप जीव के दुखों का कारण अज्ञानता या अविद्या माना गया है। इन दुखों से छुटकारा पाने के लिए ज्ञान की प्राप्ति अति आवश्यक मानी गयी है। गुरमति में भी ज्ञान को उच्च स्थान प्राप्त है, क्योंकि मन अज्ञानता के कारण विचलित होता है। ज्ञान के द्वारा ही इसे वश में किया जा सकता है। ज्ञान के द्वारा ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों का दमन सम्भव है। तप, योग, समाधि, ध्यान की अपेक्षा ज्ञान को श्रेष्ठ माना गया है:

बिदिआ तपु जोगु प्रभ धिआनु ॥
गिआनु स्रेसट ऊतम इसनानु ॥ (पन्ना २९५)

गुरमति में योग अभ्यास का प्रबलता से खण्डन किया गया है। यदि कोई व्यक्ति अपने सभी कार्यों को छोड़कर जंगलों में घूमता रहे, धर्म के विभिन्न कर्मकाण्ड करता रहे, दान-पुण्य करे, अपने शरीर को कष्ट देकर व्रतों का आचरण करे तो भी उसको शांति की प्राप्ति नहीं हो सकती :

जोग अभिआस करम ध्रम किरिआ ॥
सगल तिआगि बन मधे फिरिआ ॥
अनिक प्रकार कीए बहु जतना ॥
पुंन दान होमे बहु रतना ॥
सरीरु कटाइ होमै करि राती ॥
वरत नेम करै बहु भाती ॥ (पन्ना २६५)

गुरमति में साधना के कठिन मार्गों का खण्डन किया गया है :

निउली करम करै बहु आसन ॥
जैन मारग संजम अति साधन ॥ (पन्ना २६५)

भारतीय परम्परा में कर्म-मार्ग को भी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इन कर्मों को ही आवागमन का मूल कारण माना गया है। मनुष्य भव-चक्र में कर्मों के बंधन के कारण ही पड़ता है। कर्म दो प्रकार के होते हैं :

१. सकाम कर्म

ये वो कर्म होते हैं जिन्हें फल की इच्छा के कारण किया जाता है। इन कर्मों के संस्कार अंत:करण से जुड़े रहते हैं। अत: समय-समय पर वासनाओं सहित प्रबल हो जाते हैं। इन्हीं संस्कारों के अधीन ही मनुष्य भव-चक्र में पड़ा रहता है। मध्य युग में यज्ञ, पूजा, पाठ, तीर्थ-गमन, तप, मूर्ति-पूजा आदि कर्म सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति या मुक्ति को ध्यान में रख कर किए जाते थे। गुरमति में ऐसे कर्म-काण्डों को अहंकार का कारण माना गया है और इनका स्पष्ट शब्दों में खण्डन किया गया है। ऐसे कर्मों को करना व्यर्थ माना गया है :

कोटि करम करै हउ धारे ॥
स्रमु पावै सगले बिरथारे ॥

अनिक तपसिआ करे अहंकार ॥
नरक सुरग फिरि फिरि अवतार ॥ (पन्ना २७८)

२. निष्काम कर्म

ये वो कर्म हैं जो चित्त की शुद्धि के लिए तथा फल की इच्छा त्याग कर किए जाते हैं। ऐसे कर्मों को आध्यात्मिक कर्म भी कहा जाता है। सुखमनी साहिब में निष्काम कर्म को मान्यता दी गयी है। फल की इच्छा का पूर्ण रूप से त्याग करने की प्रेरणा बार-बार दी गयी है :

करम करत होवै निहकरम ॥
तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥ (पन्ना २७४)

कर्म तथा फल दोनों को ईश्वर को समर्पित करते हुए जीवन व्यतीत करने से चौगुने आनंद की प्राप्ति होती है :

जिस की बसतु तिसु आगै राखै ॥
प्रभ की आगिआ मानै माथै ॥
उस ते चउगुन करै निहालु ॥
नानक साहिबु सदा दइआलु ॥ (पन्ना २६८)

अशुभ कर्मों को पशुओं के आचरण के समान माना गया है। यह कर्म वाह्य तथा दिखावटी होते हैं तथा माया, मोह व अहंकार आदि के अधीन होकर किए जाते हैं। इन कर्मों के मूल में छिपी दुर्भावनाओं के कारण ही ये कर्म अशुभ कहलाते हैं :

करतूति पसू की मानस जाति ॥
लोक पचारा करै दिनु राति ॥
बाहरि भेख अंतरि मलु माइआ ॥
छपसि नाहि कछु करै छपाइआ ॥
बाहरि गिआन धिआन इसनान ॥
अंतरि बिआपै लोभु सुआनु ॥ (पन्ना २६७)

इस प्रकार से सामान्यतया ज्ञान-मार्ग, कर्म-मार्ग तथा भक्ति-मार्ग सर्वश्रेष्ठ मार्ग माना जाता है। यह अवश्य है कि ज्ञान तथा कर्म के द्वारा भक्ति-मार्ग में सहायता प्राप्त होती है, क्योंकि जब तक किसी विषय का ज्ञान नहीं होता तब तक व्यक्ति उसके अनुसार आचरण भी नहीं कर सकता। सांसारिक विषयों की वास्तविकता का ज्ञान होने पर ही परमात्मा के प्रति भक्ति सम्भव है।

भक्ति-मार्ग भावनाओं को सघन बनाकर ईश्वर को पा लेने का मार्ग है। भावनाओं में ऐसी शक्ति होती है कि वे मनुष्य में निहित शक्तियों को जागरूक कर सक्रिय कर देती हैं। अत: तार्किक रूप से संभावना तो स्पष्ट हो जाती है कि इन्हें प्रबल रूप में सक्रिय बनाने से ईश्वर की प्राप्ति भी संभव है। साधारण भावनाओं को प्रबल संवेगात्मक अनुभूतियों में परिणित किया जा सकता है, अत: साधारण प्रेम के भाव को परम भक्ति में परिणित किया जा सकता है, ईश्वरीय प्रेम में परिणित किया जा सकता है। यही भक्ति-मार्ग का वैचारिक आधार है। प्रेम या भक्ति मानव-स्वभाव के सहज अंश हैं। अंतर यही है कि प्रेम के सामान्य उदाहरणों में प्रेम का विषय सीमित वस्तुएं होती हैं, जिनमें स्थायित्व नहीं होता है, जो अंतत: सत् भी नहीं हैं। इस प्रकार का प्रेम वस्तुत: शुद्ध प्रेम न होकर आकर्षण है, आसक्ति है। भक्ति-मार्ग शुद्ध प्रेम का मार्ग है, जिसमें जिससे प्रेम है वह कोई सीमित वस्तु नहीं है बल्कि स्वयं परमेश्वर है। इस प्रकार के प्रेम में सर्वप्रेम निहित है, हर वस्तु तथा हर तत्व के लिए प्रेम निहित है, क्योंकि इस सब कुछ का एकमात्र आधार ईश्वर के प्रति प्रेम है। भक्ति-मार्ग मात्र भक्ति से ईश्वर-प्राप्ति का मार्ग है।



सुधारवादी संत भक्त कबीर जी

-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल*

भक्त कबीर जी ने कहा, अपने-अपने विश्वास लेकर एक दूसरे से उलझ पड़ना ठीक नहीं है। भक्त कबीर जी ने बिना किसी संकोच के धर्मों के बीच फैले कट्टरवाद का साहस के साथ विरोध करते हुये धर्म के उन तत्वों को उभारा जिससे एक-दूसरे को समझने में आसानी हो और भिन्नता के बीच एकता स्थापित हो सके। भक्त कबीर जी के विचार समन्वयवादी थे। वे चाहते थे कि सब मिलजुल कर रहें। जहां कहीं उन्हें पाखंड या आडंबर दिखता वे बिना किसी हिचक के उसे सुधारने के लिये कहते। वे एक साहसी सुधारवादी संत थे।

आज जब लोग छोटी-छोटी बातों को लेकर लड़ रहे हैं तब उनकी बाणी कहती है, "क्या रखा है मतभेद में, तनाव में, एक-दूसरे का खून बहाने में? सभी से समन्वय करके चलो। एक-दूसरे के प्रतीक और विश्वास का आदर-सम्मान करो, इसी में भलाई है। अगर सभी एक-दूसरे को छोटा और कमजोर करने का प्रयास करेंगे तो सभी तबाह हो जायेंगे। बहुत लड़ लिया एक छोटे से स्थल के लिये, छोटी-छोटी बातों के लिये, अब मिल कर रहने का प्रयास करो।"

भक्त कबीर जी हठ छोड़कर सबको जोड़ने की बात कहते हैं। वे मिथ्या भेदभाव, ऊंच-नीच, अहंकार, लोभ, लालच का सशक्त ढंग से विरोध करते हैं। आज जब लोग भौतिकवादी चिंतन में डूबे हैं, लोभी-लालची होकर भोगवादी बन रहे हैं, ऐसे में व्यक्ति को सही व्यक्ति बनाने के लिये भक्त कबीर जी की बाणी आज भी प्रासंगिक है। सबके साथ सहृदयता, मानवीयता का व्यवहार करना सीखना चाहिए। हम किसी भी स्थिति में लोभ-लालच व अहंकारवश दूसरों के अधिकारों का हनन न करें। दूसरों के धन, पद और प्रभाव को बलपूर्वक छीनने का प्रयास न करें, यही समझदारी हमें महान बनाती है।

लोगों ने भौतिक साधनों को ही सर्वोपरि मान लिया है। यह मिथ्या धारणा है, भौतिक साधन जो न्याय नीति के आधार पर मेहनत से इकट्ठे किये जाते हैं वे ही सच्ची सुख-शांति देते हैं। बलपूर्वक दूसरे से छीन कर, चालाकी करके जो साधन जोड़े जाते हैं उनसे न स्वयं का भला होता है न संतति का। भक्त कबीर जी कहते हैं कि जब मरी खाल की धोंकनी लोहे को भस्म कर देती हैं तो फिर जिन्दा सांसों की हाय से हमारा भला नहीं हो सकता, अत: हमें किसी को सताना नहीं चाहिए। सबके प्रति सद्भाव रखने पर ही सच्ची सुख-शांति मिल सकती है। परिश्रमपूर्वक जो काम किया है उसी में आनंद लो। भक्त कबीर जी कहते हैं :

कबीरा जहा गिआनु तह धरमु है जहा झूठु तह पापु ॥
जहा लोभु तह कालु है जहा खिमा तह आपि ॥
(पन्ना १३७२)

अर्थात् जो हमारे साधन हैं उसी में आनंद

**अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)*

लेने का प्रयास करो, दूसरों के साधन देखकर ललचाओ मत। जो दूसरों का पद-वैभव देखकर विचलित नहीं होता वही सच्चे अर्थों में शांति प्राप्त करता है।

जिन साधनों में दूसरों की हाय लगी है, अमुख हमसे चालाकी, धूर्तता, छल-प्रपंच करके ले गया है, शिकायत जुड़ी है, वे साधन हमें कष्ट-कठिनाई देते हैं। ऐसे साधनों का त्याग करके परिश्रम की कमाई को महत्व दें। तभी स्वयं का एवं परिवार का भला होगा। दुनिया के रंगमंच पर कई ऐसे लोग देखे जा सकते हैं जिन्होंने अनीतिपूर्वक बेहिसाब सम्पत्ति कमाई है, तब भी उन्हें मानसिक आत्मिक सुख-शांति नहीं मिल पाई। एक न एक परेशानी लगी रहती है जिसे दूर करते-करते वे परेशान रहते हैं। अनीति का वैभव देखकर दूसरे कहते हैं—देखा, चालाकी, बदमाशी, मिलावट, घूसखोरी से कितना जोड़ लिया! हम अनीतिपूर्वक, अर्जित साधनों का त्याग करके न्याय-नीति की कमाई को ग्रहण करने का साहस करें।

हम सुख के लिये साधनों को एकत्रित करें तो साथ में साधनों की पवित्रता पर भी ध्यान दें। साधनों की पवित्रता के अभाव में सुख-शांति हमसे कोसों दूर है और रहेगी। किसी पड़ोसी की थाली छीनकर उस भोजन से हम सुख-शांति अनुभव नहीं कर सकते। अगर सुख-शांति चाहिए तो साधनों की पवित्रता पर ध्यान देना ही पड़ेगा। श्रम निष्ठा के प्रति समर्पण करना ही होगा।



कविता

पर्यावरण

छा गयी है धुंध, अब मौसम बदलना चाहिये।
फट गयीं ओजोन परतें, अब संभलना चाहिये।
कुछ सबक इतिहास से भी, हमको लेना चाहिये।
कट गये हैं वन, उन्हें फिर से लगाना चाहिये।
कट गए जो पेड़-पौधे श्राप हमको दे गये,
धरती करे पुकार बादल बरसाना चाहिये।
बीज बोयें, पौध रोपें और सुरक्षा भी करें,
विश्व के कण-कण को, हरियाली से ढकना चाहिये।
वायुमंडल शुद्ध हो तो प्रकृति सब का साथ दे,
गंध को दुर्गन्ध बनने से बचाना चाहिये।
वायुमंडल शुद्ध, सुरभित गंध, परिमल औषधि,
नारियल, चंदन, वनस्पति, दे रही धरती हमें,
मौसमी फल-फूल, सब्जी, प्रकृति हमको दे रही,
दुष्ट बंदर-नजरों से इनको बचाना चाहिये।
पौधे जो उगते हैं अपने आप धरती पर सदा,
उनके अस्तित्व से नहीं अंजान होना चाहिये।
ये वनस्पति व्यर्थ न हो, सोचना है अब हमें,
एक धन्वंतरि हमारे पास होना चाहिये।
स्वच्छ जल की है जरूरत, मेघ हमको दे रहे,
जंगलों को आग लगने से बचाना चाहिये।
सप्तसुर में गुनगुनाती पवन बहती आ रही,
इन हवाओं को दूषित होने से बचाना चाहिये।
ढेर बारूदी सुरंगों के, रोक सको तो रोक लो,
सुरभित हवा का चहुं ओर, मौजूद होना चाहिये।
मीठे मेवों, अन्न, फल और शहद के भंडार हों,
रोग, दुख-दारिद्र दुनिया से भगाना चाहिये।
यदि नहीं करते हम ऐसा, पीढ़ियां पछतायेंगी,
इस धरा पर हर तरफ विकलांगता ही दिखलायेगी,
एक दिन वह आयेगा जब सभ्यता मिट जायेगी,
इसलिये पर्यावरण को शुद्ध बनाना चाहिये।

*****श्रीमती शैल वर्मा, ४८/८, सागर सदन, बभनगांवा, गांधी नगर, पुलिस चौकी के पीछे, बस्ती-२८२००१

पंजाब का गौरव : महाराजा रणजीत सिंघ

-डॉ. अविनाश शर्मा*

अहमदशाह अब्दाली के अंतिम आक्रमण के पश्चात सतलुज दरिया के आर-पार रहने वाले सिख सरदारों ने अपने-अपने क्षेत्रों में अपने समूहों के साथ स्वतंत्र रूप से राज्य-कार्य करना आरंभ कर दिया था। बाद में ये क्षेत्र 'मिसल' कहलाने लगे। 'मिसल' शब्द अरबी शब्द है जिसका अर्थ है 'बराबर' अथवा मिलता-जुलता एक जैसा। जे. डी. कनिंघम ने इन मिसलों को एक धर्म तांत्रिक, रजवाड़ाशाही का समूह कहा है। इन मिसलों के सरदारों में धर्म एवं जाति के आधार पर कई मतभेद थे। इसलिए शत्रुओं के साथ लड़ने के लिए ये सरदार कभी भी एक झंडे के तले इकट्ठे नहीं हो सके और आपस में लड़ते-झगड़ते भी रहे।

१७९० ई. में महाराजा रणजीत सिंघ ने शुक्रचक्किया मिसल की बागडोर सम्भाली थी। शुक्रचक्किया मिसल के अधीन मिसल का गुजरात, सियालकोट, लाहौर तथा अमृतसर जिलों पर नियंत्रण था। महाराजा रणजीत सिंघ की शादी घनई मिसल की मुखिया सरदारनी सदा कौर की पुत्री बीबी महताब कौर के साथ हुई। इस प्रकार वे मिसलों के सरदार बन गये। महाराजा रणजीत सिंघ ने अपनी सास बीबी सदा कौर के दिशा-निर्देशों पर लाहौर पर आक्रमण कर दिया और लाहौर पर अधिकार किया। लाहौर विजय ने महाराजा रणजीत सिंघ की स्थिति को और अधिक सुदृढ़ बना दिया। लाहौर में अपनी धाक जमाने के पश्चात महाराजा ने अपने पड़ोसी सरदारों की जमीन एवं सम्पत्ति अपने अधीन करने की एक बड़ी योजना बनाने के लिए सेना संगठित की। इसमें कोई शक नहीं कि उन्नीसवीं शताब्दी के आरंभ में अपने मन्तव्य की पूर्ति में उन्हें शानदार सफलता प्राप्त हुई। १८०१ ई. में उन्हें महाराजा की उपाधि से विभूषित किया गया किन्तु उन्होंने एक आदेश दिया कि भविष्य में उन्हें 'सरकार' के नाम से पुकारा जाये। यह शब्द उनके देहांत के पश्चात भी प्रचलित रहा।

शताब्दियों से पंजाब विदेशी आक्रमणकारियों के लिए प्रवेश-द्वार रहा है। यहां के वीरों ने विदेशियों के प्रहारों को अपनी छाती पर झेला है। कभी वे उन्हें पराजित कर अपनी सीमाओं के बाहर खदेड़ देते और कभी उनके द्वारा स्थापित होने वाले राज्यों की नींव बनते। पंजाब का अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। महाराजा रणजीत सिंघ पंजाब के ऐसे प्रथम शासक थे जिन्होंने पंजाब को दिल्ली के शासकों से मुक्ति दिलाई। इस से पूर्व श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने पंजाबियों में साहस, स्वाभिमान, सम्मान एवं स्वतंत्रता की भावना को जागृत कर दिया था। महाराजा रणजीत सिंघ ने गुरु जी के आदर्शों को यथार्थ रूप देकर इतिहास को नया मोड़ दे दिया। महाराजा रणजीत सिंघ ने अपनी सूझ-बूझ एवं कुशल शासन व्यवस्था से पंजाब पर चालीस वर्ष तक राज्य किया और पंजाब को सम्पूर्ण देश का दर्जा दिया। इसीलिए इतिहासकार

*१२०५, अर्बन अस्टेट, फेज-१, जालंधर-१४४०२२

महाराजा रणजीत सिंघ को स्वतंत्र पंजाब का प्रथम शासक मानते हैं।

महाराजा रणजीत सिंघ पंजाबियत के प्रतीक हैं। पंजाबियत बहुधर्मी समाज की देन है। महाराजा रणजीत सिंघ से पूर्व पंजाब में धर्मों के बीच सह-अस्तित्व की भावना पूर्ण रूप से नष्ट हो चुकी थी। आक्रमणकारियों का धर्म दूसरे धर्मों को मानने वाले लोगों के लिए भय और आतंक बन गया था। किन्तु महाराजा रणजीत सिंघ ने सभी धर्मों को सम्मान देते हुए अपनी राज्य-व्यवस्था को धर्म-निरपेक्ष सिद्धांतों पर चलाया, जिससे समाज में सामंजस्य बढ़ा और धर्मों एवं सम्प्रदायों की दीवारें टूटने लगीं। समाज में भाईचारे की भावना विकसित होने लगी। महाराजा रणजीत सिंघ ने पंजाब के लिए जो लड़ाइयां लड़ीं उनमें सभी पंजाबियों ने योगदान दिया। महाराजा रणजीत सिंघ की धर्म-निरपेक्षता न केवल पंजाबियत बल्कि मानवता का मूल-मंत्र है। महाराजा रणजीत सिंघ ने यदि गुरुद्वारों के नाम जागीरें लगाईं तो मस्जिदों एवं मंदिरों के नाम भी जमीनें लगाईं। यदि गुरुद्वारे बनवाए तो मस्जिदों एवं मंदिरों का निर्माण भी करवाया।

महाराजा रणजीत सिंघ के काल में साहित्य एवं ललित कलाओं का खूब विकास हुआ। महाराजा ने समाज में शांति एवं सुव्यवस्था को लाकर साहित्य के लिए सुखद वातावरण बनाया। इस वातावरण में लिखित साहित्य शुद्ध पंजाबी साहित्य है। इस काल में किस्सा, वारें, जंगनामे तथा अन्य कई प्रकार का साहित्य रचा गया। महाराजा कवियों को संरक्षण दिया करते थे। हाशम महाराजा रणजीत सिंघ का दरबारी कवि था। उसके निर्वाह के लिए महाराजा ने उसके नाम एक जागीर लगाई हुई थी। महाराजा की देखा-देखी अन्य दरबारी तथा जागीरदार भी कवियों और लेखकों को संरक्षण देते थे। अहमद यार, कादर यार एवं शाह मुहम्मद जैसे कवि भी दरबार के संरक्षण में रह कर अपनी साहित्य रचना में मग्न थे। ब्रज भाषा के कवियों में गोपाल दास एवं गंगा राम के नाम उल्लेखनीय हैं। गुरमुखी लिपि में ब्रज भाषा का साहित्य प्रचुर मात्रा में लिखा गया।

महाराजा रणजीत सिंघ की सहायता एवं उत्साह से राज्य में चित्रकला एवं वास्तु कला का बहुत विकास हुआ। वास्तु कला में हिन्दू एवं मुसलमान वास्तु कला का मिश्रण करके नई वास्तु कला को जन्म दिया। यह शैली पंजाब की शैली थी और पंजाबियत को अभिव्यक्त करने वाली थी।

चित्रकला के क्षेत्र में कांगड़ा शैली अपना कोई सानी नहीं रखती। इस शैली में बने चित्र भारतीय चित्रकला के कोष का बहुमूल्य अंश हैं। तब कांगड़ा महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य का अंग था।

संगीत के क्षेत्र में सिख गुरु साहिबान द्वारा प्रारंभ की गई कीर्तन परम्परा और विकसित हुई। सूफियों के डेरों में पनपी कवाली परम्परा को विकसित होने का पूर्ण अवसर मिला।

महाराजा रणजीत सिंघ ने अपनी प्रजा की आर्थिक दशा सुधारने के लिए जो महत्वपूर्ण प्रयत्न किए उनके लिए सारा देश उनका ऋणी रहेगा। पंजाब कृषि-प्रधान प्रांत है। इसलिए महाराजा रणजीत सिंघ ने किसानों की दशा सुधारने की ओर सबसे अधिक ध्यान दिया। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि वे स्वयं एक किसान परिवार से संबंधित थे और किसानों की वास्तविक दशा से परिचित थे। महाराजा देश के ऐसे शासक थे जिन्होंने बाबा बंदा सिंघ बहादर

के बाद काश्त करने वाले किसानों को भूमि के स्वामित्व अधिकार बहुत व्यापक स्तर पर दिए। किसानों से लगान की वसूली सीधे राजस्व अधिकारियों द्वारा होने लगी थी। कुओं के स्वामित्व का अधिकार किसानों को महाराजा रणजीत सिंघ ने दिया। महाराजा के यत्नों से ही आज पंजाब 'देश का अन्न भंडार' कहलाता है। इसी प्रकार औद्योगिक व्यवसायों को उत्साहित करने के लिए महाराजा ने अनेक उपाय किए थे।

महाराजा रणजीत सिंघ ने पंजाबियत तथा पंजाब की संस्कृति, जो राजनीतिक अस्त-व्यस्तता एवं धार्मिक कट्टरता के कारण पछाड़ खा चुकी थी, को पुनः विकास-मार्ग पर लाते हुए उसे पंजाबियों के जीवन का व्यवहारिक अंग बनाया। इस प्रकार महाराजा पंजाबियत के प्रथम रक्षक बने, जिसने धर्म एवं जाति के बंधनों से ऊपर उठकर अपनी प्रजा का सेवक बन कर सेवा की है। उनकी सरकारी मोहर पर 'अकाल पुरख' अंकित था। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने सिक्के भी गुरु नानक पातशाह एवं गुरु गोबिंद सिंघ जी के नाम पर चलाए। वे वास्तव में एक न्याय पसंद शासक थे जिन्हें मानव और मानवता में अटूट श्रद्धसा थी।



श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी

(पृष्ठ २९ का शेष)

was done of the request of a rich pagan who remained as a surety for him. He thought that the king might remit the fine or the saint might pay or that he might borrow that amount, but in this affair the rich man was disappointed. He brought what 'his pope' had in his house, including the household furniture, also the clothes of his wife and children and finding that all he had was not enough to cover up the fine, since the pagans have no respect to their Pope or their father, besides depriving him of all his money, he tormented the saint with new insults every day. The poor saint even received kicks on his face on many occassions and was prevented from eating till he had paid more money.

The richman did not believe that he had no money, though he had absolutely nothing and no one was even willing to give him. Thus having suffered so many injuries, pains and insults, given by the same that were adoring him, the poor Guru died.

The surety-giver wanted to escape but was made a prisoner and killed after all his possessions had been confiscated.

अनुवादक : वलविदंर कौर
खोज विद्यार्थी,
दर्शनशास्त्र अध्ययन विभाग,
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला।

महाराजा रणजीत सिंह

*-स. रणवीर सिंघ**

१३ नवंबर, १७८० की पावन बेला में माता राज कौर जी की कोख से जन्म लेने वाले नूरानी चेहरे को बचपन में ही चेचक की बीमारी ने न केवल दागों से भर दिया था बल्कि बांयी आंख भी छीन ली। इस बेटे के पिता सरदार महा सिंघ ने उसका नाम रखा बुध सिंघ। १० वर्ष के होते-होते पिता का साया भी सिर से उठ गया। बचपन में ही अपनी खानदानी मिसल शुक्रचक्किया के सर्वेसर्वा बनने वाले, अनपढ़ लेकिन रणबांकुरे बालक ने ऐसे कारनामों को अंजाम दिया कि कालांतर में इनका नाम ही रणजीत सिंघ पड़ गया।

इस शेरे-पंजाब को १२ अप्रैल, १८०१ को महाराजा के पद से विभूषित किया गया और इसी दिन से प्रारंभ होती है इनकी गौरवशाली महानता की कहानी जो इतिहास के पन्नों में अमर धरोहर के रूप में न केवल याद की जाती रहेगी बल्कि भविष्य में भी प्रेरणादायक होकर पथ-प्रदर्शक बनी रहेगी। महाराजा रणजीत सिंघ ने तो राज्य-सिंघासन पर बैठ कर बादशाह कहलाने पर भी एतराज उठाते हुये कहा, "सच्चा बादशाह तो बस वही एक अकाल पुरख है, मैं तो उसका तुच्छ सेवक हूं।" प्रजा के बड़े आग्रह पर उन्होंने अपने आप को "महाराजा" के बजाय "सरकार" के नाम से सम्बोधित करने पर जोर दिया। कथनी और करनी में अंतर न रखते हुये उन्होंने घोषणा की कि टकसाल से जारी सिक्कों पर भी सच्चे पातशाह का ही नाम होगा। ये सिक्के कालांतर में नानकशाही सिक्कों के नाम से जाने गये।

छोटे-छोटे टुकड़ों में बंटे पंजाब को एक झंडे के नीचे लाकर इसे एक शक्तिशाली राज्य के रूप में स्थापित किया, ताकि उत्तर-पश्चिम से आने वाले आक्रमणकारियों के हमलों से देश को बचाया जा सके जो कि उनकी दूरदर्शिता की सूचक था। वे एक योद्धा के साथ-साथ कुशल प्रशासक और राजनीतिज्ञ थे और इस से भी बढ़ कर एक ऐसी अजीम शख्सियत के धनी थे जिनके कदम-कदम पर किये गये कार्य-कलापों से उनकी महानता झलकती है। वे स्वयं एक योद्धा थे। उनका सेनापति सरदार हरी सिंघ नलूआ था। अफगानिस्तान की महिलाएं अथवा माताएं अपने बच्चों को "रोओ मत, दूध पी लो, नहीं तो नलवा आ जायेगा" कह कर चुप कराती थीं। कितना रौब और खौफ था उनका।

अनगिनत नेक कार्यों में से चंद झलकियां ही उनके बहुआयामी व्यक्तित्व को साबित कर देती है कि वे वास्तव में कितने महान थे!

भेष बदल कर प्रजा के सुख-दुख का पूरा ध्यान रखते थे। एक बार एक कंकर आकर सिर पर लगा। अंगरक्षक ५ और ७ वर्ष के दो दोषी बच्चों को पकड़ लाये जो बेरी के बेर तोड़ रहे थे। बच्चे कहने लगे, "घर में मां बीमार है, खाने का बंदोबस्त वो ही करती है। तीन दिन से बुखार में पड़ी है। भूखे बेर तोड़ कर खा रहे थे।" डरते-कांपते बच्चों की व्यथा

**मो+पोस्ट-मान्दी, तहसील नारनौल, जिला महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)*

सुनकर महाराजा की आंखें भर आईं। कहने लगे, "अनबोला वृक्ष, कंकर की मार झेल कर खाने को फल देता है तो मुझे प्रजा का पालिक होने के नाते कुछ तो देना चाहिए। मेरे राज्य में कोई भूखा रहा और मुझे भनक तक नहीं पड़ी।" वे विचलित हो उठे। भविष्य में कोई इस प्रकार दुख न पाए महाराजा ने तत्काल उन बच्चों की सहायता के लिए कुछ फरमान जारी किए। कहते हैं कि इसके पश्चात महाराजा हर रात अपने सिरहाने सोने-चांदी के सिक्के रखने लगे थे और सुबह उठकर बिना किसी भेद-भाव के ज़रूरतमंद लोगों में बांट देते थे।

महाराजा ने धर्म के आधार पर कभी किसी के साथ भेदभाव नहीं किया। इसका प्रमाण उनके मंत्रिमंडल पर नज़र डालने से स्पष्ट दिखाई देता है। फकीर अजीजउद्दीन विदेश मंत्री, दीवान सावनमल वित्त मंत्री, दीवान मोहकम चंद माल मंत्री, स. दयाल सिंघ गृह मंत्री, नूरउद्दीन लाहौर का गवर्नर, अब्दुल रहमान विशेष दूत। इसी प्रकार स. गुलाब सिंघ और टोडर मल भी प्रतिष्ठित पद पर आसीन थे, जो रात-दिन राज्य की सुरक्षा और प्रजा की भलाई में लगे रहते थे। यह बाद अलग है कि इनमें से महाराजा के कालवश होने के पश्चात कुछ की भूमिका ठीक न रही।

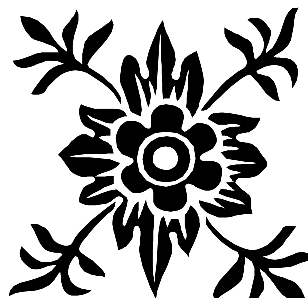
सर्वधर्म समभाव के कारण ही प्रजा में वे अत्यंत लोकप्रिय थे। विश्वनाथ मंदिर, बनारस को २२ मण सोना कलश-निर्माण के लिये भेंट किया। हरिद्वार और ज्वाला जी के मंदिरों में बहुमूल्य उपहार दिये। दसवें पातशाह के जन्म-स्थान श्री पटना साहिब में पुराने गुरुद्वारे का नवनिर्माण तथा श्री अबिचल नगर साहिब, नांदेड़ (हजूर साहिब) में उन्होंने भव्य गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया। धार्मिक स्थानों के निर्माण के अतिरिक्त स्कूलों, पाठशालाओं, टकसालों, कुओं बाउलियों आदि के लिये खुले हाथों से धन प्रदान करते थे। १७९९ से १८३९ तक के ४० वर्षों के शासन काल में किसी को फांसी की सजा न दी गई। यह धर्म-निरपेक्षता के हामी एक अच्छे कुशल प्रशासक की सबसे बड़ी उपलब्धि मानी गई है। महाराजा रणजीत सिंघ पशु-धन के प्रति बड़ी हमदर्दी रखते तथा उनकी हत्या न होने देते थे।

राजाओं की निरंकुशताओं पर अंकुश लगाते हुये उन्होंने सरदार अमीर सिंघ तथा नसीरूद्दीन को यह अधिकार दिया कि यदि मेरे या मेरे परिवार के किसी भी सदस्य या मंत्री की तरफ से कोई फरमान ऐसा हो, जो लोकहित में न हो तो उस पर रोक लगा दी जाये। यह फरमान आज भी लाहौर के फकीर परिवार में साक्षी के तौर पर सुरक्षित है।

ऐसी न जाने कितनी प्रमाणिक घटनाएं महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य-काल में घटीं जो इतिहास की धरोहर बन गईं।

१३ नवंबर, १७८० को उदय हुआ पंजाबियत का प्रतीक वो सूर्य, शेरे-पंजाब, २७ जून १८३९ को अस्त हो गया। ऐसी विभूतियों की कीर्ति कभी मिट नहीं सकती। वे अमर हो गये। इतिहास में उनका नाम सदैव स्वर्ण अक्षरों में अंकित रहेगा।





१९८४ का सिख कत्लेआम

*-स. सुरजीत सिंघ**

शहीदी परम्परा की प्रेरणा तो सिख धर्म में श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही प्रारंभ हो गयी थी। इसे गुरबाणी में सशर्त प्रमाणित कर दिया था :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ सिरु धरि तली गली मेरी आउ इतु मारगि पैरु धरीजै ॥
सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ (पन्ना १४१२)

गरीबों-मजलूमों और देश की रक्षा हेतु सिख धर्म ने न केवल अनगिनत कुर्बानियां ही दी हैं अपितु भीषण घल्लूघारे भी झेले हैं। 'घल्लूघारा' पंजाबी का शब्द है जिसका तात्पर्य हिन्दी भाषा में सामूहिक कत्लेआम, नरसंहार, सर्वनाश एवं सामूहिक बर्बादी से है। पहला घल्लूघारा सन् १७४६ में काहनूवान के घने जंगलों में हुआ, जहां ११००० से अधिक मरजीवड़े शहीदियां प्राप्त कर गये थे। दूसरा घल्लूघारा १७६२ में मलेरकोटला के निकट कुप्प रुहीड़ा नामक जगह पर हुआ, जहां लगभग २५००० सिख स्त्री, पुरुष, बच्चे शहीद हो गये। सन् १९४७ में देश-विभाजन के समय सिखों का भारी जानी-माली नुकसान हुआ जो सर्वविदित है। यह कहना सर्वथा उचित होगा कि सिख कौम का ध्येय ही दूसरों की रक्षा करने में अर्थात् "नाम जपना, किरत करना, वंड छकना" के मौलिक आदर्श में है :

ना को बैरी नही बिगाना सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ (पन्ना १२९९)

भारत की लोकतांत्रिक सरकार जिसका दायित्व जन-धन की सुरक्षा करने का है, उसने जून १९८४ में सरबत्त का भला चाहने वाली तथा *"नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत्त दा भला"* का नारा बुलंद करने वाली सिख कौम एवं उनके धार्मिक स्थलों को सोची-समझी साजिश के तहत नष्ट करना प्रारंभ कर दिया, जो कि मानवता के नाम पर कलंक है। सारे पंजाब में कर्फ्यू लगा, संचार व्यवस्था और यातायात ठप कर दिये गये और पंजाब को सेना के हवाले कर दिया गया। ४ जून, १९८४ को भारतीय सेना ने श्री अकाल तख्त साहिब के अलावा, श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर, तरनतारन साहिब, गुरुद्वारा दुख निवारण साहिब पटियाला, फतेहगढ़ साहिब एवं अन्य ऐतिहासिक गुरुद्वारों को घेर कर एक साथ हल्ला बोल दिया। श्री गुरु अरजन देव जी का शहीदी पर्व होने के कारण संगत का समुद्र पूरे उफान पर था। सारे रास्ते बंद कर हजारों की संख्या में अंदर उपस्थित निहत्थे एवं निर्दोष श्रद्धालुओं को जो गुरु-घर में भक्ति-रस *"बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे"* में विभोर हो रहे थे, को सेना द्वारा तोपों, राकेटों एवं मशीनगनों से अंधाधुंध गोले व गोलियां बरसा कर भून दिया गया। लाशों के ढेर लग गये और हर तरफ खून ही खून नज़र आने लग गया। यह खुलेआम कत्लेआम नहीं था तो और क्या था?

श्री हरिमंदर साहिब कांप्लेक्स, श्री अकाल तख्त साहिब को तहस-नहस कर सिख रैफ्रेन्स

५७-बी, न्यू कॉलोनी, गुमानपुरा, कोटा (राजस्थान)

लायब्रेरी एवं तोषाखाना को जलाकर राख कर दिया गया। महत्वपूर्ण प्राचीन चित्र, दुर्लभ एलबम, ऐतिहासिक हस्तलिखित ग्रंथ एवं हुक्मनामे, दुर्लभ प्राचीन वस्तुओं एवं पाण्डुलिपियों आदि को अग्नि-भेंट कर दिया गया। यह हृदयविदारक और दर्दनाक नहीं तो और क्या था? यह आक्रमण उस पावन स्थान पर किया गया जहां से स्वर गूंजता है :

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥ *(पन्ना १३४९)*

सेना द्वारा इस प्रकार आक्रमण क्यों? सेना तो केवल विदेशी आक्रमणकारियों से अपने देश के नागरिकों की जान-माल की सुरक्षा करती है। इससे प्रमाणित होता है कि सरकार का उद्देश्य तो कुछ और ही था। *"उलटी वाड़ खेत कउ खाए"* चरितार्थ हो रहा है। साका नीलातारा समाप्त होने के उपरांत भी कई महीनों तक पंजाब कर्फ्यू की आग में सुलगता रहा, सारी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं व्यवसायिक गतिविधियां ठप्प रहीं और सेना हर तरफ कोहराम मचाती रही।

'१९८४ का सैनिक हमला' घटित हुए अभी मुश्किल से चार-पांच माह ही गुजरे थे कि तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की हत्या हो गई, जिसके लिए एक विशेष राष्ट्रीय देश-भक्त सिख कौम को एक सोची-समझी साजिश के अन्तर्गत खत्म करना चाहा तथा सम्पूर्ण देश में सिख-विरोधी हिंसा की आग को भड़काया गया और निर्दोष एवं निहत्थे सिखों का कत्लेआम, सारी न्यायिक सीमाएं लांघ कर, खुलेआम प्रारंभ कर दिया गया, जो बड़ी लज्जा एवं शर्म की बात है। लोकतांत्रिक देश भारत के एक प्रधानमंत्री द्वारा दुख प्रकट करने के बजाय खुलेआम यह कहना कि "जब एक बड़ा पेड़ गिरता है तो धरती हिलती ही है" ने देश के एक विशेष वर्ग के विरुद्ध नरसंहार की आग भड़काने में घी का काम किया। इससे अधिक असंवैधानिक और क्या हो सकता है? एक लोकतांत्रिक देश में इससे अधिक बुरा एवं शर्मनाक और क्या हो सकता है? क्या यही लोकतंत्र की परिभाषा है?

मुगल विदेशी आक्रमणकारी खैबरदर्रा के रास्ते से भारत पर आक्रमण करके भारतीय संस्कृति एवं धर्म को नष्ट कर, मानवता को कुचलते हुए भारत की असमत और धन-दौलत को दोनों हाथों से लूटते चले आ रहे थे। यह कटु सत्य किसी से छुपा नहीं है कि महाराजा रणजीत सिंघ ने पहल कर साहसी कदम उठाते हुए विदेशी मुगल आक्रमणकारियों का मुंहतोड़ जवाब देते हुए अफगानिस्तान तक विजय हासिल कर उनके दांत खट्टे कर उनका मार्ग सदा-सदा के लिए बंद कर दिया था, किन्तु आश्चर्य है कि आज उसी देश-भक्त कौम को देश में ही इस प्रकार कुचला जा रहा है।

सिखों को गरम खौलते हुये पानी में उबाला गया, उनके शरीर आरे से चीरे गये, शरीर पर रूई बांध आग द्वारा जलाया गया, शरीर के टुकड़े-टुकड़े किये गये, मांस को नोच-नोच कर शरीर से अलग किया गया, चरखियों पर चढ़ाकर क्रूर यातनाएं दी गईं एवं शहीद किया गया, तोपों के मुंह आगे जिंदा ही बांध कर गोले दाग शरीर चिथड़े-चिथड़े किये गये, सिर से खोपड़ियां उतारी गईं, भट्टियों में जिन्दा ही झोंके गये, मासूस बच्चों को असहनीय एवं अकथनीय कष्ट देकर टुकड़े-टुकड़े कर, माला बना उनकी माताओं के गले में डाला गया, तो भी सिखों के हृदयों में गुरबाणी एवं गुरु-प्रेम की जल रही पवित्र ज्योति को तनिक भी मध्यम न किया जा सका।

भारत के लोग जिनकी स्थिति खालसा स्थापना के पूर्व इस प्रकार थी :

"हम तो तोलन जाने तकड़ी, नंगी करद कबहूं नहिं पकड़ी। चिड़ी उड़े डर से मार जायें, मुगलों से कैसे लड़ पाएं?"

उल्लेखनीय है कि १९८४ के दंगों में केवल राजधानी दिल्ली में ही चार हजार से अधिक सिखों की नृशंस हत्या कर बड़े पैमाने पर तोड़फोड़ एवं आगजनी की गई थी। भारत के अन्य राज्यों, जहां पर केन्द्र पर आसीन एक ही पार्टी की छत्रछाया वाली सरकारें थीं वहां का स्थानीय प्रशासन ऊपरी दबाव के चलते मूकदर्शक बन अप्रत्यक्ष रूप से कातिलों में संलिप्त हो कत्लेआम करने, कराने एवं आग भड़काने की कथित भूमिका निभाते नज़र आया, जिससे पूरे राष्ट्र का शीश शर्म से झुका जा रहा है। बड़ी लज्जा की बात है कि जिन पर सुरक्षा का दायित्व था, वही रक्षक कर्त्तव्यविमुख हो क्रूर नरभक्षक बन गए, रिकार्ड में हेराफेरी कर सबूत, साक्ष्य नष्ट करते रहे, धमकाते रहे। अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि ऐसे प्रशासनिक अधिकारियों वाले राष्ट्र का क्या होगा? स्वतंत्र भारत के इतिहास में ऐसा नरसंहार पहले कभी नहीं हुआ जहां महिलाओं एवं बच्चों तक को भी न छोड़ा गया हो। यह नरसंहार भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष और सहिष्णु राष्ट्र के माथे पर न मिटने वाला कंलक है। सिखों के कत्लेआम की विभीषिका और गंभीरता ने जर्मनी में हुये हिटलरशाही की क्रूरता को भी पीछे छोड़ दिया। दिल्ली के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री मदन लाल खुराना का कहना है कि इस कत्लेआम से जुड़ी कुछ महत्वपूर्ण फाइलें पूर्व में ही गायब कर दी गई हैं एवं मूल रिकार्ड में भी भारी हेराफेरी हुई है। सरकारी रिकार्ड के अनुसार केवल राजधानी दिल्ली में ही २७३३ सिख मारे गये थे, यद्यपि वास्तविक आंकड़ा तो ४००० से ऊपर है, १००० एफिडेविट प्राप्त हुये और २०० गवाहों से पूछताछ की गई। कुल दर्ज ५८७ आपराधिक मामलों में से २४१ की तो फाईलें ही गायब मिलीं। मूल रिकार्ड में हेराफेरी से २५३ आरोपी खुलेआम बरी हो गए। केवल २५ मामलों में ही आरोप सिद्ध हो सके जो संदिग्ध ही रहे। लगभग ३० पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध दर्ज अपराधिक मामलों में से १४ की तो फाइलें ही उपलब्ध नहीं हुईं। मूल रिकार्ड हेराफेरी से १० दोषमुक्त हो गए जो कि सरकारी तंत्र की शिथिलता ही कही जाएगी।

वर्ष १९८४ सिख-विरोधी दंगों की जांच के लिए प्रथम आयोग न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र की अध्यक्षता में गठित किया गया था और तत्पश्चात ८ आयोग बने जो कि असफल रहे। घटना के १६ वर्ष पश्चात सन् २००० में सर्वोच्च न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायधीश न्यायमूर्ति जी. टी. नानावती की अध्यक्षता में केन्द्र सरकार द्वारा गठित आयोग की ३३९ पृष्ठों की जांच रिपोर्ट घटना के २१वें वर्ष ९ फरवरी २००५ को प्रस्तुत की गई थी, जो ६ माह की अवधि के अंतिम दिवस ८ अगस्त २००५ को संसद के पटल पर खानापूर्ति हेतु कार्यवाही रिपोर्ट सहित रख दी गई। यह कहना सर्वथा उचित ही होगा कि यदि घटना से एक वर्ष के अंदर-अंदर आयोग की रिपोर्ट आ गयी होती तो कारगर और निश्चित परिणाम सामने आते, जिससे दोषियों को सजा एवं पीड़ितों को न्याय एवं राहत की उम्मीद होती, किन्तु अफसोस कि आजकल के बन रहे आयोग भी सक्षम नहीं रहे।

वास्तव में हमारे देश में आयोगों की उपयोगिता प्राय: संदिग्ध रहती है, क्योंकि इनका

गठन अवकाशप्राप्त न्यायधीशों की अध्यक्षता में होता है जो मौजूदा सरकार एवं सरकारी नीतियों के विरुद्ध टिप्पणी करने में अपने आप को असहाय महसूस करते हैं, इसलिए "भरोसेमंद सबूत" और "बहुत सम्भव है" इत्यादि शब्दावली का प्रयोग किया जाता है। सरकारें दोहरें मापदंड अपना रही हैं।

आज़ादी की लड़ाई में अंग्रेजों द्वारा फांसी पर लटकाये गये १२१ बजबजघाट में अंग्रेजों की गोलियों से शहीद हुये, ११३ को कालापानी की उम्रकैद हुई, २६४६ भारतीय स्वतंत्रता सैनानियों में से २१४७ तो केवल सिख शूरवीर ही थे, जो सिख समुदाय की वीरगाथा एवं राष्ट्रभक्ति की भावना को प्रदर्शित करते हैं। अमर शहीद सरदार भगत सिंघ, सरदार ऊधम सिंघ एवं असंख्य सिख शूरवीरों के आजादी हेतु किए गये श्रेष्ट बलिदानों को सारा राष्ट्र स्मरण एवं नमन करता आ रहा है। मुख्यतया फील्ड मार्शल अर्जुन सिंघ, महानायक जनरल जगजीत सिंघ (अरोड़ा) जिन्होंने बंग्लादेश आजाद कर अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की ख्याति और गौरव को प्रतिष्ठापित किया, सदैव आदरणीय रहे हैं। हरित क्रांति का प्रश्न उठा तो "केन्द्रीय अनाज भण्डारण पूल" में केवल पंजाब ने ही लगभग पचास प्रतिशत अनाज जमा कराकर भारत के स्वावलम्बन होने में मुख्य भूमिका निभाते हुए पूर्ण सहयोग प्रदान किया, जहां पहले विदेशों से अनाज आयात करना पड़ता था।

विश्व के सबसे बड़े प्रजातंत्र देश भारत के इतिहास के काले अध्याय के रूप में घटित १९८४ के सिख-विरोधी दंगे देश का एक बहुत बड़ा हादसा एवं त्रासदी थी जिसमें असंख्य मां-बहनें विधवा हो गईं और हज़ारों की संख्या में अनेकों परिवार बर्बादी की कगार पर जा पहुंचे। पिछले २५ वर्षों से निरंतर उनके पुनर्वास और समुचित राहत पहुंचाने हेतु न तो कभी केन्द्र सरकार ने और न ही कभी राज्य सरकारों ने कोई निजी दिलचस्पी ही ली और न ही कोई ठोस प्रयास ही किया। प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि १० आयोग गठित हुये, हजारों की संख्या में कत्लेआम, लूटपाट, आगजनी हुई, रिपोर्टों एवं शपथ-पत्रों का अंबार लगा, पर आश्चर्य कि २५ वर्ष पश्चात भी कातिल स्वेच्छापूर्वक घूम रहे हैं, ऐसा क्यों?

भारत में पुलिस व प्रशासन की कमान सीधे तौर पर राजनेताओं के हाथ में होती है। वर्ष १९८४ के सिख-कत्लेआम के समय दिल्ली के उपराज्यपाल रहे श्री पी. जी. गवई पहले ही कह चुके हैं कि तथाकथित ऊपरी दबाव के कारण ही वे अपना दायित्व निभाने में विफल रहे हैं। सरकार सिख समुदाय के साथ न्याय करने का वायदा तो करती है, किन्तु ऐसा वास्तव में अभास भी होना चाहिए कि सचमुच का न्याय हो रहा है। १९८४ के राष्ट्रव्यापी सिख-नरसंहार के लिए पिछले २५ वर्षों में संसद में संवेदना के दो शब्द कहना भी सरकार को उचित न लगा था और इतनी देर बाद ही इन दंगों को "राष्ट्रीय त्रासदी" और "राष्ट्रीय शर्म" बताते हुये भारत के प्रधानमंत्री ने अपनी सरकार और समस्त देशवासियों की ओर से पूरे सिख समुदाय और राष्ट्र से क्षमा याचना कर कहा कि "दंगापीड़ितों के समक्ष सिर शर्म से झुका हुआ है, क्योंकि जो हुआ वह संविधान में निहित राष्ट्रीयता के विचार का निषेध था।" सिख समुदाय के साथ न्याय होना समय ही आवश्यक्ता है ताकि देश पर मर मिटने वाली यह कौम राष्ट्र की मुख्यधारा में निरंतर उसी प्रकार जुड़ी रहे।



गुरबाणी का शुद्ध उच्चारण

*-स. गुरबख्श सिंघ 'प्यासा'**

जैसे आंख में कोई अवांछित वस्तु पड़ जाए तो परेशान कर देती है इसी प्रकार मन में कोई बात चुभ जाए तो बेचैनी होना स्वाभाविक ही है। फिर यह बात तो 'आ बैल मुझे मार' को चरितार्थ करते हुए, मैंने उसे स्वयं निमंत्रण दिया था।

हुआ कुछ इस तरह कि मैंने अपने पौत्र को (जो गुजरात में पला-बढ़ा होने के कारण गुरमुखी लिपि से अनभिज्ञ था) गुरबाणी का पाठ करने के लिए देवनागरी में छपा, नित्तनेम का गुटका लाकर दिया। परन्तु पहले ही कौर में जैसे बाल आ गया जब वह (ि) और (ु) की मात्राओं के हिन्दी व्याकरण के अनुसार उच्चारण को सही ठहराने के लिए तर्क करने लगा।

बड़ी कठिनाई से उसे समझाया कि जैसे प्रत्येक भाषा की अपनी-अपनी व्याकरण होती है और सब में कुछ न कुछ अंतर होता है वैसे ही पंजाबी और हिन्दी के व्याकरणों में भी अंतर है, और तो और पंजाबी भाषा के एवं गुरबाणी के व्याकरणों में भी अंतर है।

"यह भी तुम अच्छी तरह जानते हो कि शुद्ध भाषा के प्रयोग के लिए व्याकरण के नियमों को जानना अति आवश्यक है। व्याकरण एक जटिल और नीरस विषय है, इसलिए अक्सर इससे कन्नी काट ली जाती है। फलस्वरूप हम किसी भी भाषा से न्याय नहीं कर पाते।"

गुरबाणी के शुद्ध उच्चारण एवं अर्थबोध के लिए (क्योंकि उच्चारण और अर्थबोध का चोली-दामन का साथ है।) जो गुरबाणी के महान विद्वानों, जिनमें स्वनामधन्य भाई संतोख सिंघ जी, भाई वीर सिंघ जी, भाई रणधीर सिंघ जी, भाई काहन सिंघ जी नाभा, बाबा गुरबचन सिंघ जी खालसा, प्रिं. तेजा सिंघ जी, प्रो. साहिब सिंघ जी, प्रिं. हरिभजन सिंघ जी, प्रिं. हरिक्रिशन सिंघ जी, प्रो. नरैण सिंघ जी, हैॅडमास्टर महिताब सिंघ जी, स. धन्ना सिंघ जी, ज्ञानी हरिबंस सिंघ जी तथा प्रो. सोहण सिंघ जी जैसों ने जो सूत्र खोजे हैं उनमें से कुछ सूत्रों का सार देने का प्रयास कर रहा हूं, जिससे जनसाधारण को गुरबाणी के शुद्ध उच्चारण के लिए दिशा-बोध मिल सके और वे गुरबाणी के विचार-पक्ष से भी जुड़ सकें।

यह सर्वविदित है कि प्रत्येक बोली की अलग-अलग लिपि होती है जैसे कि पंजाबी की गुरमुखी, हिन्दी की देवनागरी, अंग्रेजी की रोमन आदि और हरेक लिपि के अक्षरों की संख्या भी भिन्न-भिन्न है। जैसे गुरबाणी के ३५ (जिनकी संख्या अब बढ़ कर ४१ हो गयी है), देवनागरी के ५२, रोमन के २६, फारसी के ३४ आदि। कोई भी लिपि अपने आप में पूर्ण नहीं है क्योंकि उस लिपि का आविष्कार क्षेत्र-विशेष की बोली को व्यक्त करने के लिए हुआ होता है, इसलिए जैसे-जैसे अन्य भाषाओं के शब्द (तत्सम एवं तद्भव रूप में) आकर मिलते हैं तो लिपियां असमर्थ होती जाती हैं।

गुरमुखी लिपि के ३५ अक्षरों से ४० अक्षरों हो जाने के कारण, अरबी और फारसी भाषाओं के शब्दों को व्यक्त करने के लिए 'स, ख, ग, ज, फ' के नीचे बिन्दी लगा कर 'स़, ख़, ग़, ज़, फ़' का नया वर्ग बनाया गया और

**२२, प्रभु पार्क सोसायटी, ओल्ड छानी रोड, वडोदरा-३९०००२ (गुजरात)*

कालांतर में आवश्यकता अनुसार 'ल' अक्षर के नीचे बिन्दी लगा कर नया अक्षर बनाया गया जिससे गुरमुखी लिपि के अक्षर ३५ से बढकर ४१ हो गये हैं।

जैसा कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में लगभग १२ बोलियों के शब्द हैं, इसलिए जो व्यक्ति जितनी अधिक बोलियों का जानकार होगा उतना ही शुद्ध उच्चारण करने में सक्षम होगा, क्योंकि गुरबाणी की अपनी ही शैली और नियमावली है, इसलिए गुरबाणी के शुद्ध उच्चारण के लिए गुरबाणी-व्याकरण के नियमों का पालन करना होगा।

(ि) और (ु) की मात्राओं का उच्चारण

गुरबाणी का पाठ करते समय यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि यदि किसी शब्द के अंतिम अक्षर में (ि) और (ु) की मात्रा लगी हो, तो उसका उच्चारण नहीं होता। अब यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि यदि इन मात्राओं का उच्चारण नहीं होता तो इनके लगाने का क्या प्रयोजन है? जी हां, इन मात्राओं को लगाने का प्रयोजन उच्चारणात्मिक पक्ष न होकर अर्थात्मिक पक्ष है। जैसे गुरबाणी में 'इक, इकु और इकि' तीन रूपों में है, परन्तु तीनों का उच्चारण 'इक' ही है। 'इक' सदैव एक वचन, स्त्री लिंग का बोध देता है। 'इकु' पुलिंग, एक वचन के लिए और 'इकि' बहुवचन के लिए। इसी प्रकार 'जिन' सदैव एक वचन और 'जिनि' बहु वचन दर्शाता है। नीचे दी हुई तालिका से उपरोक्त नियम अधिक स्पष्ट हो जायेगा।

पुलिंग एक वचन	*स्त्रीलिंग एक वचन*
इहु	इह
उहु	उह
होरु	होर
सभु	सभ
अवरु	अवर

बहुवचन	*उच्चारण*
इहि	इह
उहि	उह
होरि	होर
सभि	सभ
अवरि	अवर

इसी प्रकार 'नरक, नरकु, नरकि' का उच्चारण 'नरक'; 'आहर, आहरु, आहरि' का 'आहर'; 'देह, देहु, देहि' का 'देह'; 'नेह, नेहु, नेहि' का 'नेह' होगा। ऐसे ही 'लोहु, रोहु, वेपरवाहु, पातसाहु और ग्रिहु' का उच्चारण 'लोह, रोह, वेपरवाह, पातसाह और ग्रिह' होगा।

'ह' अक्षर के उच्चारण के बारे में :

विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि यदि किसी शब्द में 'हि' से पहला अक्षर मात्रा रहित हो, तो 'ह' अक्षर में लगी (ि) की मात्रा 'ह' के पहले अक्षर को (ै) की मात्रा की आवाज दे देती है और 'ह' अक्षर मात्रा रहित उच्चारण देता है, जैसे 'कहि' का उच्चारण 'कैह' होगा। 'सहि' का उच्चारण 'सैह' होगा। यदि 'हि' से पहले अक्षर में मात्रा लगी हो तो यह आधी (े) की आवाज देता है, जैसे 'माहि' का उच्चारण मा+हिअ होगा।

यदि (हु) से पहला अक्षर मात्रा रहित हो तो 'ह' अक्षर में लगी (ु) की मात्रा, पहले अक्षर को (ौ) की आवाज देता है और 'ह' अक्षर धीमे स्वर में मुंह से बोला जाता है, जैसे 'बहु' को 'बौह', 'सहु' को 'सौह' आदि।

इसी प्रकार 'साहो' को 'साहे', 'राहु' को 'राहो', 'अलाहु' को 'अलाहो', 'वेसाहु' को 'वेसाहो' उच्चारण करना उतना ही अशुद्ध है जितना 'पैरु' को 'पैरो' अथवा 'रामु' को 'रामो' पढ़ना गलत है। यहि 'ह' अक्षर शब्द के बीच में आता है तो अपने से पहले मात्रा-रहित अक्षर को (ै) की आवाज देता है और साथ में अपनी धीमी आवाज, जैसे 'सहज'='सैहज', 'महला'='मैहला, 'रहम'='रैहम' आदि।

जब 'ह' किसी शब्द के अंत में आता है

तो (ा) की मात्रा का उच्चारण दिए जाने की जरूरत हो तो 'ह' अक्षर के साथ एक और 'ह' का अक्षर जोड़ कर उस 'ह' को (ु) की मात्रा लगा दी जाती है। जैसे 'मुहहु' (मुह+हु) जिसका उच्चारण 'मुहो' होगा। ऐसे ही 'सिआहहु' का उच्चारण 'सिआहो' होगा।

जब किसी शब्द के अंत में 'ह' का स्वर के रूप में उपयोग होता है तो उसमें लगी (ु) की मात्रा 'ह' से मिलकर (ो) की जगह आती है, जैसे 'प्रबोधहु' (प्रबोधो), 'जागहु' (जागो)।

विसर्ग (:) के उच्चारण के बारे में :

किसी शब्द के अंत में लगीं (:) दो बिंदियों का उच्चारण 'ह' का होता है, जैसे 'रंगण:' का 'रंगणह', 'संपूरण:' का 'संपूरणह' होगा।

गुरबाणी में बिंदियों का उपयोग

गुरबाणी के शुद्ध उच्चारण हेतु/अर्थबोध के लिए यथायोग्य स्थान पर 'बिंदी' लगा कर पाठ करना अति आवश्यक है, जैसे "आखा जीवा विसरै मरि जाउ" यदि 'आखा' के 'खा' पर बिंदी नहीं लगाई, तो **First person** और 'जाउ' में कही हुई बात **Second person** में समझी जायेगी।

ऐसे ही 'करउ बेनंती . . . अथवा 'सिमरउ सिमरि सिमरि . . .' के 'करउ' और 'सिमरउ' में बिंदियां लगा कर 'करउं' और 'सिमरउं' से किया उच्चारण ही सही अर्थ-बोध देगा। इसी प्रकार एक वचन/बहु वचन अथवा सही शब्द के लिए यथायोग्य स्थान पर बिंदी लगा कर उच्चारण करना चाहिए, जैसे *"मोरी रुण झुण लाइआ"*, में 'मोरी' को 'मोरीं'; *"पुत्री कउलु न पालिउ"* में 'पुत्री' को 'पुत्रीं' उच्चारण शुद्ध माना जायेगा आदि।

अरबी और फारसी शब्दों का उच्चारण

श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी में अरबी और फारसी के तत्सम एवं तद्भव रूप में अनेकों शब्द आए हैं, इसलिए इनके उच्चारण के लिए कुछ दिक्कत आ सकती है, परन्तु 'जहां चाह वाहं राह' के अनुसार, हर तरह की कठिनाई का समाधान निकल आता है, यदि हम में गुरबाणी से जुड़ने की इच्छा जाग जाये तो। उदाहरणस्वरूप कुछ शब्द एवं साथ में उनका उच्चारण दिया जा रहा है।

'मुहबति (मुहब्बति)', 'निवाज (निमाज)', 'दरवेसी (दरवेशी)', 'अजराईल (अज़राईल)', 'फरेसता (फरिशता)', 'सरीअत (शरीअत)', 'सैतान (शैतान)', 'गरीब (ग़रीब)', 'हजार (हज़ार)', 'खूब (ख़ूब)', 'खिराज (ख़िराज)', 'खुदाइ (ख़ुदाइ)', 'सेख (शेख)', 'बखसीस (बखशीश)', 'मुसला (मुसल्ला)', 'मसकते (मशक्कते)', 'लसकर (लशकर)', 'अरज (अरज़)', 'पेस (पेश)', 'सिनाखतु (शिनाखत)' तथा 'मसकति (मुशकत)' आदि।

अंत में अर्ध विराम लगाने के बारे में

जैसा कि गुरबाणी के शुद्ध उच्चारण का मंतवय गुरबाणी को समझ कर उसके अनुसार जीवन को ढालना है। यही एक गुरसिख की प्रतिदिन की की हुई अरदास का हिस्सा है। इसी मंतवय को सामने रख कर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के पद-छेदी स्वरूप छापे गये और इसी के लिए पाठ करते समय योग स्थानों पर अर्ध-विराम देकर पढ़ना आवश्यक है जिससे अर्थ स्पष्ट हो सकें, जैसे कि :

गुरा इक देहि बुझाई ॥
गुरा; इक देहि बुझाई ॥ (पन्ना २३२)
करमि मिलै नाही ठाकि रहाईआ ॥
(श्री गुरु ग्रंथ साहिब सटीक)
करमि मिलै; नाही ठाकि रहाईआ ॥ (पन्ना ८२९)
कहु नानक हम नीच करंमा ॥
कहु नानक, हम नीच करंमा ॥ (पन्ना ९२३)
(बाबा करतार सिंघ जी, दमदमी टकसाल)
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस ॥
केतीआ करम, भूमी, मेर केते केते धू उपदेस ॥ (पन्ना १२२)

(शेष पृष्ठ ६५ पर)

गुरसिखी बारीक है—२

-डॉ. सत्येन्द्र पाल सिंघ*

एक सच्चा सिख नित्तनेम में सम्मिलित पांच बाणियों का नित्य पाठ करता है तो साथ ही अरदास भी करता है। सिख रहित मर्यादा के अनुसार अमृत काल की बाणियों जपु साहिब, जापु साहिब और दस सवैयों के पाठ के बाद और सायंकाल सो दरु रहरासि साहिब के पाठ के बाद अरदास करना आवश्यक है। रहित मर्यादा में अरदास (प्रार्थना) का प्रारूप निर्धारित किया गया है। यही अरदास प्राय: सभी गुरुद्वारों और संगत में की जाती है और एक सिख वैयक्तिक रूप से भी यही अरदास करता है। यह अरदास संगत में की जाये अथवा वैयक्तिक रूप से, इसमें जुड़ना आवश्यक है। इस अरदास द्वारा हम जहां दस गुरु साहिबान और श्री गुरु ग्रंथ साहिब का ध्यान धरते हैं वहीं उन सभी का स्मरण भी करते हैं जिन्होंने गुरु साहिबान के बताये मार्ग पर चल कर तन और मन अर्पित किया। इसमें हम जहां परमात्मा से जुड़ने के सुख की कामना करते हैं वहीं सद्‌गुणों का दान मांगते हैं। स्वयं को पूरी तरह प्रभु के चरणों में समर्पित करते हुए अंत में हम सर्वकल्याण की प्रार्थना करते हैं। विश्व के सभी धर्मों में प्रार्थना की अपनी विधि है। सिख धर्म में स्वीकृत अरदास नितांत सादगी से भरी, मन में निर्मलता और पवित्रता उत्पन्न करने वाली और जीवन को क्रियाशील सदाचरण प्रदान करने वाली है। यदि कोई अरदास के स्वीकृत स्वरूप में अपनी तरफ से कुछ न कुछ जोड़ देता है तो इससे अरदास की मूल भावना प्रभावित होने की आशंका उत्पन्न हो जाती है। इससे बचना चाहिये। चढ़ावा चढ़ाने वालों के नाम अरदास में बोलना सिख मत के समानता के सिद्धांत के विपरीत है। इससे वे लोग स्वयं को तिरस्कृत महसूस करते हैं जो अधिक चढ़ावा नहीं चढ़ा सकते। गुरु-घर में सच्ची श्रद्धा एवं सच्चे प्यार का मोल है किसी अन्य चीज का नहीं :

ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ॥
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपु तारि, तारे कुल दोइ ॥ (पन्ना ८५८)

सम्मान उसी का है जो प्रभु के चरणों में लीन है। परमात्मा से जुड़े हुए दास की महिमा ही अलग है :

दास तुमारे की पावउ धूरा मसतकि ले ले लावउ ॥
महा पतित ते होत पुनीता हरि कीरतन गुन गावउ ॥ (पन्ना ७१२-१३)

सिख रहित मर्यादा के अनुसार अरदास के समय संगत में उपस्थित सभी लोगों को हाथ जोड़ कर खड़े होना चाहिये। अरदास करने वाले को श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समक्षत खड़े होकर अरदास करनी चाहिये। यदि श्री गुरु ग्रंथ साहिब उपस्थित नहीं हैं तो किसी भी दिशा में मुंह करके अरदास की जा सकती है।

सिख धर्म में गुरुद्वारों की महत्वपूर्ण भूमिका है। गुरुद्वारे एक सिख के जीवन की धुरी कहे

***E**-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. ९४१५९६०५३३

जा सकते हैं। गुरुद्वारे ही वे स्थान हैं जहां साधसंगत जुड़ती है। सिख रहित मर्यादा के अनुसार गुरबाणी का असर साधसंगत में अधिक होता है। एक सिख के लिये यह उचित है कि वह जोड़-मेले के स्थान गुरुद्वारों का दर्शन करे और साधसंगत में बैठकर गुरबाणी से लाभ उठाये।

गुरुद्वारों की व्यवस्था तो वैसे प्रबंधकों के जिम्मे होती है किन्तु हरेक सिख के लिये यह जानना आवश्यक है कि गुरुद्वारे की व्यवस्था कैसी होनी चाहिये। इसके दिशा-निर्देश सिख रहित मर्यादा में दिये गये हैं। सिख रहित मर्यादा के अनुसार गुरुद्वारे में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश प्रत्येक दिन नियमित रूप से होना चाहिये। यदि कोई विशेष कारण नहीं तो साधारण स्थिति में रात को प्रकाश नहीं होना चाहिये। रहरासि साहिब के पाठ के पश्चात सुखासन कर दिया जाना चाहिये। जब तक ग्रंथी, सेवादार सेवा के लिये उपलब्ध रहे, पाठी और दर्शन करने वाले आते रहते हों तब तक श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया जाये। इसके पश्चात किसी भी तरह के असम्मान को रोकने के लिये सुखासन किया जाना उचित है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब के प्रकाश और सुखासन के स्थल की स्वच्छता पर विशेष बल दिया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आसन को मंजी साहिब कहा जाता है। मंजी साहिब के ऊपर बिछा बिस्तर साफ-सुथरा हो। नीचे गद्दियां आदि रख कर ऊपर रुमाला डाला जाता है। जब पाठ न हो रहा हो तो श्री गुरु ग्रंथ साहिब के ऊपर रुमाला दिया जाना चाहिये। प्रकाश के समय चौर भी की जानी चाहिये। यह सम्मान प्रकट करने का सादगी भरा तरीका है। गुरुद्वारों में कदाचित सादगी को ही सुनिश्चित करने के ध्येय से धूप या दिये जलाकर आरती करने, भोग लगाने, जोत जगाने, घंटे-घड़ियाल आदि बजाने को वर्जित किया गया है। इसके साथ ही मंजी साहिब के पावों की मुट्ठियां भरना, दीवार अथवा फर्श पर नाक रगड़ने, गुरुद्वारे में मूर्तियां स्थापित करके अथवा गुरु साहिबान व अन्य के फोटो रखकर माथे टेकने आदि से भी मना किया गया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आसन के नीचे जल रख कर बाद में उसे पीना सिख रहित मर्यादा के विरुद्ध है। एक सच्चे सिख का कर्त्तव्य है कि स्वयं ऐसे आडम्बर-कर्मों से विरत रहे और अन्य लोगों को भी इस बारे में जागरूक बनाये।

किन बिधि मिलै गुसाई मेरे राम राइ ॥
कोई ऐसा संतु सहज सुखदाता मोहि मारगु देइ बताई ॥१॥रहाउ॥
अंतरि अलखु न जाई लखिआ विचि पड़दा हउमै पाई ॥
माइआ मोहि सभो जगु सोइआ इहु भरमु कहहु किउ जाई ॥१॥
एका संगति इकतु ग्रिहि बसते मिलि बात न करते भाई ॥
एक बसतु बिनु पंच दुहेले ओह बसतु अगोचर ठाई ॥२॥ *(पन्ना २०४-०५)*

एक ही शरीर के भीतर जीवात्मा और परमात्मा दोनों का वास है, किन्तु जीवात्मा परामत्मा से अनजान है, क्योंकि बीच में विकारों का पर्दा पड़ा हुआ है। मनुष्य ज्ञान से हीन है इसलिए दुख उठा रहा है। परमात्मा को पाने के लिये ज्ञान की ज्योति जलाकर अंतर को प्रकाशित करना होगा और ऐसा तभी संभव है जब साधसंगत में बैठकर गुरबाणी के भाव को

(शेष पृष्ठ ६२ पर)

सच्चे प्रेम का स्रोत व स्वरूप

-श्री सुरजीत दुखी*

प्रेम, भक्ति, सेवा और दृढ़-विश्वास ही गुरबाणी के आधार हैं जिन पर चल कर मनुष्य इस मातलोक से सचखंड तक का सफर तय कर पाता है।

इस लेख में एक ही आधार प्रेम पर चर्चा करेंगे ताकि प्रेम के वास्तविक स्वरूप और अर्थ को जाना जा सके।

यह प्रेम देखने में एक साधारण-सा शब्द है और हम सम्भवता यह कह देते हैं कि हमें आप से प्रेम है, लेकिन क्या इससे प्रेम हो पाता है? अथवा जैसे घर में एक बिजली का स्विच ऑन करने से हम पंखे की हवा, बल्ब की रोशनी व टैलीवीजन की स्क्रीन के ऊपर घूमते और बोलते चित्र देख पाते हैं क्या ऐसा कोई स्विच हमारे अंदर भी है जिसको ऑन करने से प्रेम उमड़ आता है।

हां, है हमारे अंदर स्विच, लेकिन इसका कनेक्शन टूटा हुआ है। जैसे पावर स्टेशन में जो बिजली पैदा की जाती है उसे घर के बल्ब तक लाने के लिए बहुत से कनेक्शन बनाए जाते हैं। पहले स्टैप डाऊन, ट्रांसफार्मर, फिर ओवर डैड लाइनें और फिर सब-स्टेशन। सब-स्टेशन से घरों तक पहुंचाने के लिए कहीं ओवरहैंड लाइन, कहीं अंडरग्राऊंड केबल और अंत में दो तारें लाकर मीटर को दे दी जाती हैं और घर की सभी इन्टरनल वायरिंग को मीटर के दूसरी ओर कनैक्ट कर एक लगातार कनेक्शन **Generating Station** के साथ बना दिया जाता है। फिर स्विच लगा कर वहां से यह कनेक्शन मेन और ब्रेक किया जाता है। अगर **Generator** से लेकर घर तक आने वाली लाईन या अंदर की वायरिंग में कहीं भी ब्रेक आ जाये तो सारा दिन स्विच ऑन-ऑफ करते रहें, बल्ब नहीं जलेगा।

उपरोक्त कनेक्शन के लाजिक से ही प्रेम की आधार परिभाषा को समझा जा सकता है।

जब हम कहते हैं कि हमें किसी से प्रेम है तो इसका अर्थ क्या है? यह कहां से उत्पन्न होता है और इसका लगातार कनेक्शन क्या है? वैसे तो हमें एक नौकर से भी बहुत प्यार है, लेकिन अगर हम उसे बैंकों में पैसे जमा करवाने के लिए भेज दें और उसे लौटने में देर हो जाये तो क्या हमारा प्रेम उससे रहता है? मन में अनेक संशय पैदा हो जाते हैं, यथा कहीं नौकर पैसे लेकर भाग ही न गया हो? कहीं उसने पैसे गुम ही न कर दिए हों? आओ, समझने का प्रयास करें कि कौन-सी चीज है जिसने हमारा विश्वास कमजोर कर दिया और प्रेम डगमगाने लगा? प्रेम तो विश्वास पर खड़ा था। विश्वास हमारा कमजोर हो गया और प्रेम धूमिल होने लगा। अगला कनेक्शन देखें तो इसे समझने के लिए एक मकान की नींव का उदाहरण काफी है। दीवार खड़ी करने के लिए हमें इसकी नींव बनानी पड़ती है। हमारे विश्वास का मकान हमारी स्वार्थ से निर्लेप भाव की नींव पर टिका हुआ है। हमारी स्वार्थ प्रायणता ने हमारे विश्वास को कमजोर किया जिससे हमारा प्रेम धूमिल हो गया, कनेक्शन टूट गया अथवा जंग लग गया।

फलत: प्रेम की पूर्ण परिभाषा के लिए सबसे पहले हमें अपने स्वार्थ को त्यागना पड़ेगा, तभी हमारा विश्वास बन पाएगा और उसके ऊपर प्रेम टिक पाएगा, फलत: हृदय में प्रेम का स्विच आन हो जायेगा।

दशमेश पातशाह इसी नि:स्वार्थ, विश्वसनीय प्रेम की व्याख्या करते हुए उस ईश्वर-मिलन के लिए कहा है :

. . . जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभु पाइओ ॥

(सवय्ये पा: १०)

*३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौर गेट, श्री अमृतसर।

केश, सिख की पहचान व गुरु का वरदान

*-स. इंदरजीत सिंघ**

गुरु-संवारे सिख बच्चे-बच्चियो और भाई-बहनो! किसी विद्धान ने कहा है :

"जिस कौम को नष्ट करना हो, उसके लोगों का कत्लेआम करने की ज़रूरत नहीं होती है, केवल उस कौम के इतिहास, संस्कृति और पहचान (स्वरूप) को नष्ट या विकृत कर दो, वह कौम स्वत: नष्ट अथवा लुप्त हो जायेगी।"

उदाहरण के लिये यदि हम दूसरों की तरह ही नज़र आयेंगे तो हमारी पहचान जो सारी दुनिया में जानी-पहचानी जाती है, हमेशा-हमेशा के लिये खत्म हो जायेगी। हम कितना ही कहें कि हम सिख हैं, कोई विश्वास नहीं करेगा। एक सिख के लिये उसका स्वरूप (पहचान) कितना महत्वपूर्ण होता है इसका अंदाजा मुझे तब हुआ जब मेरे जीवन में अचानक एक घटना घटित हुई। उस घटना का ब्योरा इस प्रकार है :

नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पर खड़ा मैं कानपुर आने वाली गाड़ी का इंतजार कर रहा था। सामने ही खड़े करीब ४२-४५ साल के एक कलीनशेवन व्यक्ति पर मेरी नज़र पड़ी तो वह मुझे देख रहा था। मुझे उसकी नज़र और चेहरे पर अजीब-से भाव नज़र आये। जब तक मैं उससे जाकर कुछ बात करता तब तक गाड़ी प्लेटफार्म पर लग चुकी थी। मैंने एक बार फिर उस व्यक्ति की तरफ देखा और जल्दी से अपने डिब्बे की तरफ बढ़ गया। मैं अपनी सीट पर जाकर बैठ गया। इत्तफाक से वह व्यक्ति भी उस डिब्बे में चढ़ रहा था। मुझे कुछ अजीब-सी नज़र से देखने वाले उस व्यक्ति पर मेरी नज़र रह-रह कर पड़ रही थी। वह अपने नंबर की सीट ढूंढता हुआ मेरे आगे वाली सीट पर आकर बैठ गया। गाड़ी चलने में अभी समय था। कुछ क्षण बीतते ही वह उठा और मेरे पास आकर बोला, "सति श्री अकाल इंदरजीत सिंघ जी!" मैं हैरान हो गया कि यह मेरा नाम कैसे जानता है और दूसरा, सिख न होने के बावजूद भी इतनी शुद्ध पंजाबी और सही लहजे में यह कैसे बात कर सकता है! मैं असमंजस में पड़कर उससे बोला—"भाई साहिब! माफ करना, मैंने आपको पहचाना नहीं।" मेरे इतना कहते ही वह मेरे पास वाली अभी तक खाली पड़ी सीट पर बैठ गया और मेरे कंधे पर अपना हाथ रखते हुए बोला—"मैं समझ गया था, प्लेटफार्म पर तू मुझे पहचान नहीं रहा था। मैं तेरे बचपन का दोस्त सतनाम सिंघ।"

मुझे सोचने में अब एक मिनट भी नहीं लगा। मेरे सामने उसके साथ बिताया हुआ एक-एक दिन आने लगा और स्कूल के दिनों की यादें मेरी आंखों के सामने किसी फिल्म के सीन की तरह पल-पल बदल रही थीं। कुछ क्षण मैं उन्हीं ख़्यालों में खोया रहा और जब मेरी तंद्रा टूटी तो मुझे उसकी शक्ल में वही सतनाम सिंघ नज़र आ रहा था। उन दिनों गुरु नानक स्कूल में नौवीं कलास में पगड़ी बांधना ज़रूरी होता था। वह रोज़ सवेरे मेरे घर पगड़ी

**१३३/२४६-ए, ट्रांसपोर्ट नगर, कानपुर-२०८०२३*

लेकर आता और मुझसे पगड़ी बंधवा कर मेरे साथ ही साइकिल पर स्कूल जाया करता था। टेढ़ी-मेढ़ी पगड़ी और नई-नई मूंछों की लकीर वाला वह चेहरा जिस पर हमेशा भोले-भाले भाव उभरते थे। मैं उसका अभिवादन स्वीकार करता या उसकी सति श्री अकाल का जवाब देता, मेरे होंठों को जैसे लकवा मार गया था। इस चुप्पी और मेरे चेहरे के भावों को पढ़कर वह मेरे अंदर का सारा हाल जान चुका था। मेरे मन की स्थिति थी कि मानो किसी हाथी ने अपना भारी पांव मेरी छाती पर रख दिया हो और मैं चाह कर भी कुछ बोल नहीं पा रहा हूं। यह स्थिति कुछ देर बनी रही। फिर मैं हकलाता हुआ बोला : "सतनाम सिंघ! यह तुमने अपने को क्या बना डाला?"

वह बोला—"यार, पढ़ाई पूरी कर मैं टोरांटो (कनाडा) चला गया। वहां नया-नया होने के कारण मुझे कई दिन नौकरी नहीं मिली। वहां पर सिख होने के कारण रात की ड्यूटी पेट्रोल पम्प आदि पर मिलती थी। अंत में अपनी जीविका चलाने के लिये और वहां पर टिका रहने के लिये मुझे अपने केश कटवाने पड़े।"

कुछ देर चुप रहने के बाद मेरे मन की व्यथा और रोष बाहर आ ही गया। मैंने उसे झिड़कने के अंदाज में बहुत दुख के साथ कहना शुरू कर दिया था : "सतनाम सिंघ! इसमें तुम्हारा कसूर नहीं है। कसूर तुम्हारे मां-बाप का और तुम्हारे परिवार द्वारा दिये गये संस्कारों का है। बचपन से ही तुम्हारे मां-बाप ने तुमको अपने धर्म और सिख इतिहास के साथ जोड़ा ही नहीं और न ही उन्होंने तुम्हें अपने धर्म के गौरव से ही कभी अवगत करवाया। यह काम वो करते भी कैसे क्योंकि सिख धर्म की सही जानकारी उनको खुद भी नहीं थी और वे सिख उसूलों से कोसों दूर थे! इसलिये तुम्हारे परिवार की उदासीनता का ही परिणाम है तुम्हारा यह बिगड़ा हुआ रूप। यदि तुम्हारे माता-पिता को अपने धर्म की सही जानकारी होती तो तुम्हारा यह हाल न होता।"

वह मेरी इन बातों को सुन तो ज़रूर रहा था और शर्मिन्दा भी हो रहा था, लेकिन क्या वास्तव में उसके मन में कोई ग्लानि थी, ऐसा मुझे प्रतीत नहीं हो रहा था। मैं आगे कहता ही जा रहा था—"तुमने अपना परिचय 'सतनाम सिंघ' कह कर करवाया था। अब न तो तुम "सिंघ" ही कहलाने के काबिल रहे हो और न ही "सतनाम" से तुम्हारा कोई वास्ता है। अच्छा होता यदि तुम अपने स्वरूप को बदलते वक्त अपने नाम को भी बदल लेते!"

वह खामोश था और मैं कह रहा था। ट्रेन कब गाजियाबाद स्टेशन पार कर चुकी थी हमें मालूम ही नहीं पड़ा, क्योंकि बगल वाली सीट पर कोई आया ही नहीं था या शायद वह अलीगढ़ से बुक थी। काफी देर तक मैं अपने मन के गिले निकालता रहा—"दोष तुम्हें क्या दूं, तुम्हारे मामले में तो शत-प्रतिशत कसूर तुम्हारे माता-पिता का ही है। बचपन में मैंने तुम्हारे पिता जी को कई बार सिख सिद्धांतों, गुरुद्वारों के ग्रंथियों और रागी सिंघों की खिल्ली उड़ाते देखा है। मुझे याद है, जब कोई सियाना या बुजुर्ग सिख तुम्हारे पिता जी की दाढ़ी के कटे हुए बाल देख कर कुछ समझाने की कोशिश करता तो तुम्हारे पिता जी उस बुजुर्ग सिख का अपमान करते हुये कहते—"इन केशों पर कौन-से आम लगने हैं जो इन्हें सम्भाल कर रखूं?" तुम्हारे पिता जी की ऐसी बातें सुन कर मुझे बहुत बुरा लगता था, लेकिन छोटा होने के कारण उनसे कुछ कह नहीं पाता था। तुम्हारी

दुकान पर दूसरे धर्म के देवी-देवताओं की मूर्तियां गुरुओं की फोटे के साथ रखी देखकर एक दिन तुम्हारे पिता जी से मेरी बहस हो गयी। उस दिन उन्होंने कुछ महसूस करने और समझने के बजाय मुझे काफी उल्टी-सीधी सुना कर वहां से विदा किया था। उसके बाद मैंने कभी भी उनके मुंह लगना उचित नहीं समझा। तुम्हारे बड़ों के यही संस्कार तुम्हारे इस बिगड़े रूप के लिये जिम्मेवार हैं। जिस घर के बड़े ही सिखी से टूट चुके हों वे अपने बच्चों को क्या शिक्षा और दिशा देंगे?"

मैं काफी कह चुका था और अब वह इतना शर्मिन्दा और उदास हो चुका था कि मैंने अब उसे ज्यादा कुछ कहना उचित न समझा और शांत हो गया। उसका एक हाथ जो अभी भी मेरे कंधे पर था, उसे और कसता हुआ अपने चेहरे पर मुस्कराहट लाता हुआ वह बोला—"मेरे दोस्त! तू जरा भी नहीं बदला, बिलकुल वही आदत। तुम्हारी बात में भले ही सच्चाई होती थी लेकिन फिर भी हर दोस्त तुझसे दूर हो जाता था, क्योंकि सच हमेशा कड़वा होता है और हर व्यक्ति कड़वा निगल नहीं सकता। काश! इस कड़वे सच को मैं पहले समझ पाता।"

अब उसके चेहरे पर पश्चाताप झलक रहा था। बात करता-करता वह कुछ उदास हो गया था। फिर तुरंत ही अपने चेहरे के उदास भाव की जगह मुस्कराहट लाते हुए बोला—"चल यार, तूने बहुत लम्बी कलास ले ली मेरी। और बता अपने परिवार के बारे में, कितने बच्चे हैं? किसी की शादी की कि नहीं . . .?" कई सवाल उसने एक ही सांस में पूछ डाले थे। उसकी ये बातें मेरे अंदर कोई सहानुभूति तो पैदा नहीं कर पाई थीं लेकिन यह ज़रूर था कि उसके इस व्यवहार और बातों से मेरे अंदर उसके प्रति बचपन की दोस्ती अवश्य याद आने लगी थी। मैंने भी उसकी बातों का जवाब धीरे-धीरे देना शुरू कर दिया तथा और अपने बच्चों तथा परिवार के बारे में बताने लगा। दोनों के चेहरों पर पहली बार कुछ हंसी आई और एक क्षण चुप रहने के बाद शिष्टाचार के नाते मैंने भी उससे पूछ लिया—"तेरे परिवार में कौन-कौन हैं? मेरे प्रश्न करते ही उसके चेहरे पर हंसी की जगह उदासी ने ले ली। उसके चेहरे पर दुख और पीड़ा स्पष्ट झलक रही थी। मेरे प्रश्न का उत्तर उसने नहीं दिया और वह चुपचाप बैठा रहा। मेरे कई बार पूछने पर वह गहरी सांस लेता हुआ बोला—"यहां से जाने के बाद एक एन. आर. आई. सिख लड़की, जो कलीन शेवन सिख से शादी करना चाहती थी, से मैंने शादी कर ली। दो बच्चे—बड़ी लड़की और छोटा लड़का।" वह बताता-बताता फिर चुप हो गया। उसकी आंखों में आंसू डबडबा आये थे। मेरे काफी पूछने पर बोला—"वीर! तेरी भाभी कुछ आज़ाद ख़्यालों की होने के कारण मेरे साथ रह न सकी और छः साल की बेटी और चार साल का बेटा छोड़कर चली गयी। मां को वहां बुला कर किसी तरह बच्चों की परवरिश की। सत्रह साल की उम्र में लड़की एक ईसाई लड़के के साथ घर छोड़ कर चली गयी। लड़का भी मेरी तरह हो गया है, मतलब, उसने भी बाल कटवा दिये।" मैंने कहा- "यहां वापस आ जाता!" वह बोला—"वीर! सब कुछ पैसा कमाने के चक्कर में इतनी जल्दी हो गया कि मैं कुछ कर ही न सका। तुम ठीक कहते हो। मैं अपने समाज में रहता तो अपने धर्म से जुड़ा रहता और शायद मेरा यह हाल न होता!" मैंने उसे ढांढस बंधाते हुए कहा—"जो वाहिगुरु को

मंजूर होता है वही होता है।" वह मेरी बात काटता हुआ बोला—"नहीं वीर, गलतियां तो मेरी अपनी ही हैं। अपने धर्म और समाज से जुड़ा रहता तो वाक्यी मेरा यह हाल न होता, क्योंकि अपने समाज में यदि कोई धर्म के विरुद्ध गलत काम करे तो लोग उसे चितारते हैं और उसकी आलोचना भी करते हैं। अपने समाज की देखा-देखी शायद बच्चे भी अपने धर्म और इतिहास से जुड़ जाते और इस तरह पतित न होते। अब तो यार, पूरी खेती ही उजड़ चुकी है, इसका एक-एक दाना बिखर चुका है, जिन्हें शायद मैं किसी जन्म में भी इकट्ठा नहीं कर पाऊंगा . . . .।" अपने आप को पश्चाताप में वह कोसता ही जा रहा था और उसकी आंखों से आंसुओं की एक धारा-सी बह रही थी। अलीगढ़ स्टेशन आने ही वाला था। उसने वहां उतरना था। कंपनी के किसी काम से वह भारत आया हुआ था। हमने एक-दूसरे को अपने-अपने विजिटिंग कार्ड दिये और उसे मैं डिब्बे के गेट तक छोड़ने आया। वह भावुक होकर गले से लग गया और फफक कर रो पड़ा। मेरी भावुकता के सारे बांध भी टूट चुके थे। मेरे आंसू भी रुक नहीं रहे थे। उसने हाथ मिलाया और धीरे-धीरे प्लेटफार्म पर निकल पड़ा, मुड़-मुड़ कर देख लेता और हाथ उठा कर हिला देता। मैं भी एक हाथ से अपने आंसू पोंछ रहा था और एक हाथ हिला कर उसको विदा कर रहा था। वह धीरे-धीरे आंखों से ओझल हो चुका था। गाड़ी अपनी रफ्तार पकड़ चुकी थी, लेकिन दरवाजे के पास ही खड़े-खड़े मेरे मन में कई विचार आ रहे थे कि सतनाम सिंघ के पास पैसे के अलावा कुछ भी नहीं बचा है। उसका यह हाल न होता यदि उसके मां-बाप सिख धर्म और इतिहास के जानकार होते। उनके धार्मिक न होने के कारण वे अपने समाज से ही टूट गये और उन पर किसी प्रकार का कोई अंकुश ही न रहा। धर्म और समाज का अंकुश मनुष्य को पतित होने से सदैव बचाता है। धर्म मनुष्य को जीवन-यापन का सही तरीका सिखाता है और अपने समाज के साथ जोड़े रखता है। धर्म द्वारा बना यह समाज हमेशा दुख-सुख में साथ देता है।

प्यारे वीरो और बहनो! यह घटना केवल एक सतनाम सिंघ के साथ ही घटी घटना नहीं बल्कि आजकल कई सिख परिवार अपने धर्म के सिद्धांतों और उसूलों से अपने को बहुत दूर ले जा चुके हैं। जो व्यक्ति अपने गुरुओं, अपने बड़ों और अपने समाज की परवाह करना छोड़ देता है वह उनका सम्मान करना छोड़ उनका अपमान करना शुरू कर देता है और फिर ऐसे ही व्यक्ति पतित होते हैं।

केश कटवाने वाला सिख शायद यह सोचता है कि वह केश कटवा कर बहुत खूबसूरत दिखेगा। यह केवल उसकी गलत मानसिकता और भ्रम होता है। सिख परिवार से संबंधित एक कटे हुए केशों वाले युवक का चेहरा वास्तव में विकृत और कुरूप लगने लगता है। उसका चेहरा तेजहीन और बनावटी-सा लगता है।

ये केश और चेहरे के बाल अथवा दाढ़ी-मूछें ही तो हमारी पहचान हैं। एक सिख पूरी दुनिया में कहीं भी चला जाए उसे अपना परिचय देने की कोई ज़रूरत नहीं पड़ती। हमें देखते ही लोग "सिंघ साहिब" या "सरदार जी" कह कर पुकारते हैं। क्या कभी किसी ने हमसे यह पूछा है कि हम किस जाति या धर्म से सम्बंध रखते हैं? हमारा रूप ही हमारी पहचान है। हमें दशम पिता द्वारा बख्शे गये स्वरूप पर

गर्व होना चाहिये, क्योंकि यह स्वरूप ही हमें दूसरों से 'अलग' और 'न्यारा' बनाता है और इन केशों और रूप के अस्तित्व को बचाये रखने के लिये ही दशम पिता ने अपना सारा वंश कुर्बान कर दिया था। नवंबर सन् १९८४ के सिख जनसंहार में कई सिखों ने गले में जलते टायर डलवा कर मौत को गले लगा लिया, लेकिन केश नहीं कटवाये। केश कटवा कर क्या वे हमेशा जीवित रहेंगे? मौत तो हर किसी को आनी ही है। किसी को कुछ जल्दी और किसी को कुछ देर से, तो फिर क्यों न हम अपने सिखी-स्वरूप में जीवन गुजारते हुए गर्व से जीने का सबक लें? साहिबज़ादा अजीत सिंघ जी, साहिबज़ादा जुझार सिंघ जी, साहिबज़ादा जोरावर सिंघ जी, साहिबज़ादा फतेह सिंघ जी, भाई तारू सिंघ जी शहीद, भाई मनी सिंघ जी शहीद, भाई दयाला जी, भाई गुरबख्श सिंघ जी, बाबा दीप सिंघ जी शहीद, बाबा बंदा सिंघ जी बहादर तथा गुरु के अन्य अनगिनत सिखों ने अपने प्राण इन केशों सहित सिखी की खातिर हंसते-हंसते न्योछावर कर दिये थे। गुरु के इन सिखों ने अपना धर्म नहीं छोड़ा और सिखी केशों-श्वासों के साथ निभाई। क्या उन अनगिनत शहीदों के बलिदान इतने तुच्छ थे कि उनके वारिसों ने उन्हें इतनी जल्दी भुला भी दिया?



गुरसिखी बारीक है-२

(पृष्ठ ५६ का शेष)

मन में धारण करें। गुरुद्वारे अध्यात्म-ज्ञान का केन्द्र हैं। यहां जाकर तो मन के भ्रम को दूर करना है।

अत: सिख रहित मर्यादा पूरी तरह गुरबाणी के अनुरूप है इसी लिये यह पूरी तरह व्यवहारिक भी है। कई बार श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप को एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने की आवश्यकता पड़ती है। सिख रहित मर्यादा के अनुसार जिसने श्री गुरु ग्रंथ साहिब को सिर पर उठाया हो उसे नंगे पांव चलना चाहिये, किन्तु यदि किसी अवसर पर जूते पहनने की अति आवश्यकता पड़ जाये तो पहन लेने चाहिये, भ्रम नहीं करना चाहिये। यह छोटी-सी बात बहुत महत्वपूर्ण है।

गुरुद्वारों में मूर्तियों, फोटो आदि की स्थापना तो वर्जित है ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब के समतुल्य किसी पुस्तक की स्थापना भी नहीं की जा सकती। सिख मत की मान्यताओं के प्रतिकूल कोई संस्कार या त्यौहार मनाने से भी मना किया गया है। इसका उद्देश्य श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सत्ता को बनाये रखना और किसी भी भ्रम का निराकरण करना तो है ही सिख मान्यताओं की पवित्रता को भी कायम रखना है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बराबर कोई सत्ता नहीं है ऐसा स्वीकार्य भी होना चाहिये और दिखना भी चाहिये। श्री गुरु ग्रंथ साहिब को शबद-गुरु का सम्मान दिया जाता है। गुरबाणी के विचार के अनुकूल ही एक सच्चे सिख के विचार होने चाहिये। इससे वह निहाल हो जाता है :

तनु मनु सीतलु होइआ रसना हरि सादु आइआ ॥
सबदे ही नाउ ऊपजै सबदे मेलि मिलाइआ ॥
बिनु सबदै सभु जगु बउराना बिरथा जनमु गवाइआ ॥
अंम्रितु एको सबदु है नानक गुरमुखि पाइआ ॥
(पन्ना ६४४)

चिंता छडि अचिंतु रहु . . .

-स. रमेश सिंघ*

अकाल पुरख परमात्मा की भांति ही उस परमात्मा की कृपा भी अनंत है तथा इसकी अनंतता का अनुभव भी प्रभु की रहमत द्वारा ही होता है।

२६. ११. ९९, दिन रविवार। भारत न्यूजीलैंड की टीमों में क्रिकेट मैच चल रहा था, नागपुर के विदर्भ क्रिकेट स्टेडियम में। मैं भी टी. वी. पर मैच देख रहा था, अपने घर जमशेदपुर, (झारखंड) में। गुरबाणी के अनुसार मनुष्य के जीवन में एक पल में ही कैसे उल्टफेर हो सकता है, यह याद आया जब मेरे छोटे भाई सरवन सिंघ ने ४ बजे खबर दी, "नागपुर से फोन आया है कि आपका पुत्र रविंदर सिंघ (जो वहां SFS College में B. A. Second year का विद्यार्थी था) क्रिकेट मैच के दौरान स्टेडियम की कोई दीवार गिर जाने के कारण घायल हो गया है तथा उसे अस्पताल में भर्त्ती कराया गया है और आपको शीघ्रातिशीघ्र पहली ट्रेन से नागपुर पहुंचने के लिए ताकीद है।

"जो होआ होवत सो जानै ॥ प्रभ अपने का हुकमु पछानै ॥" गुरबाणी के इस संदेश को दृढ़ करवा कर प्रभु ने मन को डोलने से बचा लिया। मैं रात ११ बजे जाने वाली हावड़ा-मुंबई मेल पकड़ने के लिए आटोरिक्शा के इंतजार में घर के निकट सड़क पर खड़ा था। ५-६ रिक्शे निकल गये, सारे भरे हुए थे। इसी बीच एक रिक्शा, जो भरा होने के कारण पहले आगे निकल गया था, वापस लौट कर आया और उसमें बैठे दो पूरी तरह अनजान लोग कहने लगे, "हमने इस ड्राइवर से कहा, भाई देखो! सरदार जी स्टेशन जाने के लिए खड़े हैं, उनको भी बिठा लो, हम थोड़ा दब कर बैठ जायेंगे, इसलिए हम इसे लौटा कर लाये हैं।" मैंने उनका धन्यवाद किया। सामान रख कर बैठ गया और मन से प्रभु का धन्यवाद निकला, "कमाल है प्रभु! न जान न पहचान। इनमें से आप प्रकट होकर अपना प्यार दिखा कर हिम्मत दे रहे हैं कि मैं तुम्हारे साथ हूं। धन्य है आपकी लीला! एक तरफ तो कर्मों के खेल के तहत बच्चे को दुख आया है, पर दूसरी ओर आप साहस और प्यार द्वारा उसे सहने की शक्ति दे रहो हो।"

स्टेशन पहुंचा, कोई रिजर्वेशन न थी। पूरी ट्रेन में केवल एक ही Unreserved Coach रहता है, ५०-६० लोग चढ़ने वाले थे। छोटे से डिब्बे में ५००-६०० की भीड़ थी, पर इतनी-सी जगह मिल गई थी कि अपना अटैची रखकर उस पर बैठ जाता।

जहां तक चोट का सवाल था, वह तो हैरानी वाली बात थी। ४० फुट की ऊंचाई से कोई गिरे (जैसा रविंदर सिंघ गिरा था) और केवल छोटा-सा fracture हो कलाई में, स्पष्ट था प्रभु ने स्वयं हाथ देकर बचा लिया है। एक और कमाल यह हुआ कि सतसंग में सुनी प्रभु की बातें—दुख और सुख को एक समान समझना, दुख में सुख मनाना, रजा में राजी रहना, प्रभु की आज्ञा को सहर्ष स्वीकार करना आदि याद आ रही थीं तथा प्रभु ने मन को डोलने से बचा लिया।

प्रभु-कृपा से यह संयोग देखिये कि दुर्घटना

*C-131, Sonari West, Jamshedpur-831011 (Jharkhand)

वाले दिन स. भगवंत सिंघ दिलावरी (मेरे सतसंगी पापा) अमरावती स्थित अपने कुष्ठ आश्रम से नागपुर आये हुए थे। उन जैसे महापुरुषों की उपस्थिति ही बहुत बड़ा सहारा थी। वे खबर मिलते ही स्वयं अस्पताल पहुंचे तथा बच्चे की निगरानी में बैठ गये। मेरे एक सतसंगी भाई दविंदर सिंघ (जो रविंदर सिंघ के लोकल गार्जियन भी थे) का सारा परिवार भी वहां पहुंच चुका था। मुझे सूचना देने के अलावा उन्होंने डॉक्टरों से बातचीत तथा हर प्रकार की देखभाल, जो माता-पिता अपने बच्चे के लिए करते हैं, की तथा बाकमाल तरीके से हालात को संभाला। कुछ डॉक्टर पापा के परिचित निकल आये, कोई दविंदर सिंघ जी के परिवार के। कहने का तात्पर्य यह कि प्रभु ने स्वयं चारों ओर से मदद भेजी।

रविंदर सिंघ के होस्टल के साथियों ने यह फैसला किया कि वह जब तक अस्पताल में रहेगा, उसके दो मित्र हर वक्त उसके पास रहेंगे। उन बच्चों का प्यार भुलाया न जा सकेगा, क्योंकि वे प्रभु-प्यार के प्रतीक थे।

भाई दविंदर सिंघ जी और उनकी पत्नी बहन कुलबीर कौर, रविंदर सिंघ के अलावा प्रतिदिन अमृत वेला में सतसंग करने के बाद ५.३०-६.०० बजे चाय का एक बड़ा फलास्क भर कर वार्ड के अन्य मरीजों को भी बांटते। उनकी यह सेवा-भावना देख एक मरीज ने कहा, "प्रभु के आशीर्वाद- स्वरूप, सरदार जी आप तो कमाल कर रहे हैं। मैंने ऐसी उदारता बहुत कम देखी है। हजारों में शायद कोई ऐसा करता हो।" पापा कह रहे थे, "देख लीजिये, यदि कोई सेवा करना चाहे तो हर वक्त अवसर मौजूद है। यदि और कुछ न हो तो अस्पतालों में चाय बांट कर भी मरीजों की सेवा की जा सकती है।"

प्रभु की अपार रहमत की एक और झलक। एक-दो दिन बाद परिस्थिति की गंभीरता का अनुमान हो जाने पर रविंदर सिंघ भी सहज में आ गया था, चोट भी अन्य लोगों के मुकाबले कम थी। (लगभग १५ व्यक्ति तो इस दुनिया से जा चुके थे, जिनका गहरा दुख है।) इस प्रकार प्रभु ने सारा प्रबंध कर मुझ जैसे निकम्मे को यह विचार दिया कि वार्ड के अन्य मरीजों के साथ भी प्रभु का प्यार बांटा जाये। एक जवान बच्चा जिसकी **pelvic bone** व छाती की तीन **ribs** में **fracture** था, बड़ा घबराया हुआ था। जब उसके साथ कुछ देर प्रभु की बातें कीं तो अंदर से ही प्रभु ने उसे हौंसला दिया तथा वह कहने लगा, "मुझे इन बातों से बड़ी हिम्मत मिली है। मेरे मन की घबराहट अब शांत हो गई है।" गुरु से प्राप्त सूझ के अनुसार मैंने उससे कहा, चिंता करने की बजाय हर वक्त प्रभु का नाम जपते रहो, तुम्हें अपना दुख भूल जायेगा तथा दुखी होने की बजाय मन से प्रभु का धन्यवाद निकलेगा। प्रभु ने एक अन्य अति गरीब मरीज (जो बेहोशी में था) की पत्नी की कुछ आर्थिक सहायता करने की प्रेरणा दी। भाई दविंदर सिंघ प्रतिदिन उसके लिए खाना ले जाते तथा उसे पहनने के लिए एक साड़ी भी दी। प्रभु ने स्वयं पहले सूझ भरी, फिर उस पर अमल करने का बल दिया, सबको अपना समझ कर प्यार करवाया। बात तो सारी कृपा की है।

पापा (दिलावरी जी) को इस वर्ष शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर द्वारा दिये गये "भक्त पूरन सिंघ सम्मान" के अधीन जो एक लाख रुपये की राशि प्राप्त हुई थी, उससे वे गरीबों, अनाथों, दुखियों की मदद के लिए "गुरु ग्रंथ साहिब चेरिटेबल सोसायटी" बना रहे थे। उस गरीब महिला को दी गई मदद के बारे में वे कहने लगे कि यह सोसायटी से लाभ पाने वाली पहली महिला है।

प्रभु-कृपा की एक और मिसाल। महाराष्ट्र

सरकार द्वारा स्टेडियम में घायल हुए लोगों को दी जाने वाली आर्थिक सहायता के तहत रविंदर सिंघ को भी पांच हजार रुपये मिले। प्रभु ने मन में यह विचार पैदा किया कि इन रुपयों की हमें कोई आवश्यकता नहीं, हमने क्या करने हैं? क्यों न यह पैसा सोसायटी को दे दिया जाये। है न कमाल! प्रभु ने स्वयं योजना बनाई। फिर मन में यह विचार भरा तथा पुन: उसे कार्यान्वित किया। *"करन करावन आपे आपि"* गुरबाणी भी यह सच्चाई स्पष्ट प्रकट करती है।

आम तौर पर यह देखने-सुनने में आता है कि अस्पतालों, विशेषत: सरकारी अस्पतालों के डाक्टर प्राय: मरीजों की ठीक देखभाल नहीं करते, परंतु यहां तो डॉक्टरों का रवैया, प्यार व मरीजों के प्रति उनकी सेवा और लग्न देख कर हम सब हैरान थे। यह सब कुछ देख कर प्रभु की कृपा याद आनी स्वाभाविक थी।

परंतु इन सबसे ऊपर कृपा की जो बात अनुभव में आई वह यह थी कि मेरी यह नागपुर यात्रा एक सतसंग फेरी बन गई थी। २६-११-९५ से ३०-११-९५ तक (सिवाय एक दिन के) पापा की मौजूदगी प्रभु की हजूरी का एहसास कराती थी। हम सब प्रतिदिन अमृत वेला में श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर से प्रसारित होने वाला कीर्तन सुनते, गुरबाणी विचारते तथा फिर दिन में जब भी अस्पताल से फुर्सत मिलती, कहीं न कहीं बैठ कर सतसंग में जुड़ते। मन में बार-बार गुरबाणी का यह आदेश याद आ रहा था : *"चिंता छडि अचिंतु रहु नानक लगि पाई ॥"* (प्रभु-चरणों में लगकर चिंता त्याग अचिंत हो जाओ।)

कहते हैं कि **"Count your blessings in adversity."** जब विपत्ति आई हो तो (शिकायत छोड़ कर) प्रभु की कृपा को याद करो। मैं सोच रहा था, प्रभु! यह याद करना भी तो तुम्हारी कृपा के बिना नहीं हो सकता, पर यदि तू स्वयं कृपा कर याद कराये तो मेरे जैसा नीच, नालायक और पापी भी दुख में सुख मनाने योग्य हो जाता है। बात तो आखिर प्रभु-कृपा की है।



गुरबाणी का शुद्ध उच्चारण

(पृष्ठ ५४ का शेष)

केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु ॥
केतीआ सुरती, सेवक केते, नानक, अंतु न अंतु ॥ *(पन्ना १२३)*
(गुरबाणी-व्याकरण में से प्रो. साहिब सिंघ जी)
सोई चंदु चड़हि से तारे सोई दिनीअरु तपत रहै ॥
सोई चंदु, चड़हि से तारे सोई दिनीअरु तपत रहै ॥ *(पन्ना ८०)*
(बलि उचारण से प्रि. सतिबीर सिंघ जी)
मन मेरे करते नो सालाहि ॥
सभे छडि सिआणपा गुर की पैरी पाहि ॥
मन मेरे! करते नो सालाहि ॥
सभे छडि सिआणपा, गुर की पैरी पाहि ॥ *(पन्ना १२३)*
(ज्ञानी हरबंस सिंघ जी द्वारा लिखित निरबान कीरतन से)

सहायक पुस्तकों की सूची
१) शबदांतिक लगां मात्रां दे गुज्झे भेद (पंजाबी) -प्रिं. तेजा सिंघ
२) गुरबाणी विआकरण (पंजाबी) -प्रो. साहिब सिंघ
३) जवाब-उल-जवाब (पंजाबी) -प्रिं. हरिभजन सिंघ
४) सिंघ सभा पत्रिका (अगस्त १९७७) (पंजाबी) -ज्ञानी गुरदित्त सिंघ
शुद्ध गुरबाणी उच्चारण अंक के कुछ लेख :
१. गुरबाणी दा शुद्ध पाठ -स. नरैण सिंघ
२. शुद्ध गुरबाणी उचारण -भाई जोगिंदर सिंघ
३. गुरबाणी विआकरण दे सरल नेम -ज्ञानी हरबंस सिंघ
४. शुद्ध गुरबाणी उचारण -प्रिं. हरिभजन सिंघ
५. गुरबाणी दीआं लगां मात्रां दी महत्तता -भाई रणधीर सिंघ



कविता

पूजा से हवस तक

-श्री काशीपुरी कुंदन*

जो धरती के समान सहनशीलता,
आकाश के समान अनिश्चितता,
सूरज की भांति ज्जवलनशीलता,
और चन्द्रमा के समान शीतलता ढोती है,
वही दुर्भाग्य से नारी होती है।
सौंदर्य का फूहड़ विज्ञापन,
हैवानियत का नग्न-नर्तन,
सुरक्षा की दयनीय व्यवस्था,
तीनों ही जिम्मेदार होते हैं।
यह वो देश है जहां, हर घंटे दस बलात्कार होते हैं।
ऐटम बम के युग में, इंसानियत जार-जार रोती है।
पूछो उस नारी से, जो बलात्कार का शिकार होती है।
लेकिन ठहरो, मेहरबानी करके तुम,
पुलिस की तरह मत पूछना।
बची-खुची इज्जत को, तफ्तीश के नाम पर मत नोचना।
पता नहीं हमारे देश की पुलिस क्यों,
कभी-कभी भक्षक भी प्रमाणित होती है।
बलात्कारशुदा स्त्री कानूनी कार्यवाही के चक्कर में,
थाने में और ज्यादा अपमानित होती है।
एक रिपोर्ट लिखी नहीं जाती,
लिख ली गई तो अपराधी गिरफ्तार नहीं होता।
गिरफ्तार हो भी गया तो,
जमानत में तुरंत छूट जाता है।
पता नहीं कितनी स्त्रियों के भाग्य का भांडा,
ऐसे ही फूट जाता है।
अगर मामला अदालत तक पहुंचा
तो और भी अजब रंग लाता है।
बलात्कारशुदा स्त्री से भरी भीड़ में,
सब कुछ पूछा जाता है।
अदालत की कार्यवाही,
उसकी शेष बची इज्जत को खाक करती है।
जिसके साथ बहुत बड़ा अन्याय हुआ है,
उसके साथ अक्सर, अदालत ही मजाक करती है।
अदालत तो केवल गवाहों पर भरोसा करती है।
अरे, गवाहों के सामने क्या ऐसी दुर्घटना हुआ करती है?
अपमान का यह सिलसिला,
सारी अदालती प्रक्रियाओं से होकर गुजरता है।
अगर चश्मदीद गवाह हो भी तो क्या,
वह किसी भय से नहीं मुकरता है?
उसी परिवेश में रहने वाला गवाह क्या असहाय नहीं होता?
जो न्याय देर से मिले वो न्याय नहीं होता।
मगर हमने देखा है, सरेआम होते हुए न्याय की तस्करी।
प्रमाणित अपराधी भी हो जाता है बाइज्जत बरी।
बलात्कार की गई स्त्री, जीवन भर मुंह छुपाकर रोती है।
और यह उस देश की बात है,
जहां कहते हैं कि 'नारी की पूजा' होती है।



*मातृछाया, मेला मैदान, राजिम, रायपुर (छत्तीसगढ़)-४९३८८५

कविता

आत्म-विश्लेषण

*-स. मदनपाल सिंघ 'चिंतक'**

रात दिन घोर श्रम कर,
पड़ोसी ने ले ली कार।
तू क्यों जलता देख कर,
बुरे करे विचार?
बुरे करे विचार तू मनवा,
तुझे समझ न आए
भगवान के घर देर है,
पर नहीं अन्याय।
जो तूने पाया शुक्र कर,
न तू हो निराश।
करता रह तू कर्म को,
कर अटूट विश्वास।
कर अटूट विश्वास तू,
सुन ले मेरे भाई।
रखता नहीं उधार वो,
देता पाई-पाई।
जो कुछ बोल वो समझ कर,
ज्यादा मुंह न खोल।
यदि ऐश न हुई तो,
सुनने पड़ें कुबोल।
सुनने पड़ें कुबोल,
बात और बढ़ जाए,
निकलें बोल जो मुंह से,
न वापस आएं।
आग लगी पड़ोस में,
मनवा सेंके हाथ।
बातें करे बैठ कर,
मिलकर संग के साथ।
मिलकर संग के साथ,
बैठा जश्न मनाए।
न जाने यही आग,
इसको कब खा जाए!
नेकी कर मेरे भाई तू,
सलाह तू मेरी मान।
फल की आस तू छोड़ दे,
देगा तुझे भगवान।
देगा तुझे भगवान,
ये ठान ले मन में।
क्यों होता तू परेशान,
व्यर्थ ही गम में?
दिन गंवाया देख-सुन,
सोए गवाई रात।
मंदा-चंगा बोल कर,
साल बीत गए साठ।
साल बीत गए साठ,
अब भी अक्ल न आई।
भैंस के आगे बीन बजी,
कुछ कर न पाई।
बेचते-बेचते मूंगफली,
एक लड़का आया पास।
खा लो बाबू इसे तो,
हो जाए टाईम पास।
हो जाए टाईम पास,
इसे खा लो बौस।
करना था, सो न कर सके,
अब क्यों करे अफसोस?



**231, Gaana Residency, Behind Dayanand Sagar College, Kumaraswamy Layout, Bangalore-560078*

गुरबाणी राग परिचय : २०

राग मारू : *गुर सतिगुर अलखु लखाइआ*

*–स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में राग मारू में बाणी राग क्रमांक २१ पर पन्ना ९८९ से ११०६ तक ११८ पन्नों में अंकित है। विस्तार की दृष्टि से राग गउड़ी तथा राग आसा के बाद राग मारू का तीसरा स्थान है। राग गउड़ी तथा राग रामकली के अन्तर्गत विस्तृत पावन बाणियां सुखमनी साहिब तथा अनंदु साहिब हैं, किन्तु मारू राग में इस प्रकार की श्रृंखलाबद्ध बाणी नहीं है। मारू राग की विशेषता इस राग में संकलित सोलहे छंदों की है जिनका संकलन केवल इसी राग में मिलता है। सोलहा छंद की एक इकाई में ही १६ चरणों में प्रभु-चिंतन और प्रेम का विवेचन किया जाता है। इस प्रकार राग मारू में आधे से अधिक भाग (६६ पन्नों) में ६२ सोलहों का संकलन है। सोलहों में विचार प्रतिपादन प्रौढ़ और परिपक्व है। जब श्री गुरु ग्रंथ साहिब को 'गुरु' रूप में स्थापित किया गया तब उस समय लिया गया वाक राग मारू से था और इसी भावना का द्योतक था :

अब मोहि जीवन पदवी पाई ॥
चीति आइओ मनि पुरखु बिधाता संतन की सरणाई ॥ *(पन्ना १०००)*

भाग्य खुल गया, प्रभु की कृपा हुई, जिससे अब हरि-नाम का कीर्तन करता हूं। जीवन में स्थिरता आई, सभी भटकन और भागदौड़ का श्रम दूर हुआ। अब मुझे जीवन-पद प्राप्त हुआ है, मन जगत के विधाता परम पुरख में लगा है और संतों की शरण प्राप्त हो गई है।

मारू राग का उल्लेख श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दी गई राग माला में राग मालकउस के पुत्र के रूप में किया गया है : आठ पुत्रों में प्रथम स्थान मारू का है, मारू, मसत, अंग मेवारा। यह मिश्रित राग है। इसमें आसा, भैरवी, टंक तथा इराक रागों का समन्वय है। मारू को एक सफल राग की संज्ञा दी गई है : *"सफल मारू इहु रागु ॥"* मारू राग में संकलित विस्तृत बाणी का अध्ययन दो भागों में कर सकते हैं : प्रथम खंड में शबद, अष्टपदी, वार और भक्तबाणी तथा द्वितीय खंड में सोलहे।

राग मारू में श्री गुरु नानक देव जी के १२ शबद हैं। इन शबदों को तीन इकाइयों में प्रस्तुत किया गया है। पहले शबद के आरंभ में सलोकु है—हे साजन! मैं तेरे चरणों की सदा धूल बन जाऊं, तुम्हारी शरण में आकर तुम्हें साक्षात देखता रहूं :

साजन तेरे चरन की होइ रहा सद धूरि ॥
नानक सरणि तुहारीआ पेखउ सदा हजूरि ॥
(पन्ना ९८९)

गोबिंद-मिलन के लिए प्राप्त अवसर को पाकर भी मनुष्य सांसारिक भोगों के कारण प्रभु को भूला हुआ है। यह वियोग प्रभु-कृपा से अमृत-वेला में नाम-सिमरन द्वारा पुनः मिलन में बदल सकता है। परमात्मा ही वह नौका देता है जिससे वह संसार के जल-भंवर को पार कर सकता है। नाम-अमृत से सड़े-गले लोहे की मैल भी सोने में बदल जाती है। यह नाम-अमृत

C-127, G.T.B. Nagar, Allahabad-211016

सच्चे गुरु से मिलता है। चौथे शबद के निष्कर्ष में मनुष्यों की रुचि का वर्णन है। पाखंडी संसार में रमे रहते हैं। निर्मल लोगों के भाग्य में उनके शुभ कर्मों के अनुकूल प्रभु-नाम-जप में अनुराग होता है। इसी भाव का समर्थन श्लोक में किया गया है :

पतित पुनीत असंख होहि हरि चरनी मनु लाग ॥
अठसठि तीरथ नामु प्रभ नानक जिसु मसतकि भाग ॥ *(पन्ना ९९०)*

शबद पांच में सखी को अहंकार छोड़ने और शबद छः में दास को चतुराई छोड़ने का उपदेश है। प्रभु-प्रेम की सच्चा धन है और इसका अनुराग वास्तविक दीवानापन है।

श्री गुरु नानक देव जी के शबद ९ से १२ में प्रभु-मिलन के लिए योग-साधना के उदात्त रूप का प्रस्तुतीकरण है। राग मारू में भक्त जैदेउ (जयदेव) के शबद में प्राणायाम के माध्यम से चित्त को स्थिर करके दशम द्वार पर अमृतपान का वर्णन है। चित्त की उस अवस्था के बाद सनातन सत्य प्रभु की अराधना से निर्वाण और सभी में व्याप्त प्रभु का साक्षात्कार प्राप्त हुआ। गुरु नानक साहिब के शबद में भी योग के प्रतीक शबदों का प्रयोग हुआ है किन्तु नाम साधना के अनुसार उनका सन्दर्भ बदल जाता है। सूर्य (पिंगला नाड़ी) का सम्बंध तमोगुण से है तथा चन्द्र (इड़ा) का अभिप्राय सतोगुण से है। चिर यौवन, माया को अजर माना गया है; मोह को अमर कहा गया है जिसे मारना है। मन मछली के समान चंचल है। ऐ मनुष्य! तमोगुणी स्वभाव को सुखा दो, सतोगुण का पोषण करो, इस प्रकार जीवित रह कर मृत्यु को पाने का यत्न करो। मछली के समान चंचल मन को स्थिर करो। तब न शरीर का क्षरण होगा न आत्मा का विनाश :

सूर सरु सोसि लै सोम सरु पोखि लै
जुगति करि मरतु सु सनबंधु कीजै ॥
मीन की चपल सिउ जुगति मनु राखीऐ
उडै नह हंसु नह कंधु छीजै ॥ *(पन्ना ९९१)*

जो योगी निर्मल नाम की युक्ति करता है उसमें रत्ती भर भी मैल नहीं रहती। गुरु नानक साहिब के इस कथन को श्री गुरु अमरदास जी ने भी व्यक्त किया है। प्रभु परितप्त हृदय को शीतल करता है और मल-युक्त लोहे को सोना बना देता है। उस प्रभु की स्तुति करो जिस के जितना बड़ा और कोई नहीं है :

मारू ते सीतलु करे मनूरहु कंचनु होइ ॥
सो साचा सालाहीऐ तिसु जेवडु अवरु न कोइ ॥
(पन्ना ९९४)

श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित छः शबद हरि-नाम-जप सम्बंधी घरु २ की राग पद्धति में हैं और दो शबद घरु पांच में संगीतबद्ध हैं। घरु पांच के शबदों में सोलहों में प्रयुक्त छंद का प्रयोग हुआ है :

नवे छिद्र स्रवहि अपवित्रा ॥
बोलि हरि नाम पवित्र सभि किता ॥
जे हरि सुप्रसंनु होवै मेरा सुआमी हरि सिमरत मलु लहि जावै जीउ ॥
माइआ मोहु बिखमु है भारी ॥
किउ तरीऐ दुतरु संसारी ॥
सतिगुरु बोहिथु देइ प्रभु साचा जपि हरि हरि पारि लंघावै जीउ ॥ *(पन्ना ९९८)*

राग मारू में अंकित श्री गुरु अरजन देव जी के ३२ शबदों में अध्यात्म के विविध विषयों का प्रतिपादन है। इनमें आत्म-चिन्तन सम्बंधी शबद दर्शन के उच्च स्तरीय रूप को प्रस्तुत करता है—"सुनो हे भाई! तुम कौन हो और

कहां से आए हो? इतना भी नहीं जानते कि आए कितनी मुद्दत हुई और यहां से चलने की खबर भी नहीं।"

यह शरीर पांच तत्वों से मिलकर बना है। इनमें पवन और पानी सहनशील हैं। धरती निःसंदेह क्षमाशील है। (जीव में प्राण की ऊष्मा है और आकाश का रिक्त स्थान) जीव में बुराई कहां है? फिर बढ़प्पन कहां रहता है और अहंकार कहां बसता है?

मनुष्य अपने को किस चीज से तादात्मय (जोड़ता) करता है जिस से मुंह से गाली सुन कर चोट पहुंचती है।

(उत्तर) जिस विधाता ने पांचों तत्त्वों को रच कर शरीर बनाया है उसने उसमें मोह, ममता भी भर दी है। हे भाई! यह जन्म-मरण उसी को है, वही आता जाता है। यह पूरी रचना मिथ्या का प्रसार है। इसका कोई स्थिर वर्ण या चिन्ह नहीं है। गुरु जी कहते हैं कि यह सब उसका खेल है। जब वह यह खेल समेटता है तो बस वही एक मायातीतन रह जाता है :

सुनहु रे तू कउनु कहा ते आइओ ॥
एती न जानउ केतीक मुदति चलते खबरि न पाइओ ॥१॥रहाउ॥
सहन सील पवन अरु पाणी बसुधा खिमा निभराते ॥
पंच तत मिलि भइओ संजोगा इन महि कवन दुराते ॥२॥
कवन थान धीरिओ है नामा कवन बसतु अहंकारा ॥
कवन चिहन सुनि ऊपरि छोहिओ मुख ते सुनि करि गारा ॥१॥
जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई ॥
जनम मरणु उस ही कउ है रे ओहा आवै जाई ॥३॥
बरनु चिहनु नाही किछु रचना मिथिआ सगल पसारा ॥
भणति नानकु जब खेलु उझारै तब एकै एकंकारा ॥४॥ *(पन्ना ९९९)*

राग मारू में श्री गुरु तेग बहादर जी के ३ दुपदे हैं। जिस प्राणी ने हरि-यश गायन किया है प्रभु उसके सहायक होते हैं। परमात्मा का नाम सदैव सुखदाई है। प्रभु पतितपावन होने के बिरद की लज्जा रखते हैं :

हरि को नामु सदा सुखदाई ॥
जा कउ सिमरि अजामलु उधरिओ गनिका हू गति पाई ॥१॥रहाउ॥
पांचाली कउ राज सभा महि राम नाम सुधि आई ॥
ता को दुखु हरिओ करुणा मै अपनी पैज बढाई ॥ *(पन्ना १००८)*

राग मारू में श्री गुरु नानक देव जी की ११ अष्टपदियां हैं। सभी में सतिगुरु की महिमा है तथा अहंकार या हउमै की भर्त्सना है। नाम दही है, अन्य कर्मकाण्ड जल है। नाम बिलोने से ही अमृत प्राप्त होता है। हमारा जीवन नाविक-हीन जहाज है, जहाज में पतवार भी नहीं है और हउमै-विष लदा हुआ है। हउमै दूर करना ही जीवनोन्मुक्त होना है। नाम के अलावा सब रस विष हैं। जो नाम में अनुरक्त है वही निर्मल है और सत्य में समा जाता हैं:

नानक नामि रते से निरमले साचै रहे समाई ॥५॥ *(पन्ना १०१२)*

यह संसार चौपड़ का खेल है। प्रभुता, सुंदरता, सम्पदा तथा अभिनव यौवन के प्रभाव से हम चौपड़ की गीटियां बन कर खेल के भागीदार होते हैं। नाम विहीन मनुष्य क्षारीय

मिट्टी में खेती, नदी तट का पेड़ अथवा सफेद पोशाक पर छिड़की कालिमा के समान हैं। यह संसार तृष्णा का महल है। जो भी इसमें प्रवेश करता है वह अभिमान की अग्नि से जल जाता है :

राजं रंगं रूपं मालं जोबनु ते जूआरी ॥
हुकमी बाधे पासै खेलहि चउपड़ि एका सारी ॥ . . .
कलर खेती तरवर कंठे बागा पहिरहि कजलु झरै ॥
एहु संसारु तिसै की कोठी जो पैसै सो गरबि जरै ॥६॥ (पन्ना १०१५-१६)

श्री गुरु अमरदास जी की अष्टपदी में सोलहे के छंद का प्रयोग है, हउमै त्याग तथा शबद-अनुराग का उपदेश है :

इकि भ्रमि भूले फिरहि अहंकारी ॥
इकना गुरमुखि हउमै मारी ॥
सचै सबदि रते बैरागी होरि भरमि भुले गावारी जीउ ॥ (पन्ना १०१६)

राग मारू में श्री गुरु अरजन देव जी की आठ अष्टपदियों की गायन-पद्धति के अनुसार तीन भाग किये गए हैं, घरु ५ की तीन तथा घरु ४ की ३ अष्टपदियां हैं। अन्तिम दो अष्टपदियों का शीर्षक 'अंजुली' दिया गया है।

तीसरी अष्टपदी में संत स्वभाव का वर्णन किया गया है। हे मन! सदैव राम में रमण कर और संतों की भांति कृपालु गोबिंद के गुणों का श्रवण किया कर। संतों के स्वभाव की तुलना पहले पेड़ से की गयी है। संत अनिष्ट करने वाले का भी उपकार करते हैं। संतों का स्वभाव शरीर के पांच तत्वों के गुणों से समरस रहता है। वे धरती की तरह समान व्यवहार वाले, आकाश के समान शीतल शरण देने वाले, सूर्य के समान सभी को आलोकित करने वाले, वायु की तरह सब को स्पर्श करने वाले तथा अग्नि के समान समदर्शी होते हैं। संतों की चरण-शरण में जाने वाला प्रत्येक व्यक्ति सहारा प्राप्त कर लेता है और परमात्मा के प्रेम में रंग जाता है। प्रभु संतों के माध्यम से दया करता है, इसलिए नित्य प्रभु का गुणगान करो :

चरण सरण सनाथ इहु मनु रंगि राते लाल ॥
गोपाल गुण नित गाउ नानक भए प्रभ किरपाल ॥८॥३॥ (पन्ना १०१८)

द्वितीय भाग की तीन अष्टपदियों (क्रमांक ४ से ६) की शैली और तुकांत एक-सी है। अष्टपदी ४ में प्रत्येक पंक्ति में प्रथम और अंतिम शबद एक ही होने से सर सता और संगीत माधुर्य अनुपम है। हृदय रूपी आंगन में सच्चा प्रकाश वही है जिससे मन के अंदर प्रभु का आलोक हो सके। परमात्मा के नाम की आराधना ही सच्ची आराधना है :

चादना चादनु आंगनि प्रभ जीउ अंतरि चादना ॥
आराधना आराधनु नीका हरि हरि नामु अराधना ॥ (पन्ना १०१८)

तृतीय भाग अंजुलियों में प्रभु से नाम-दान की प्रार्थना की गई है।

शबद और अष्टपदी की पृष्ठभूमि के बाद राग मारू में चिंतन का विस्तृत फलक सोलहों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। श्री गुरु नानक देव जी का चिंतन २२ सोलहों में अंकित किया गया है। चिन्तन के मुख्य विषय चार हैं : प्रभु की सत्य रूप में अवधारणा, सृष्टि-रचना, काया में प्रभु का निवास तथा प्रभु का एकंकार स्वरूप। इन चार विषयों के आधार को श्री गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु नानक पातशाह के सोलहों पर चार समूहों की क्रम-संख्या को भी चार वर्गों में दर्शाया गया है। (६+६+५+५)

प्रभु-स्वरूप का वर्णन प्रथम छ: सोलहों में हैं। प्रभु सत्य स्वरूप है। जपु जी साहिब के अंत में दिये श्लोक का रूपान्तरित रूप संक्षिप्त और

स्पष्ट है :

—साचा सचु सोई अवरु न कोई ॥
जिनि सिरजी तिन ही फुनि गोई ॥
जिउ भावै तिउ राखहु रहणा तुम सिउ किआ मुकराई हे ॥ (पन्ना १०२०)

—पउणु गुरू पाणी पित जाता ॥
उदर संजोगी धरती माता ॥
रैणि दिनसु दुइ दाई दाइआ जगु खेलै खेलाई हे ॥ (पन्ना १०२१)

प्रथम दो सोलहों में सत्य-स्वरूप वर्णन के बाद तीसरे सोलहे में द्वैत-भाव की दुरमति का वर्णन है। द्वैत-भाव के कारण जीव रूपी स्त्री कुबुद्धि से अंधी और बहरी है। चौथे सोलहे में चार युगों का वर्णन है, किन्तु परमात्मा काल से ऊपर अकाल पुरख है :

सतिगुरु वेपरवाहु सिरंदा ॥
ना जम काणि न छंदा बंदा ॥
जो तिसु सेवे सो अबिनासी ना तिसु कालु संताई हे ॥ (पन्ना १०२४)

गुरु के आदेशानुसार आचरण करने से मनुष्य सत्य-स्वरूप प्रभु में लीन हो जाता है। प्रभु ने हमारे अंदर तीनों लोकों को आलोकित करने वाली ज्योति रखी है जिससे और सभी वस्तुओं से उदासीनता हो जाती है। प्रभु स्वयं ही सतिगुरु रूप है, स्वयं ही सेवक है, सृष्टि की रचना भी उसी ने की है।

दूसरे समूह (सोहला ७ से १२) में सृष्टि-रचना सम्बंधी विवेचन किया गया है। जब वह अपरम्पर परमेश्वर शून्य में समाधिस्थ था, तब कई युग बीत गए वह निर्गुण ब्रह्म निर्लिप्त होकर उस अंधकार में विराजता था। उस समय कार्य-क्षेत्र का प्रसार नहीं था :

केते जुग वरते गुबारै ॥
ताड़ी लाई अपर अपारै ॥
धुंधूकारि निरालमु बैठा ना तदि धंधु पसारा हे ॥ (पन्ना १०२६)

सृष्टि-रचना के अन्तर्गत संत-जन, मनमुख और गुरमुख साकत की भर्त्सना तथा गुरदेव की शरण ग्रहण करने का वर्णन है।

शिष्य भूल भी करता है तो गुरु उसे समझा देता है, शिष्य गलत दिशा में जाता है तो गुरु उसका पथ-प्रदर्शन करता है। ऐसा गुरु दुख-भंजन है। उसकी सेवा में मग्न रहो।

जिसके अंदर परमात्मा के लिए प्रेम होता है वही उसके दर्शन करता है; जिसे गुरबाणी से प्यार होता है वही उसके उल्लासमयी स्पर्श की अनुभूति करता है। ऐसे गुरमुख जीव का मन रात-दिन निर्मल ज्योति से प्रकाशित होता है :

भूले सिख गुरू समझाए ॥
उझड़ि जादे मारगि पाए ॥
तिसु गुर सेवि सदा दिनु राती
दुख भंजन संगि सखाता हे ॥१३॥ . . .
अंतरि प्रेमु परापति दरसनु ॥
गुरबाणी सिउ प्रीति सु परसनु ॥
अहिनिसि निरमल जोति सबाई घटि दीपकु गुरमुखि जाता हे ॥१५॥ (पन्ना १०३२)

प्रभु ने सृष्टि-रचना में तरह-तरह के जीव-जंतु पैदा किए हैं। दो तरह के जीवों को दो तरह के रास्तों पर लगाया है। पूर्ण गुरु के बिना मुक्ति नहीं है। प्रभु का नाम जपने में ही लाभ है :

वेकी वेकी जंत उपाए ॥
दुइ पंदी दुइ राह चलाए ॥
गुर पूरे विणु मुकति न होई सचु नामु जपि लाहा हे ॥ (पन्ना १०३२)

सत्य के व्यापारी भले हैं। कच्चे सौदे से हानि होती है :

नीके साचे के वापारी ॥

सचु सउदा लै गुर वीचारी ॥
सचा वखरु जिसु धनु पलै सबदि सचै ओमाहा हे ॥९॥
काची सउदी तोटा आवै ॥
गुरमुखि वणजु करे प्रभ भावै ॥
पूंजी साबतु रासि सलामति चूका जम का फाहा हे ॥१०॥ *(पन्ना १०३२-३३)*

गुरु नानक पताशाह के चिंतन का तीसरा विषय परमात्मा का काया में निवास है जो सोलहा १३ से १७ का केन्द्रीय विचार है। नगर और गढ़ों के बीच मनुष्य शरीर भी एक नगर है। नगर के भीतरी प्रकोष्ठ (दशम द्वार) में परमात्मा निवास करता है। यह स्थान सदा निर्मल है और यहां प्रभु अपने आप को टिकाता है :

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि ॥
साचा वासा पुरि गगनंदरि ॥
असथिरु थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा ॥१॥ *(पन्ना १०३३)*

प्रभु के निवास का सम्पूर्ण चित्र सोलहा क्रमांक १६ में दिया गया है। परमात्मा ने पवन पानी और अग्नि के बंधन से काया का गढ़ बनाया, किन्तु अपना स्थान सचखंड में बना लिया है। काया के गढ़ में मन राजा नियुक्त किया गया है। मन मिथ्या लोभ के कारण प्रभु की शरण में नहीं आ पाता। शरीर-नगर में सत्य-संतोष प्रभु के कारिंदे हैं जो यत, सत और संयम के द्वारा मन को प्रभु की शरण में लाते हैं। तब गुरु-कृपा से प्रभु सहज ही मिलता है:

सतु संतोखु नगर महि कारी ॥
जतु सतु संजमु सरणि मुरारी ॥
नानक सहजि मिलै जगजीवनु गुर सबदी पति पाइदा ॥१६॥ *(पन्ना १०३७)*

वर्ग ३ के अंतिम सोलहा क्रमांक १७ में प्रभु की निर्गुण अवस्था (शून्य समाधि) का विस्तृत विवेचन है। शून्य से ही पांच तत्व प्रकाश में आए। जीव इन तत्वों से देह का संयोग पाता है और लोभ के कारण मिथ्या जीवन अपनाता है। सतिगुरु से विवेक पाकर निर्गुण ब्रह्म की निकटता प्राप्त होती है।

वर्ग ४ के अंतर्गत सोलहा १८ से २२ तक सत्य-स्वरूप प्रभु के एक एवं अनेक (व्यापक) रूपों का वर्णन है। आरंभ में प्रभु का व्यापक रूप दर्शाया गया है। *"अनिक बिसथार एक ते भए"* के भाव को श्री गुरु अरजन देव जी ने सूक्ति के रूप में रखा, उसी का स्रोत सोलहों में है :

जह देखा तह दीन दइआला ॥
आइ न जाई प्रभु किरपाला ॥
जीआ अंदरि जुगति समाई रहिओ निरालमु राइआ ॥ *(पन्ना १०३८)*

सोलहा क्रमांक १९ में देही नगरी का पुन: उल्लेख किया गया है। जपु जी साहिब के पांच खण्डों में ब्रह्मांड का चित्र है। देही की मानसिक अवस्थाओं में सबसे ऊंचे स्थान पर प्रभु का निवास है :

देही नगरी ऊतम थाना ॥
पंच लोक वसहि परधाना ॥
ऊपरि एकंकारु निरालमु सुंन समाधि लगाइआ ॥ *(पन्ना १०३९)*

चतुर्थ वर्ग के अंतिम तीन सोलहों में गुरमति विचार का तत्त्व दर्शन है। सोलहा २० गुरमति व्याख्या को समर्पित है :

सचु कहहु सचै घरि रहणा ॥
जीवत मरहु भवजलु जगु तरणा ॥
गुरु बोहिथु गुरु बेड़ी तुलहा मन हरि जपि पारि लंघाइआ ॥ *(पन्ना १०४०)*

सोलहे के आरंभ में सत्याचरण, अहंकार,

त्याग, गुरु-महिमा और हरि-नाम-सिमरन गुरमति के चार केन्द्रीय भावों का वर्णन है तथा अंत में गुरमति महिमा दी गई है। सोलहा २२ के अंतिम पांच चरणों में गुरु नानक पातशाह का संदेश सूत्रबद्ध है। पहले चार चरणों में पारंपरिक धार्मिक वाह्याचारों के रूप दिये गए हैं। बिना सतिगुरु के शास्त्रीय अध्ययन से तत्व-ज्ञान नहीं मिलता। बिना सतिगुरु के मन निर्मल किये बगैर भस्म से प्रभु-दर्शन नहीं होता। बिना सतिगुरु के ज्ञान के तीर्थ-यात्रा आदि द्वारा राम-नाम का आत्म-रस नहीं मिलता। प्राणायाम और हठ योग की क्रियाएं प्रभु में प्रीति उत्पन्न नहीं करतीं, गुरु-उपदेश से ही महा रस मिलता है।

(गुरसिख) गुरु के शबद से ब्रह्म को पहचानते हैं। (वे उन लोगों में है जो) प्रभु की कुदरत देख कर मन ही मन प्रसन्न होते हैं। इस प्रकार वे गुरु के द्वारा सभी में उस अदृश्य प्रभु के दर्शन करते हैं :

वाचहि पुसतक वेद पुरानां ॥
इक बहि सुनहि सुनावहि कानां ॥
अजगर कपटु कहहु किउ खुल्है बिनु सतिगुर ततु न पाइआ ॥
करहि बिभूति लगावहि भसमै ॥
अंतरि क्रोधु चंडालु सु हउमै ॥
पाखंड कीने जोगु न पाईऐ बिनु सतिगुर अलखु न पाइआ ॥
तीरथ वरत नेम करहि उदिआना ॥
जतु सतु संजमु कथहि गिआना ॥
राम नाम बिनु किउ सुखु पाईऐ
बिनु सतिगुर भरमु न जाइआ ॥
निउली करम भुइअंगम भाठी ॥
रेचक कुंभक पूरक मन हाठी ॥
पाखंड धरमु प्रीति नही हरि सउ
गुर सबद महा रसु पाइआ ॥
कुदरति देखि रहे मनु मानिआ ॥
गुर सबदी सभु ब्रहमु पछानिआ ॥
नानक आतम रामु सबाइआ गुर सतिगुर अलखु लखाइआ ॥ *(पन्ना १०४३)*

गुरु नानक साहिब के सोलहों की शैली के अनुसरण में श्री गुरु अमरदास जी के सोलहों की रचना है। श्री गुरु अमरदास जी के २४ सोलहे हैं। इनका वर्गीकरण भी चार भागों में है, जिनमें सोलहों की संख्या क्रमशः ९, ५, ८ तथा २ है।

प्रथम खंड का आरंभ गुरु नानक साहिब के सोलहे की अंतिम पंक्ति *"कुदरति करनैहार अपारा"* के अनुसार किया गया है: *"हुकमी सहजे स्रिसटि उपाई ॥"* उसके पश्चात प्रभु के स्वरूप-वर्णन के विचार क्रम से दिये गए हैं :

'एको एकु वरतै सभु कोई', 'जगजीवनु साचा एको दाता', 'दूजै भाइ बाधा जम फासी', 'सचु सालाही गहिर गंभीरै', 'एको सेवी सदा थिरु साचा ॥'

द्वितीय खण्ड में सोलहा १० से १४ हैं जिसका आरंभ प्रभु के सृजनहार रूप से हुआ है। क्रमशः सतिगुरु-सेवा और हरि-यश-महिमा का वर्णन किया गया है। प्रभु से साक्षात्कार पूर्ण गुरु सो ही संभव है :

निहचलु एकु सदा सचु सोई ॥
पूरे गुर ते सोझी होई ॥ *(पन्ना १०५७)*

तृतीय खण्ड में सोलहे १५ से २२ सम्मिलित हैं। इस खण्ड का आरंभ गुरु को समर्पित गुरमुख की महिमा से किया गया है। इस सोलहे में श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा राग रामकली में दखिणी ओंकार में दिये सन्दर्भ तथा सिध गोसटि में किये विस्तृत विवेचन को सोलहे की सोलह कलाओं में अनुपम ढंग से सजाया है। प्रथम पंक्ति दखिणी ओंकार

से यथावत ग्रहण की गई है: *"गुरमुखि नाद बेद बीचारु ॥"* 'सिद्ध गोसटि' में प्रसिद्ध पंक्ति : *"गुरमुखि नामु दानु इसनानु ॥ गुरमुखि लागै सहजि धिआनु ॥"* की भाव अभिव्यंजना मार्मिक है :

गुरमुखि मनु निरमलु सत सरि नावै ॥
मैलु न लागै सचि समावै ॥
सचो सचु कमावै सद ही सची भगति द्रिड़ाइदा ॥ . . .
गुरमुखि सचु संजमु करणी सारु ॥
गुरमुखि पाए मोख दुआरु ॥
भाइ भगति सदा रंगि राता आपु गवाइ समाइदा ॥८॥ (पन्ना १०५८-५९)

श्री गुरु अमरदास जी ने काइआ में प्रभु निवास से काया का उदात्तीकरण किया है: *"काइआ हरि मंदरु हरि आपि सवारे।"* हरि के हुक्म को पहचान लेने से शरीर स्वर्ण-सा सुंदर हो जाता है : *"काइआ कंचनु सबदु वीचारा ॥"*

चतुर्थ खण्ड के दो सोलहों २३, २४ में श्री गुरु अमरदास जी ने नाम (गुरु उपदेश) के द्वारा नाम (प्रभु) में समाने की प्रार्थना की है:

नानकु एक कहै बेनंती नामे नामि समाइआ ॥

हरि-नाम के जाप से यश प्राप्त होता है तथा अहं त्याग कर परम सुख मिलता है :

नानक नामु मिलै वडिआई आपु गवाइ सुखु पाइआ ॥

श्री गुरु अमरदास जी के सोलहों के बाद बानगी के रूप में श्री गुरु रामदास जी के २ सोलहे हैं। गुरमुख जीवों की प्रीत सदा होती है। वे सतिगुरु से सदैव अनन्त प्रभु-नाम की याचना करते हैं। परमात्मा दयालु होकर उन्हें गुरु की शरण प्रदान करता है :

गुरमुखि प्रीति सदा है साची ॥
सतिगुर ते मागउ नामु अजाची ॥
होहु दइआलु क्रिपा करि हरि जीउ रखि लेवहु गुर सरणाई हे ॥४॥ (पन्ना १०६९)

सोलहों की अंतिम कड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी के १४ सोलहे हैं। इनमें वर्ण्य विषय का निर्वाह गुरु नानक साहिब और श्री गुरु अमरदास जी के समान नहीं है। एक सोलहे में गुरु-महिमा है जिसमें मात्र ९ चरण हैं। सामान्य चिन्तन से नवीन रूप में एक सोलहें में प्रभु के विविध नामों की गणना है, जिसकी प्रथम पंक्ति में निर्गुण नाम हैं : *"अचुत पारब्रहम परमेसुर अंतरजामी ॥"* वैष्णव नामों के साथ भावबोध के लिए टिप्पणी भी की गई है : *"स्री रामचंद जिसु रूपु न रेखिआ ॥"* मानव बुद्धि के अनुसार घटना या गुण पर आधारित नाम कृत्रिम हैं किन्तु सनातन सत्ता के आधार पर सतिनाम विषयों से परे तथा आदि है :

किरतम नाम कथे तेरे जिहबा ॥
सति नामु तेरा परा पूरबला ॥ (पन्ना १०८३)

इस्लाम धर्म के आध्यात्मिक रूप को दर्शाने वाला सोलहा *'अलह अगम खुदाई बंदे'* गुरु ग्रंथ साहिब की एक विशेष इकाई है। इस्लाम धर्म में हज की विविध क्रियाओं द्वारा स्पष्ट किया जाता है। श्री गुरु अरजन देव जी ने एक ही सोलहे में पूरे इस्लामिक क्रिया-कलाप के ठोस नैतिक पक्ष को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। प्रस्तुतीकरण में धार्मिक मान्य प्रतीकों के साथ-साथ मानवीय आधारभूत मूल्यों का समावेश है जो इस सोलहे को आम जीवन का प्रकाश स्तंभ बना देता है। पांच नमाजें इस प्रकार हैं। प्रथम प्रभु का गुणगान करना, दूसरी संतोष, तीसरी विनम्रता, चौथी दान करना और पांचवीं पांचों इन्द्रियों को संयत करना :

अवलि सिफति दूजी साबूरी ॥
तीजै हलेमी चउथै खैरी ॥

पंजवै पंजे इकतु मुकामै एहि पंजि वखत तेरे अपरपरा ॥९॥ (पन्ना १०८४)

शरीर और आत्मा के सम्बंध पर विचार श्री गुरु अरजन देव जी ने सोलहा क्रमांक २ में व्यक्त किये हैं। इसमें शरीर को नारी तथा आत्मा को पुरुष के रूप में चित्रित किया गया है :

संगी जोगी नारि लपटाणी ॥
उरझि रही रंग रस माणी ॥
किरत संजोगी भए इकत्रा करते भोग बिलासा हे ॥ (पन्ना १०७२)

धन (नारी) का स्वभाव चंचल है वह इस संयोग को स्थायी समझती है। वह पति को सदा साथ रहने का आग्रह करती है। पति कहता है कि मैं प्रभु के हुक्म का पालन करने वाला हूं। जब तक प्रभु रखेगा, रहूंगा, जब बुलायेगा तो उठ कर चल दूंगा। पति (आत्मा) को प्रभु का बुलावा आया, पति पत्नी को बिना बताए चला गया। पत्नी का मोह मिथ्या प्रमाणित हुआ। वह मिट्‌टी के रूप में रह गई :

आई आगिआ पिरहु बुलाइआ ॥
ना धन पुछी न मता पकाइआ ॥
ऊठि सिधाइओ छूटरि माटी देखु नानक मिथन मोहासा हे ॥१०॥ (पन्ना १०७३)

इस कहानी के आधार पर श्री गुरु अरजन देव जी लोभी मन को सतिगुरु-सेवा के लिए प्रेरित करते हैं। प्रभु के अतिरिक्त कोई वस्तु स्थायी नहीं है। इसलिए नश्वर वस्तु में मोह करना उचित नहीं है। हे गंवार जीव! बाहरी रंग-रूप देख कर भ्रम में न पड़ो। संसार का यह प्रसार मिथ्या है। नारायण ही अविनाशी है :

सूरति देखि न भूलु गवारा ॥
मिथन मोहारा झूठु पसारा ॥
जग महि कोई रहणु न पाए निहचलु एकु नाराइणा ॥१॥ (पन्ना १०७७)

सम्पूर्ण धरती, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा, पवन, पानी और सृष्टि प्रभु का सिमरन करते हैं :

सिमरै धरती अरु आकासा ॥
सिमरहि चंद सूरज गुणतासा ॥
पउण पाणी बैसंतर सिमरहि सिमरै सगल उपारजना ॥ (पन्ना १०७८-७९)

राग रामकली की भांति राग मारू में भी दो वारें हैं जो श्री गुरु अमरदास जी तथा श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित हैं। श्री गुरु अमरदास जी की वार में हरि-रस-महिमा का वर्णन है :

गुर परसादी उबरे जिन हरि रसु चखा ॥ (पउड़ी ३)
हरि रसु जिनी चाखिआ अन रस ठाकि रहाइआ ॥ (पउड़ी ५)
गुर सबदी कमलु बिगासिआ इव हरि रसु पीजै ॥ (पउड़ी ७)
जिन चाखिआ से निरभउ भए से हरि रसि ध्रापै ॥ (पउड़ी १७)

हरि-रस का आधार हरि-रस और सत्य-आचरण है। इस वार में श्री गुरु नानक देव जी के १८ तथा श्री गुरु अंगद देव जी का एक श्लोक पउड़ियों के साथ संलग्न है। मन को संयत रखना और उसे सत्य पथ पर चलाना ही फकीरी (दरवेशी) है। प्रभु की इच्छानुसार आचरण करने से परमात्मा प्रसन्न होता है और दरवेश उसकी दरगाह में कबूल होता है। परमात्मा के पास जीव का प्रभु के प्रति प्रेम का लेखा मौजूद रहता है। सांसारिक धन्धों में अपने को न भुलाओ, क्योंकि प्रभु जीव के कर्मों का आलेख देखता है :

हुकमि रजाई साखती दरगह सचु कबूलु ॥
साहिबु लेखा मंगसी दुनीआ देखि न भूलु ॥
दिल दरवानी जो करे दरवेसी दिलु रासि ॥
इसक मुहबति नानका लेखा करते पासि ॥

(पन्ना १०९०)

जो व्यक्ति निष्काम भाव से भंवरे की भांति सब जगह परमात्मा के सौरभ को खोजता है उसका हीरा-मन प्रभु-नाम रूपी हीरे से बिन्ध जाता है और सहज ही सहज ही प्रभु उसके हृदय में बस जाता है :

अलगउ जोइ मधूकड़उ सारंगपाणि सबाइ ॥
हीरै हीरा बेधिआ नानक कंठि सुभाइ ॥

(पन्ना १०९०)

श्री गुरु अंगद देव जी द्वारा रचित श्लोक अरदास से पूर्व पढ़ा जाता है :

आपे जाणै करे आपि आपे आणै रासि ॥
तिसै अगै नानका खलिइ कीचै अरदासि ॥

(पन्ना १०९३)

परमात्मा अपने आप बनाता, संवारता एवं सुरक्षित रखता है। अतः उसी के आगे खड़े होकर विनती करो।

राग मारू में श्री गुरु अरजन देव जी की वार में २३ पउड़ी छंद हैं। पउड़ी छंद के साथ दो श्लोक सराइ की भाषा के हैं तथा एक श्लोक सामान्यतः गुरबाणी की भाषा में दिया गया है। सराइ की भाषा पंजाब के दक्षिणी भाग में बोली जाती है, अतः श्लोकों का शीर्षक डखणे दिया गया है। श्लोकों में दिये गए विषय की व्याख्या पउड़ी छंद में की गई है।

उस शाहों के शाह प्रभु को सब जगह ढूंढता हूं। वह हृदय में ही है और मुंह खोल कर आवाजें दे रहा है। (किन्तु हम सुनते नहीं)

हे मां! उस परमात्मा ने स्वयं ही मुझे नाम माणिक्य प्रदान किया है। उस सच्चे नाम का स्मरण करके मेरा हृदय शीतल हो गया है। मैं चाहता हूं कि स्वयं सेज बन जाऊं और नेत्रों को प्यार का बिछौना बना दूं। इस ओर वह एक बार भी देखे तो मुझे अमित सुख मिल जाता:

लोड़ीदो हभ जाइ सो मीरा मीरंन सिरि ॥
हठ मंझाहू सो धणी चउदो मुखि अलाइ ॥१॥
माणिकू मोहि माउ डिंना धणी अपाहि ॥
हिआउ महिजा ठंढड़ा मुखहु सचु अलाइ ॥२॥
मू थीआऊ सेज नैणा पिरी विछावणा ॥
जे डेखै हिक वार ता सुख कीमा हू बाहरे ॥३॥

(पन्ना १०९८)

उक्त तीनों श्लोकों के भाव को पउड़ी में स्पष्ट किया गया है :

मनु लोचै हरि मिलण कउ किउ दरसनु पाईआ ॥
मै लख विड़ते साहिबा जे बिंद बुोलाईआ ॥
मै चारे कुंडा भालीआ तुधु जेवडु न साईआ ॥
मै दसिहु मारगु संतहो किउ प्रभू मिलाईआ ॥
मनु अरपिहु हउमै तजहु इतु पंथि जुलाईआ ॥
नित सेविहु साहिबु आपणा सतसंगि मिलाईआ ॥
सभे आसा पूरीआ गुर महलि बुलाईआ ॥
तुधु जेवडु होरु न सुझई मेरे मित्र गुोसाईआ ॥

(पन्ना १०९८)

मेरा मन परमात्मा से मिलने के लिए तड़पता है। मैं उसका दर्शन कैसे पा सकता हूं? यदि मेरा स्वामी रत्ती भर भी मेरी ओर उन्मुख हो जावे तो समझो मैंने लाखों कमा लिए! हे स्वामी! मैंने चारों दिशायों में ढूंढ लिया है कोई तुम्हारे समान महान नहीं है। हे संत-जन! मुझे प्रभु-मिलन का मार्ग बताओ। (उन्होंने बताया है) मन को हरि को समर्पित कर दो, अहं भाव को त्याग दो। इस मार्ग पर चलो। नित्य अपने प्रभु का स्मरण करो और सतसंगति में विचरण

करो।

गुरु के द्वारा परमात्मा के महल में पहुंच कर सब मनोकामनाएं पूर्ण होंगी। हे मेरे मित्र! मेरे स्वामी! मुझे तुम-सा महान और कोई नहीं दिखाई देता।

राग मारू में भक्त-बाणी अधिक विस्तार में नहीं है। १४ शबदों में ११ भक्त कबीर जी के, दो भक्त रविदास जी के तथा एक-एक शबद भक्त जयदेव जी तथा भक्त नामदेव जी का है। भक्त जयदेव जी के शबद का उल्लेख हठयोग साधना में किया गया है।

भक्ति की सहज अवस्था में भक्त कबीर जी प्रभु से समरस हो चुके हैं। यह भक्त की प्रभु से अद्वैत अवस्था है जिसमें भक्त को मुक्ति का आनंद प्राप्त हो जाता है :

हे प्रभु! यदि तुम मुझे अपने से अलग बताते हो तो बताओ फिर मुक्ति किसे कहेंगे? एक होकर भी तुम सब में स्थित हो, अत: किसी को क्यों कर भ्रम में रखा जा सकता है?

हे प्रभु! तुम मुझे तारने के लिए कहां ले जा रहे हो? वह मुक्ति कैसी होगी और किसे दोगे? इस कार्य में तुमने कृपावश मुक्ति तो पहले ही दे दी है और मैंने प्राप्त भी कर ली है। जब तक जीव आध्यात्मिक रहस्य को नहीं समझता तब तक ही तैरने-डूबने की कहानी चलती है। भक्त कबीर जी कहते हैं कि अब तो शरीर में निर्मलता आ गई है और जीव ने मन ही मन उसे (प्रभु को) नमन किया है :

जउ तुम्ह मो कउ दूरि करत हउ तउ तुम मुकति बतावहु ॥
एक अनेक होइ रहिओ सगल महि अब कैसे भरमावहु ॥१॥
राम मो कउ तारि कहां लै जई है ॥
सोधउ मुकति कहा देउ कैसी करि प्रसादि मोहि पाई है ॥१॥रहाउ॥
तारन तरनु तबै लगु कहीऐ जब लगु ततु न जानिआ ॥
अब तउ बिमल भए घट ही महि कहि कबीर मनु मानिआ ॥२॥ (पन्ना ११०४)

इस प्रकार राग मारू में शबदों की रागमयी बाणी में शुभ कर्मों द्वारा मन को निर्मल करने का संदेश है। सोलहों में साधक की नाम साधना हरि-रस साधना से ही पूर्ण होती है। यह साधना अनुभवगम्य है :

खंडे धार गली अति भीड़ी ॥
लेखा लीजै तिल जिउ पीड़ी ॥
मात पिता कलम सुत बेली नाही बिनु हरि रस मुकति न कीना हे ॥ (पन्ना १०२८)

सतिगुरु के आत्म ज्ञान से सभी में अलख प्रभु का दर्शन होता है : *"नानक आतम रामु सबाइआ गुर सतिगुर अलखु लखाइआ ॥"* आत्म-ज्ञान का सूत्र प्रभु-कृपा से सफल होता है :

ऐसी लाल तुझ बिनु कउनु करै ॥
गरीब निवाजु गुसईआ मेरा माथै छत्रु धरै ॥
जा की छोति जगत कउ लागै ता पर तुहीं ढरै ॥
नीचह ऊच करै मेरा गोबिंदु काहू ते न डरै ॥१॥
नामदेव कबीरु तिलोचनु सधना सैनु तरै ॥
कहि रविदासु सुनहु रे संतहु हरि जीउ ते सभै सरै ॥२॥ (पन्ना ११०६)





गुरबाणी चिंतनधारा : ३३

त्व प्रसादि सवय्ये : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

दशम पातशाह द्वारा उच्चारण की गई अमृत वेला में नित्तनेम की तीसरी बाणी त्व प्रसादि सवय्ये है। यह १० सवय्यों का सुंदर संग्रह है जो कि 'दशम ग्रंथ' की "अकाल उसतति" बाणी में अंकित है। प्रस्तुत बाणी में गुरु पातशाह विविध कर्मकांडों एवं व्यर्थ के आडम्बरों को ही जीवन का मन्तव्य समझने वाले लोगों को इन भ्रमों से निकाल कर एक अकाल पुरख से जोड़ने की सहज साधना हेतु दिशा-निर्देश देते हैं कि ईश्वर के सिमरन तथा प्रभु-प्रेम के बिना इन प्रपंचों में फंसे जीवों की गुणवत्ता कुछ भी नहीं है। इस बाणी का सार—*"एक रती बिन एक रती के"* अर्थात् उस वाहिगुरु के प्रेम के बिना जीव की कीमत एक कौडी भी नहीं अर्थात् तिल मात्र भी नहीं।

जो उस वाहिगुरु से प्यार करते हैं, उसका सुमिरन करते हैं वे ही आवागमन से मुक्त होकर उसी में विलीन हो जाते हैं, जो कि मनुष्य-जीवन का प्रमुख उद्देश्य है। समस्त धर्मों में ईश्वर-प्राप्ति के जो-जो साधन बताए गए हैं उनमें प्रभु का सिमरन सर्वश्रेष्ठ है तथा प्रभु-प्रेम पहली शर्त है। तभी तो गुरु कलगीधर पातशाह ने डंके की चोट पर फरमान किया है:

साचु कहों सुन लेहु सभै जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभ पाइओ ॥ (त्व प्रसादि सवय्ये)

वस्तुत: प्रेम ही ईश्वर है तथा ईश्वर ही प्रेम है।

उपरोक्त बाणी का उच्चारण "जापु साहिब" की पावन बाणी की तरह "पाउंटा साहिब" के पवित्र स्थल पर किया गया ही माना जाता है। विद्वानों के चिन्तनानुसार गुरदेव ने 'नाहन' के राजा को इसी बाणी के द्वारा उपदेश दिया था।

मूल भाव

उस परमेश्वर पर जीव की पूर्ण श्रद्धा का न बनना, विश्वास का लड़खड़ाना, प्रेम में किसी तरह की कोई कमी, ईश्वर की रहमतों से वंचित जीवन की कीमत एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। अत: वह धर्म, वह सम्प्रदाय, मत-मतान्तर किस लेखे के जो जीव की ईश्वर पर सौ फीसदी श्रद्धा न बना सकें, उन्हें प्रेम का मार्ग न सुझा सकें? वस्तुत: वही धर्म, वही मत अर्थपूर्ण हैं जो केवल अकाल पुरख से जोड़ें, प्रेम का मार्ग दर्शा कर वाहिगुरु की रहमतों का पात्र बना दें।

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

त्व प्रसादि ॥ सवय्ये ॥ पा: १० ॥

हे वाहिगुरु! तेरी कृपा से यह बाणी उच्चारण करता हूं।

स्रावग सुद्ध समूह सिधान के देखि फिरिओ घर जोग जती के ॥
सूर सुरारदन सुद्ध सुधादिक संत समूह अनेक मती के ॥
सारे ही देस को देखि रहिओ मत कोऊ न देखीअत प्रानपती के ॥
स्री भगवान की भाइ क्रिपा हू ते एक रती बिनु एक रती के ॥१॥

गुरु कलगीधर पातशाह जी का पावन फरमान है कि "मैं" जैन, बौद्ध धर्म, सदाचारी

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर (राजस्थान)-३०२००४ मो: ०१४१-२६५०३७०*

तथा संयमी भिक्षुओं, करामाती शक्तियों वाले सिद्धों के समूह, योगियों तथा ब्रह्मचारियों के डेरे (निवास स्थान) देख चुका हूं।

(मैंने) देवताओं का नाश करने वाले दैंत्य (राक्षस), महान योद्धा (शूरवीर), अमृत-पान करने वाले देवते तथा अनेक मत-मतान्तरों के संत-जनों को भी देख-परख लिया है।

(मैंने) समस्त देश-देशांतरों के मत-मतांतरों का व्यवहार भी परख लिया है, परंतु कोई भी प्राणों के मालिक प्रभु के मत का अनुसरण करने वाला नहीं है अर्थात् ईश्वर-दर्शाए मार्ग पर चलने वाला दिखाई नहीं देता। वस्तुतः कोई ऐसा मत दिखाई नहीं देता जो पूर्ण समग्रता से उस मालिक-प्रभु का ही हो जाने की युक्ति सिखाए।

गुरदेव का पावन फरमान है कि अगर उस सर्वशक्तिमान समर्थ प्रभु में श्रद्धा नहीं बनी, उस मालिक के प्यार से वंचित रहे, तो इन मत-मतांतरों का मूल्य रत्ती भर भी नहीं है।

अर्थात् ये मत-मतांतर अपने आप को कितना भी सक्षम समझें और यह सिद्ध करने की कोशिश भी करें फिर भी यदि ईश्वर में श्रद्धा नहीं बनी, यदि ईश्वर-प्रेम से वंचित रहे और यदि भगवान की कृपा-दृष्टि नहीं हुई तो इन सब मत-मतांतरों का महत्व रत्ती मात्र ही समझो।

कहने का अभिप्राय, प्रत्येक मत का उद्देश्य ईश्वर-प्रेम का मार्ग दिखाना तथा उस पर पूर्ण श्रद्धा बनाना है। यदि यह नहीं तो उसका कुछ भी मूल्य नहीं। गुरबाणी आशयानुसार प्रेम ऐसा होना चाहिए :

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥
(पन्ना ३१९)

माते मतंग जरे जर संग अनूप उतंग सुरंग सवारे ॥
कोट तुरंग कुरंग से कूदत पउन के गउन को जात निवारे ॥
भारी भुजान के भूप भली बिधि निआवत सीस न जात बिचारे ॥
एते भए तु कहा भए भूपति अंत को नांगे ही पांइ पधारे ॥२॥

गुरु कलगीधर पातशाह प्रस्तुत सवय्ये में समस्त सांसारिक प्राप्तियों को तुच्छ तथा नश्वर मानते हैं, क्योंकि अंत में तो दुनिया के बादशाह भी खाली हाथ ही जाते हैं।

गुरदेव का पावन फरमान है कि जिनके तबेलों में स्वर्णीय आभूषणों से सुसज्जित बेमिसाल सुंदर कद-काठ वाले, सुंदर रंगों वाले बेमिसाल मतवाले हाथी ही क्यों न हों। यही नहीं अगर करोड़ों ही बढ़िया किस्म के घोड़े हों जो हिरणों की तरह तीव्र गति से दौड़ते हों, इतनी तीव्र गति कि जो पवन को भी मात कर देने वाले हों। शक्तिशाली भुजाओं वाले राजा जिनकी गिनती करना भी मुमकिन न हो, वो सब भी आकर अगर अदब-सत्कार सहित सलाम करते हों अर्थात् जी-हजूरी करने वाले हों, ऐसे महाप्रतापी राजा भी हुए तो क्या विलक्षण हो गया? क्योंकि अन्त में तो वे भी इस दुनिया से नंगे पांव ही प्रस्थान करेंगे।

वस्तुतः समस्त सुखों के साधन यहीं पड़े रह जायेंगे। एक शायर की निम्न पंक्तियों कितनी सार्थक हैं इस सन्दर्भ में :

नेहमतें, दौलतें, बरकतें, इशरतें,
जिन्दगी के लिए लाख सामान थे।
आंच न आने पाए कोई जां पर,
एक जां के हज़ारों निगाहबान थे।
कोई माथे का लिखा मिटा न सका,
कोई तदबीर किस्मत बदल न सकी।
हाथ खाली चला, साथ कुछ न गया,
सो गया रिश्ते-नाते सभी तोड़ कर।

वस्तुतः गुरु जी जीव को सांसारिक पदार्थों

की नश्वरता का मोह छोड़ कर उस प्रियतम से सच्चा प्रेम करने की हिदायत दे रहे हैं।

जीत फिरै सभ देस दिसान को बाजत ढोल म्रिदंग नगारे ॥
गुंजत गूड़ गजान के सुंदर हिंसत हैं हयराज हजारे ॥
भूत भविक्ख भवान के भूपत कउनु गनै नहीं जात बिचारे ॥
स्री पति स्री भगवान भजे बिनु अंत कउ अंत के धाम सिधारे ॥३॥

उपरोक्त सवय्ये में गुरदेव का पावन फ़रमान है कि जो महाप्रतापी राजे जीवन-पर्यन्त समस्त देश-देशांतरों पर विजय पा रहे हैं और जिनकी जीत की खुशी में ढोल, मृदंग तथा नगाड़े जिनके द्वार पर बजते ही रहते हैं, जिनके तबेलों में सुंदर हाथियों के झुंड सदा चिंघाड़ते रहते हैं तथा उत्तम नस्ल के घोड़े सदा हिनहिनाते रहते हैं, भूत काल, वर्तमान काल तथा भविष्य काल के अर्थात् सारी दुनिया के ऐसे तेज प्रताप वाले राजाओं की गिनती कौन कर सकता है? अंदाजा नहीं लगाया जा सकता कि कितने तेजस्वी-प्रतापी राजा हो चुके हैं, वर्तमान में कितने विचरण कर रहे हैं तथा आने वाले समय में कितने प्रतापी राजा होंगे?

परम पिता परमेश्वर सर्वत्र पूजनीय ईश्वर की भजन-बंदगी के बिना अत्यंत बलशाली बादशाह भी अंत में यमलोक ही प्रस्थान करेंगे अर्थात् काल का ग्रास ही बनेंगे। इसी भाव को दृढ़ करवाती श्री गुरु नानक देव जी की पावन बाणी का प्रमाण है :

जे जुग चारे आरजा होर दसूणी होइ ॥
नवा खंडा विचि जाणीऐ नालि चलै सभु कोइ ॥
चंगा नाउ रखाइ कै जसु कीरति जगि लेइ ॥
जे तिसु नदरि न आवई त वात न पुछै के ॥
(पन्ना २)

अर्थात् दुनियावी प्राप्तियां चाहे जितनी भी हों परमात्मा की रहमत के बिना कुछ भी मायने नहीं रखतीं, उनका राई मात्र भी मोल नहीं।

तीरथ नान दइआ दम दान सु संजम नेम अनेक बिसेखै ॥
बेद पुरान कतेब कुरान जमीन जमान सबान के पेखै ॥
पउन अहार जती जत धार सबै सु बिचार हजार क देखै ॥
स्री भगवान भजे बिनु भूपति एक रती बिनु एक न लेखै ॥४॥

प्रस्तुत सवय्ये में गुरु पातशाह उन समस्त क्रिया-कलापों को निराधार बताते हैं जिन्हें करने से मनुष्य और अहंकारी हो जाता है। यही नहीं, इन्हीं कर्मकांडों को ही जीवन का सार समझ बैठता है। गुरदेव का पावन फरमान है कि अगर कोई मनुष्य तीर्थों पर स्नान करे, जीवों पर दया करे, इन्द्रियों का दमन करे अर्थात् मन को विकारों से रोकने की भरपूर कोशिश करे, दान-पुण्य करे, मन को एकाग्र करने के अनेकों साधन करता रहे, फिर भी क्या हो जाएगा?

अगर कोई चारों वेद (ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद, अथर्वेद), पुराण (हिन्दू धर्म अनुसार अट्ठारह पुराण), इस्लाम मत की धर्म-ग्रंथों (अंजील, तौरेत, कुरान, जंबूर) आदि के अध्ययन-कर्त्ता, यही नहीं सारी धरती के समस्त धर्म-ग्रंथों का भी अध्ययन कर लें तब भी क्या हो जाएगा?

यदि कोई निराहारी (बिना कुछ खाए-पीए केवल हवा के सहारे जीवित रहे) ब्रह्मचारियों वाला जीवन बिताए और ऐसे ही अनेकों साधनों के बारे में विचार करता रहे अर्थात् सारा जीवन ब्रह्मचर्य जैसे कठिन व्रत की पालना आदि के सन्दर्भ में सोचता रहे तो भी सारी

सृष्टि के मालिक प्रभु के सिमरन के बिना ईश्वर-प्रेम से विहीन कोई भी साधन किसी काम का नहीं।

अर्थात् कर्मकांडी विद्वान, पाखंडी, दम्भी लोग वाहिगुरु के सिमरन तथा प्रेम के बिना ईश्वर के दर पर किसी भी तरह प्रवान नहीं। अगर केवल बाहरी साधनों द्वारा तीर्थ-स्नान तथा जंगल आदि में विचरण करने से प्रभु मिलता तो उन जीव-जंतुओं को तो कब का मिल चुका होता जिनका जीवन ही पानी है! इस सन्दर्भ में एक लोक-प्रचलित उक्ति है, यथा :

जे रब मिलदा नाहतिआं धोतिआं,
तां मिलदा डड्डूआं मच्छीआं।
जे रब मिलदा जंगल फिरदिआं,
तां मिलदा गाईआं मज्झीआं।
'बुल्लिआ' रब्ब ओहनां नूं मिलदा,
नीतां जिनां दीआं सच्चीआं।

अर्थात् जिनका हृदय प्रभु-प्रेम से लबालब भरा है, जिनकी नियति साफ है, उन्हें प्रभु हर कण में, हर घट में निवास करता दिखाई देता हैं।

ईश्वर-प्राप्ति के समस्त साधनों में प्रभु-सिमरन को सिरमौर माना गया है। पंचम पातशाह की बाणी सुखमनी साहिब इसका पुख्ता प्रमाण है :

प्रभ का सिमरनु सभ ते ऊचा ॥
प्रभ कै सिमरनि उधरे मूचा ॥
प्रभ कै सिमरनि त्रिसना बुझै ॥
प्रभ कै सिमरनि सभु किछु सुझै ॥
प्रभ कै सिमरनि नाही जम त्रासा ॥
प्रभ कै सिमरनि पूरन आसा ॥
प्रभ कै सिमरनि मन की मलु जाइ ॥
अंम्रित नामु रिद माहि समाइ ॥ (पन्ना २६३)

वस्तुत: सिमरन से मीठा कोई रस नहीं है। प्रभु के सिमरन के आनंद के समक्ष सब कुछ नीरस है। इसी अवस्था पर पहुंच कर बाबा फरीद जी पुकार उठते हैं :

फरीदा सकर खंडु निवात गुड़ु माखिओ मांझा दुधु ॥
सभे वसतू मिठीआं रब न पुजनि तुधु ॥
(पन्ना १३७९)

सुद्ध सिपाह दुरंत दुबाह सु साज सनाह दुरजान दलैंगे ॥
भारी गुमान भरे मन मैं कर परबत पंख हले न हलैंगे ॥
तोरि अरीन मनोरि मवासन माते मतंगनि मान मलैंगे ॥
श्री पति श्री भगवान क्रिपा बिनु तिआगि जहान निदान चलैंगे ॥५॥

प्रस्तुत: सवय्ये में गुरु कलगीधर पातशाह विलक्षण बलशाली योद्धाओं तथा असम्भव दिखने वाले कार्यों को भी सम्भव बना देने वालों के विविध उदाहरण देकर जीव को अंत में यही समझाते हैं कि ईश्वर की बंदगी एवं प्रेम के बिना सब कुछ व्यर्थ है।

प्रशिक्षित युद्ध-कला में निपुण शूरवीर योद्धा, जिन्हें किसी भी तरह से जीता न जा सके, जिनका शौर्य बर्दाश्त से बाहर हो अर्थात् जिनके द्वारा चलाए गए अस्त्रों-शस्त्रों का मुकाबला ही न हो सके, जो कवच पहन कर शत्रुओं को मलियामेट (तहस-नहस) कर देते हैं, जिनके हृदय में यह अहंकार हो कि चाहे पर्वत पंख लगा कर उड़ जाए अर्थात् सदैव स्थिर चीजें भी अपना स्थान छोड़ दें, परंतु हम अपनी रणभूमि में अपना स्थान छोड़ कर नहीं हिलेंगे, जो शूरवीर अपने वैरियों की गर्दन मरोड़ कर, मस्त हाथियों का भी गरूर तोड़ने की ताकत रखते हैं।

उपरोक्त वर्णित शक्तिशाली योद्धा भी माया पति अर्थात् भगवान की कृपा-दृष्टि के बिना, इस दुनिया से खाली हाथ ही प्रस्थान करेंगे।

वस्तुत: जीव अपनी सारी ताकत, बुद्धि दुनियावी प्राप्तियों में ही लगा देता है और अपना असली कर्त्तव्य (ईश्वर-भक्ति) भूल जाता है। फिर अंत समय उसे केवल पछताना ही पड़ता है। आओ! इस तथ्य को एक लोक प्रचलित कथा से समझने का यत्न करें।

एक बार एक तपस्वी ने सौ वर्ष तक तपस्या की। उसकी तपस्या प्रवान हो गई। आकाशवाणी हुई, हे तपस्वी! मांग ले जो मांगना है, लेकिन एक बात याद रखना, तुझे तपस्या का फल चाहिए या ईश्वर की रहमत? तपस्वी सोचने लगा, जब मैंने इतनी कठोर तपस्या साधी है तो क्यों न मैं अपनी तपस्या का फल लूं। मैं क्यों ईश्वर का एहसान लूं। बस, यह सब सोच ही रहा था कि वह शिला जिस पर बैठ कर उसने सौ वर्ष तक तपस्या की थी, बोल उठी, हे तपस्वी! ठहरो! अगर तुम लेखे-जोखे में पड़ ही गए हो तो पहले मेरा हिसाब चुकता कर दो। मैंने सौ वर्ष तुम्हें अपने सिर पर धारण किया और अब तुम मुझे सौ वर्ष तक अपने सिर पर धारण करो ताकि अब मैं तपस्या कर सकूं! तपस्वी को बोध हो गया कि ईश्वर की रहमत के समक्ष तप-तपस्या आदि कुछ भी नहीं।

अत: पल-पल अनंत भूलें करने वाला इंसान इन लेखों-जोखों से कैसे भवसागर से पार उतर सकता है? भाई गुरदास जी की बाणी सहज अवस्था में जीने का पावन संदेश देती है, यथा:

हउ तिसु घोलि घुमाइआ गुरमति रिदै गरीबी आवै। *(भाई गुरदास जी, वार १२:४)*

पंचम पातशाह की बाणी भी हमें दिशा-निर्देश देती है कि समस्त सियानपें छोड़ कर ईश्वर की बंदगी ही सर्वोत्तम है, यथा :

अवर सिआनप सगली छाडु ॥
तिसु जन की तू सेवा लागु ॥
आवनु जानु न होवी तेरा ॥
नानक तिसु जन के पूजहु सद पैरा ॥
(पन्ना २८६)



कविता

अकाल पुरख की शरण में आना होगा

कुचली-कुचली-सी घास की नर्म पत्तियां हैं
रौंदे-रौंदे से कई मासूम चेहरे हैं,
हरे पत्तों से विहीन पौधों की डालियां हैं,
सूनी-सूनी सी नन्हीं-नन्हीं अखियां हैं,
झुर्रियां और झुर्रियां वृक्षों के बदन पर,
सहारों को तलाशतीं बूढ़ी जिंदगानियां।
खाली-खाली-सी फूलों की क्यारियां,
मुस्कानों से अनजान नौजवानों की जवानियां।
यह कैसा मौसम?
यह कैसा जीवन?
यह कैसा दौर है?
मायूसी, उदासी, पतझड़, छाई चहुं ओर है।
कहां छुप गए हंसते-खिलखिलाते चेहरे?
कहां चली गई खिले फूलों सी ताजगी?
कौन छीनकर ले गया,
मन के पेड़ों की हरियाली?
कौन चुराकर ले गया, हमारी आंखों के सपने?
कहां खो गए इन होंठों के नगमे?
अ. . .र. . .र. . .रे, यह कौन मुरझा गया?
लगता है मनुष्यता का चेहरा मुरझा गया।
प्रकृति और मनुष्यता को बचाना होगा।
अकाल पुरख की शरण में आना होगा।



-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर', बी-एक्स, ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जालंधर-१४४००४

भक्त-कथा : ११

लइआ कसीरा हथु कढि . . .

*-डॉ. अमृत कौर**

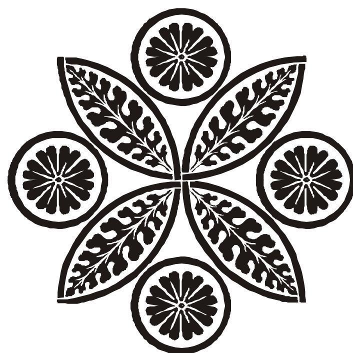
भक्त रविदास जी चमार कहलवाने वाले निम्न वर्ग में पैदा हुए थे। उन्होंने उच्च वर्ग के विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा किया और आयु-पर्यन्त निम्न वर्ग के अधिकारों के लिए लड़ते रहे। कड़े परिश्रम के द्वारा उन्हें स्वाभिमान और आत्म-सम्मान के साथ जीना सिखाया। जो व्यक्ति नेक कमाई करता है वह गृहस्थ में रहते हुए तथा जीवन के कर्त्तव्यों का निर्वाह करते हुए परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। उसे जंगलों में जाकर तपस्या करने की जरूरत नहीं। कड़े परिश्रम द्वारा जीविका अर्जित करना और उसे बांट कर खाना भक्त रविदास जी के जीवन के प्रमुख अंग थे। वे जूते बनाने का कार्य इतनी ईमानदारी और लग्न से करते थे कि उनकी झोपड़ी के सम्मुख आप जी के हाथों से बने जूतों के द्वारा पैरों को शृंगारने के लिए लोगों की भीड़ लगी रहती थी।

कहते हैं कि एक बार एक ब्राह्मण ने गंगा स्नान पर जाते समय भक्त रविदास जी से जूते बनवाए। परिश्रम के फलस्वरूप एक दमड़ी भक्त रविदास जी को प्रदान की। भक्त रविदास जी ने वह दमड़ी उस ब्राह्मण को देते हुए कहा, 'यह गंगा की भेंट चढ़ा देना।' ब्राह्मण जब हरिद्वार पहुंचा और भक्त रविदास जी द्वारा प्रदान की दमड़ी गंगा को अर्पित की तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। उसे अनुभव हुआ कि गंगा ने हाथ बढ़ा कर वह भेंटा स्वीकार की है। वह देखता ही रह गया। वह भक्त रविदास जी का शिष्य बन गया। भाई गुरदास जी ने अपनी वारों में इस घटना का वर्णन इस प्रकार किया है :

कढि कसीरा सउपिआ रविदासै गंगा दी भेटा।
लगा पुरबु अभीच दा डिठा चलितु अचरजु अमेटा।
लइआ कसीरा हथु कढि सूतु इकु जिउ ताणा पैटा।
भगत जनां हरि मां पिउ बेटा ॥ (वार १०:१७)

भक्त रविदास जी की यह साखी दर्शाती है कि परिश्रम की नेक कमाई में से श्रद्धापूर्वक प्रभु-चरणों में अर्पित एक दमड़ी भेंटा भी प्रभु के दर-घर में स्वीकार होती है। नेक कमाई द्वारा ही मनुष्य जविन का वास्तविक मर्म समझ सकता है :

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ (पन्ना १२४५)



*१५४, ट्रिब्यून कालोनी, बलटाना जीरकपुर-१४०६०३

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-२२

विद्वान-कवि-लिखारी रौशन सिंह

*-डॉ. राजेंद्र सिंह 'साहिल'**

दशमेश पिता के विद्या-दरबार में जिन विद्वानों एवं कवियों को आश्रय प्राप्त था उनमें एक नाम विद्वान-लिखारी कवि रौशन सिंह का भी है। सिख-ऐतिहासिक स्रोतों से संकेत मिलता है कि रौशन सिंह आरंभ से ही श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के दरबार में रहते थे। इसके अतिरिक्त यह भी जिक्र मिलता है कि कवि रौशन सिंह बहुत विद्वान एवं सुंदर लिखाई करने वाले व्यक्ति थे। इसी कारण दशमेश पिता ने आपको लिखारी की सेवा प्रदान की थी। आप गुरु जी के ३६ लिखारियों में से एक थे और जिन चार लिखारियों को सर्वश्रेष्ठ माना जाता था उनमें गिने जाते थे।

भाई वीर सिंह कृत 'कलगीधर चमत्कार' में कवि रौशन सिंह संबंधी एक बड़े ही रोचक प्रसंग का वर्णन मिलता है। प्रसंग इस प्रकार है—एक बार साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने कुछ सवैयों की रचना की और कवि रौशन सिंह से उन्हें सुंदर लेख में उतारा करने को कहा। कवि रौशन सिंह उन सवैयों को लेकर दफ्तर में आ गया और सुंदर लेख में उतारा करने लगा। सवैये बहुत सुंदर थे। उतारा करते-करते कवि रौशन सिंह के कवि-हृदय में आया कि काश मैं भी ऐसे उच्च कोटि के सवैये रच पाता। इतने में दफ़्तर में से बाकी के लिखारी किसी काम से बाहर चले गये। कवि रौशन सिंह दफ्तर में अकेला रह गया। अचानक कवि रौशन सिंह को एक चाल सूझी। उसने गुरु जी के कुछ सवैये अपनी जांघ पर लिख लिये और सोचा कि घर जाकर इन्हें उतारा करके अपने नाम से लिख कर अपनी रचना में डाल लूंगा। कवि रौशन सिंह का ख्याल था कि गुरु जी सवैयों की बाबत भूल ही जायेंगे, उन्हें याद नहीं रहेगा।

उधर दशमेश पिता उस वक्त बाहर समागम में बैठे थे। थोड़ी देर बाद गुरु जी ने खजानची को बुलाया और आदेश दिया कि जाओ! कवि रौशन सिंह को साबुन-दही दो और साथ लेकर केशों समेत स्नान कराओ और नये वस्त्र पहना कर घर जाने की छुट्टी दे दो। जब कवि रौशन सिंह को गुरु-आज्ञा के अनुसार स्नान करवाया गया तो जांघ पर लिखे हुए सवैये धुल गये। कवि रौशन सिंह सिर धुनता-पछताता नहा-धो कर घर चला गया।

कुछ दिन गुजर गये। एक दिन गुरु जी ने कवि रौशन सिंह को अकेला पाकर कहा, "सुना भाई रौशन सिंह! रौशनी कि रोशनाई? चानण कि स्याही?" कवि रौशन सिंह शर्मिन्दा होकर गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा और बोला—"हे सच्चे पातशाह! धन्य है तेरी अंतरयामिता और उससे भी धन्य है तेरी पर्दे ढांक कर की गई गरीब निवाजता! मैंने तो रोशनी से स्याही बनने की करतूत की थी पर हे दाता! तूने स्याही धो दी, शरीर और मन उज्जवल कर दिया। और साथ ही मेरा पर्दा भी बना रहा। मैं दुनिया के आगे शर्मिन्दा होने से भी बच गया। मेरा जन्म संवारने वाले दाता! अब ऐसी मेहर करो कि फिर कभी पशेमानी न हो।"

दशमेश पिता ने कवि रौशन सिंह को क्षमा कर दिया। अपनी मूर्खता के कारण सवैयों की चोरी करने वाला कवि रौशन सिंह वास्तव में स्वयं भी एक श्रेष्ठ कवि था। परंतु बड़े अफसोस की बात है कि इनकी कोई रचना अभी तक उपलब्ध नहीं हो पाई है। भले ही अपनी रचना के लिए नहीं, परंतु रचना-चोरी के दोष को दूर करने के लिए 'हास-विलास के पातशाह' और 'परदे ढक' गुरु जी के द्वारा रचाये गये कौतुक के कारण विद्वान-कवि-लिखारी रौशन सिंह सदैव याद किये जायेंगे।



*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)-१४११०१



प्रधानमंत्री तालिबानों की घिनौनी कारवाई से प्रभावित सिख परिवारों की सुख-सार लें : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर : १ मई। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने पाकिस्तान में तालिबानों द्वारा सिख परिवारों से जजिया न मिलने के कारण उनके घर (मकान) ध्वस्त कर दिये जाने के कारण उत्पन्न हुए हालात का जायजा लेने के लिए उच्च स्तरीय पांच सदस्यों पर आधारित प्रतिनिधमंडल पाकिस्तान लेकर जाने के लिए, भारत और पाकिस्तान की सरकारों से मांग करते हुए भारत के प्रधानमंत्री को अपील की है कि वे राजनैतिक तथा सामाजिक गतिविधियों को छोड़कर प्रमुखयता के आधार पर पाकिस्तान में सिखों पर आये इस संकट के समय उनकी सुख-सार लें।

उन्होंने कहा कि तालिबानों की इस घिनौनी कारवाई के कारण समस्त सिख जगत चिंतित और रोष में है। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान में बस रहे इन सिखों के जीवन व संपत्ति की रक्षा करना चाहे पाकिस्तान सरकार का काम है, परंतु शिरोमणि गु: प्र: कमेटी सिख जगत की सर्वोच्च धार्मिक संस्था है और सिखों पर आए किसी भी मुश्किल समय उनकी सुख-सार लेना शिरोमणि कमेटी का प्रथम कर्त्तव्य है। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान में बस रहे अल्प-संख्यक सिखों पर जजिया लगाने संबंधी छपे समाचारों का तत्काल नोटिस लेते हुए भारत के प्रधानमंत्री तथा दिल्ली स्थित दूतावास द्वारा पाकिस्तान सरकार से सिखों के जीवन-संपत्ति की सुरक्षा की मांग की थी। परंतु खेद से कहना पड़ रहा है कि दोनों सरकारों की तरफ से सिखों की सुरक्षा के लिए कोई मजबूत कदम नहीं उठाये गए, जिसके परिणामस्वरूप आज उन सिख परिवारों को घर से बेघर होना पड़ा है। उन्होंने कहा कि इन दुखद हालात से प्रभावित परिवारों की सुख-सार लेने के लिए सिख जगत की प्रतिनिधि धार्मिक संस्था के मुखी की हैसियत से एक प्रतिनिधिमंडल लेकर उनका पाकिस्तान जाना अत्यंत आवश्यक है, इसलिए उनको पांच सदस्यों पर आधारित प्रतिनिधिमंडल लेकर जाने की अनुमति दी जाए। उन्होंने कहा कि इस संबंध में उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री और दिल्ली स्थित पाकिस्तान हाई कमीशनर को पत्र लिख कर भी मांग की है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने दुनिया भर के पंथक और धार्मिक संगठनों को अपील की है कि वे इन प्रभावित सिख परिवारों की हर प्रकार से सहायता के लिए आगे आयें। जत्थेदार अवतार सिंघ ने भारत के प्रधानमंत्री डॉ मनमोहन सिंघ से मांग की कि वे भी सरकारी तौर पर प्रतिनिधि मंडल भेजकर हालात का जायजा लें।

जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा टच-स्क्रीन प्रणाली का शुभारंभ

अमृतसर : २९ अप्रैल। शिरोमिण गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने अपने प्रबंध अधीन ऐतिहासिक गुरुधामों के सुयोग्य प्रबंध के साथ-साथ शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण पद-चिन्ह छोड़े हैं और

आधुनिक टेक्नॉलोजी के युग में वक्त के साथी बनते हुए सचखंड श्री हरिमंदर साहिब के दर्शनों के लिए आने वाली संगत को प्रबंधों, सिख इतिहास और मर्यादा के संबंध में टच-स्क्रीन डिस्पले सिस्टम प्रारंभ किया। शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने स्थानीय श्री गुरु अरजन देव निवास में टच-स्क्रीन प्रणाली की प्रारंभता समय संगतों को संबोधित करते हुए कहा कि शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का काम-काज बहुत ही सरल एवं पारदर्शी है। वक्त का साथी बनने के लिए इसके समस्त काम-काज को कम्पयूटराइज किया गया है और बहुत शीघ्र इसको इंटरनेंट के साथ भी जोड़ दिया जाएगा। संगत को प्रबंध सम्बंधी आवश्यक जानकारी एक ही जगह से प्रदान करने की इच्छा से यह सिस्टम आरंभ किया गया है जिससे संगत भरपूर लाभ ले सकेगी। फिलहाल यह जानाकरी पंजाबी और अंग्रेजी में मिल सकेगी। ऐसे टच-स्क्रीन सिस्टम श्री दरबार साहिब के सूचना केंद्र, केंद्रीय सिख आजायबघर और विभिन्न सरायों में भी लगाये जाएंगे। उन्होंने और बताया कि शिरोमणि गु: प्र: कमेटी द्वारा स्थापित मोबाइल वेबसाईट भी स्थापित की गई है जिससे संगत अपने इंटरनेट की सुविधा प्राप्त फोन पर कीर्तन श्रवण कर सकती है, हुक्मनामा पढ़ सकती हैं और रागी जत्थों की ड्यूटी के बारे में जानकारी भी प्राप्त कर सकती है। इस अवसर पर शिरोमणि गु: प्र: कमेटी के सचिव स. दलमेघ सिंघ और स. जोगिंदर सिंघ के अतिरिक्त शिरोमणि कमेटी के कई अन्य वरिष्ठ अधिकारी तथा बड़ी संख्या में संगत उपस्थित थी।

धार्मिक परीक्षा नवंबर २००८ का परिणाम घोषित

नवंबर २००८ में शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंध कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा ली गई धार्मिक परीक्षा का परिणाम घोषित कर दिया गया। नवंबर २००८ में चारों दर्जों में क्रमश: ११८३४+८७३०+१७१०+३५० = २२६२४ विद्यार्थियों ने भाग लिया। सचिव स. दलमेघ सिंघ ने परिणाम घोषित करते हुए बताया कि पहले दर्जे में एस. के. डी. खालसा सीनीयर सेकंडरी स्कूल, तुगलवाला (गुरदासपुर) की छात्रा सिमरजोत कौर ने ३०० में से २३८ अंक प्राप्त करके प्रथम स्थान प्राप्त किया। इसी स्कूल के छात्र लवप्रीत सिंघ ने ३०० में से २३० अंक प्राप्त करके द्वितीय स्थान प्राप्त किया। संत बाबा सुंदर सिंघ जी कनेडीयन अकाल अकेडमी, टल्लेवाल (जिला बरनाला) की छात्रा गुलशनदीप कौर ने ३०० में से २२९ अंक प्राप्त करके तृतीय स्थान किया।

दूसरे दर्जे में से संत बाबा लाभ सिंघ खालसा सी. से. स्कूल, गुरु की बेर मत्तेवाल, जिला श्री अमृतसर की छात्रा संदीप कौर तथा अजीत विद्यालय, सुलतानविंड रोड, श्री अमृतसर की छात्रा सिमरनजीत कौर, दोनों ने ३०० में से एक समान अंक २३५ प्राप्त करके प्रथम स्थान प्राप्त किया। श्री गुरु नानक देव सी. से. स्कूल, कादीआं, जिला गुरदासपुर की छात्रा पवनदीप कौर तथा प्रीत माडल सी. से. स्कूल, बडरुक्खां, जिला संगरूर की छात्रा नवजोत कौर दोनों ने ३०० में से एक समान अंक २३४ प्राप्त करके द्वितीय स्थान प्राप्त किया। संत बाबा लाभ सिंघ खालसा सी. से. स्कूल, गुरु की बेर मत्तेवाल, जिला श्री अमृतसर की छात्रा रमनप्रीत कौर ने

३०० में से २३३ अंक प्राप्त करके तृतीय स्थान प्राप्त किया।

तीसरे दर्जे में से संत बाबा लाभ सिंघ खालसा सी. से. स्कूल, गुरु की बेर मत्तेवाल, जिला श्री अमृतसर की छात्रा मनदीप कौर ने ३०० में से २३० अंक प्राप्त करके प्रथम स्थान प्राप्त किया। सिख नेशनल कालेज, कादीआं, जिला गुरदासपुर की छात्रा गुरप्रीत कौर ने ३०० में से २२६ अंक प्राप्त करके द्वितीय स्थान प्राप्त किया। एस. आर. सरकारी कालेज फार वूमेन, श्री अमृतसर की छात्रा कंवलप्रीत कौर ने ३०० में से २२४ अंक प्राप्त करके तृतीय स्थान प्राप्त किया।

चौथे दर्जे के विद्यार्थियों में से श्री गुरु अंगद देव खालसा कालेज, खडूर साहिब, जिला तरनतारन की छात्रा करमबीर कौर ने ३०० में २२२ अंक प्राप्त करके प्रथम स्थान प्राप्त किया। शांति देवी आर्य महिला कालेज, दीनानगर, जिला गुरदासपुर की छात्रा बलजीत कौर ने ३०० में से २१९ अंक प्राप्त करके द्वितीय स्थान प्राप्त किया तथा इसी कालेज की छात्रा गुरप्रीत सैणी तथा जगमीत कौर, दोनों ने ३०० में से एक समान अंक २१७ प्राप्त कर तृतीय स्थान प्राप्त किया।

उपरोक्त चारों दर्जों के छात्र/छात्राओं ने प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान प्राप्त कर निर्धारित वजीफे के अलावा क्रमशः ५००, ३०० एवं २०० रुपए का अतिरिक्त इनाम भी प्राप्त किया।

विद्यार्थियों एवं स्कूलों-कालेजों के मुख्याध्यापकों व प्रबंधकों के ज्ञात हेतु बताया जाता है कि धार्मिक परीक्षा में कुल चार दर्जे हैं। प्रथम कक्षा ८ तक, द्वितीय कक्षा ९ से १२ तक, तृतीय स्नातक स्तर वाले विद्यार्थियों के लिए तथा चतुर्थ दर्जा परा-स्नातक के विद्यार्थियों के लिए है। चारों दर्जों में भाग लेने वाले विद्यार्थियों में से प्रथम आने वाले ७५० विद्यार्थियों को १४,३०,००० (चौदह लाख तीस हजार रुपए) वजीफे के रूप में दिए जाते हैं। प्रथम दर्जे में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों में से शीर्ष के २५० विद्यार्थियों को १२००/- रुपए प्रति विद्यार्थी तथा दूसरे दर्जे में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों में से शीर्ष के २५० विद्यार्थियों को १८००/- रुपए प्रति विद्यार्थी वजीफा दिया जाता है। तृतीय दर्जे में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों में से शीर्ष के २०० विद्यार्थियों को २४००/- रुपए प्रति विद्यार्थी तथा चौथे दर्जे में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों में से शीर्ष के ५० विद्यार्थियों को ४०००/- रुपए प्रति विद्यार्थी वजीफा प्रदान किया जाता है।

धार्मिक परीक्षा में तीन प्रकार के १००-१०० अंकों के पेपर लिए जाते हैं जो क्रमशः गुरबाणी, सिख इतिहास तथा सिख रहित मर्यादा पर आधारित होते हैं। नवंबर २००९ में होने वाली धार्मिक परीक्षा में भाग लेने के लिए विद्यार्थी या स्कूल-कालेजों के मुख्याध्यापक सचिव, धर्म प्रचार कमेटी (शिरोमणि गु: प्र: कमेटी), श्री अमृतसर के पते पर पत्र भेजकर परीक्षा सम्बंधी जानकारी या दाखिला फार्म मंगवा सकते हैं तथा इन नंबरों पर भी सम्पर्क कर सकते हैं : ०१८३-२५५३९५२, ५६, ५७, ५८, ५९ (एक्स. ३०५)



प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया। संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०६-२००९